इंदिरा गांधी
राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
जेंडर एवं विकास अध्ययन विद्यापीठ

,eth,l&002
tsMj fodkl y{;
,oa fØ;kdyki

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

[k.M

# 4

# fodkl % igyw ,oa emn~ns

bdkbZ 16
lkekftd U;k; ,oa tsMj U;k; 5

bdkbZ 17
lkekftd U;k; ij oS'ohdj.k dk udkjkRed izHkko 27

bdkbZ 18
tsMj] mikUrhdj.k rFkk oatu 43

bdkbZ 19
l'kDrhdj.k rFkk fol'kfDrdj.k ds midj.k ds :Ik esa dkuwu 75

bdkbZ 20
tsMj vkèkkfjr fgalk dk :Ik rFkk lhek 99

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## dk;Øe :ikdu lfefr

प्रो. पूनम अग्रवाल, दिल्ली
प्रो. जया इन्द्रेसन, दिल्ली
डा. रीना रामचन्द्रन, गुडगांवा
प्रो. रतना सुदर्शन, दिल्ली
डा. किरण प्रसाद तिकपति
प्रो. छाया दत्तार, मुम्बई
प्रो पूनम धवन, जम्मू
प्रो ताप्तीवासु, कोलकाता
प्रो. सविता सिंह, नई दिल्ली
प्रो. मालाश्री लाल, दिल्ली
प्रो. हर्ष पारिश्व, मुम्बई
प्रो, सुधा राव, दिल्ली
प्रो. पारवती राजन, देवलाली
प्रो. जयंती घोष, दिल्ली
डा. शीला वीर, दिल्ली
डा. सुंदरी रामाकृष्णन, चेन्नई
प्रो. अर्चना शर्मा, गुवाहाटी
प्रो. अन्नू जें. थामस, नई दिल्ली
प्रो. एस.ए. वर्धीज, बैंगलोर
प्रो. विभूति पटेल, मुम्बई
प्रो. मैवेई कृष्णाराज, मुम्बई
डा. नूतन जैन, जयपुर
प्रो. रजनी पालरीवाला, दिल्ली
प्रो. शीरीन मूसवी, अलीगढ
डा. चन्द्रा आईनगार, मुम्बई
प्रो. वीना मिस्त्री, वडोदरा
डा. वानी श्री जे., नई दिल्ली
डा. जी.उमा, नई दिल्ली

## Cykd fodkl Vhe

| ,dd y[kd | ,dd :ikrj |
|---|---|
| इकाई–1 साथिया बामा | जी. उमा |
| इकाई–2 पूर्णिमा | वाणीश्री जे. |
| इकाई–3 रजनी मेनन | जी. उमा |
| इकाई–4 डोली सन्नी | जी. उमा |
| इकाई–5 दीपा शिखा साही | वाणीश्री जे. |

## dkl lg;kxh

प्रो. अन्नू जे. थामस
निदेशक और कार्यक्रम सहयोगी
जेंडर और विकास अध्ययन स्कूल
आई.जी.एन.ओ.यू.
नई दिल्ली

प्रो. सविता सिंह
कार्यक्रम सहयोगी,
जेंडर और विकास अध्ययन स्कूल
आई.जी.एन.ओ.यू.
नई दिल्ली

## dkl lEiknd

कोर्स चेयर और सम्पादक
प्रो. विभूति पटेल, निदेशक
एसएनडीटी विमेनस यूनिवर्सिटी,

इन हाउस सम्पादन
अन्नू जे. थामस
एस.ओ.जी.डी.एस.
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

## dkl lg;kxh

प्रो. अन्नू जे. थामस, और
डा. जी. उमा
एस.ओ.जी.डी.एस.
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

## Cykd lg;kxh

डा. जी. उमा
एस.ओ.जी.डी.एस.
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

## eqnz.k mRiknu

मि. के. एन. मोहनन
वि. अधिकारी (प्रकाशन)
एम.पी.डी.डी
आई.जी.एन.ओ.यू.
नई दिल्ली

सितंबर, 2014

© *इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2014*

ISBN-81-

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कार्य का कोई भी अंश इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफ (मुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

*इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के बारे में और अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदानगढ़ी,, नई दिल्ली–110 068 से प्राप्त की जा सकती है।*

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक (जेंडर एवं विकास अध्ययन विद्यापीठ) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित ।

लेजर कम्पोजिंग : राजश्री कम्प्यूटर्स, V-166A, भगवती विहार, (नजदीक सेक्टर–2, द्वारका), उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059

# [kM 4 iLrkouk

खंड की पाँच इकाइयाँ हैं। इकाई 6 में महिला अधिकारों के मानक एवं मानदंड बनाने के लिए उत्तरदायी वैश्विक प्रवृत्तियों एवं प्रभावों की चर्चा सम्मिलित है। इकाई वैश्विक प्रवृत्तियों अ आधारित है और सेवा वितरण में संस्थागत मॉडलों और इनकी रूपरेखा पर संक्षेप में प्रकाश डालती है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 16 सामाजिक न्याय एवं जेंडर न्याय

## इकाई की रूपरेखा

- 16.1 प्रस्तावना
- 16.2 उद्देश्य
- 16.3 सामाजिक न्याय की सैद्धांतिक रूपरेखा
  - 16.3.1 उदारवादी दृष्टिकोण
  - 16.3.2 समाजवादी दृष्टिकोण
  - 16.3.3 सबआल्टर्न/या उपाश्रित वर्गीय दृष्टिकोण
  - 16.3.4 नारीवादी दृष्टिकोण
- 16.4 जेंडर न्याय की सैद्धांतिक रूपरेखा
  - 16.4.1 हकदारी एवं चुनाव या चयन के रूप में जेंडर न्याय
  - 16.4.2 भेदभाव की गैर मौजूदगी के रूप में जेंडर न्याय
  - 16.4.3 सकारात्मक अधिकारों के रूप में जेंडर न्याय
- 16.5 सामाजिक न्याय और जेंडर न्याय
- 16.6 भारतीय स्थिति : सामाजिक न्याय एवं जेंडर न्याय
- 16.7 भारतीय परिवार में जेंडर संबंधी भेदभाव
  - 16.7.1 शिक्षा
  - 16.7.2 स्वास्थ्य
  - 16.7.3 रोज़गार
  - 16.7.4 हिंसा : सामाजिक विश्लेषण
- 16.8 जेंडर, मानवाधिकार और शासन की भूमिका
- 16.9 मानव विकास और जेंडर न्याय
- 16.10 सारांश
- 16.11 शब्दावली
- 16.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
- 16.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें
- 16.14 बोध प्रश्न अभ्यास एवं मनन हेतु

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 16.1 प्रस्तावना

सामाजिक न्याय की धारणा सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में उभरता हुआ विषय प्रसंग है, हालांकि आदि काल से इस धारणा या विचार ने सम्पूर्ण विश्व में सामाजिक क्रांति में उत्प्रेरणात्मक शक्ति के रूप में कार्य किया है। क्योंकि न्याय सुनिश्चित करना राज्य का सर्वोच्च लक्ष्य है इसलिए इसे ज्यादा व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखना होगा। वास्तव में, इस मत का आधार स्वतंत्रता तथा समानता के विचारों से जन्म लेता है जिसे मनुष्य सबसे अधिक मूल्यवान समझता है।

व्यापक अर्थ में, सामाजिक न्याय में सामाजिक जीवन के भौतिक तथा नैतिक दोनों लाभों के भाग आते है। यह प्रगतिशील अवधारणा है और विकास के मॉडल को इंगित करती है। उदाहरण के लिए, भारतीय संविधान विशेष रूप से आमुख और राज्य के नीतिक निर्देशक सिद्धांते से सम्बन्धित भाग में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय की आशा को बनाए रखता है। आम बोलचाल की भाषा 'सामाजिक न्याय' के शब्द को समाज में न्याय के तीनों पहलुओं – सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक को समझने में समान्यतया प्रयोग किया जाता है। इसका अभिप्राय यह भी है कि सामाजिक जीवन को इस ढंग से फिर से व्यवस्थित किया जाए कि सामाजिक प्रयत्न के भौतिक तथा नैतिक लाभ विशेषाधिकार प्राप्त छोटे से वर्ग के द्वारा हथिया दबोच न लिये जाएं, बल्कि सभी लोगों को प्राप्त हों जिससे कि समाज, के विसंबंधित/विलग वर्ग की उन्नति सुनिश्चित हो पाए और यह सामूहिक भाईचारे के लिए भी हो।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विकास को बिल्कुल भिन्न परिप्रेक्ष्य से देखना होगा जिसमें संवृद्धि और वितरण बिल्कुल उसी प्रक्रिया में समेकित हो जाए हैं, परन्तु साथ ही जेंडर, जाति, भाषा, धर्म अथवा नृजातीयता पर आधारित पूर्वाग्रहों एवं भेदभाव की सामाजिक रुकावटों को नियमित रूप से समाप्त करना होगा। भारत में 'सामाजिक न्याय के साथ विकास' का अर्थ हमारे लिए यही होना चाहिए। इसलिए, वंचित एवं अभावग्रस्त वर्गों के लिए विकास का नूतन मार्ग निश्चित करने के लिए विकास तथा गरिमा दोनों ही समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। तमाम नागरिकों को गरिमा प्रदान करने में अकेले न तो आर्थिक समानता और न ही राजनीतिक गणतंत्र सक्षम है। वास्तव में, दोनों को सामाजिक समानता के साथ चलना होगा। सामाजिक न्याय के साथ विकास का अंतिम लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि भारत के समस्त नागरिक आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक गरिमा के साथ जीवन व्यतीत कर सकें।

## 16-2 mnn';

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे :

- सामाजिक न्याय के सैद्धांतिक आधारों का वर्णन करने में;
- सामाजिक एवं जेंडर न्याय के दृष्टिकोणों की चर्चा करने में;
- सामाजिक एवं जेंडर न्याय से संबंधित भारतीय स्थिति का वर्णन करने में; और
- जेंडर, मानवाधिकारों, शासन और मानव विकास पर हुई बहस की रूपरेखा एवं संक्षिप्त विवरण देने में।

## 16-3 lkekftd U;k; dh l)kfrd :ijs[kk

ऐसा माना गया है कि न्याय मुख्यतः कार्य के सही मार्ग खोजने की समस्या है। प्राचीन समय से, राजनीतिक चिंतक न्याय की अवधारणा निर्मित करने की कोशिश कर रहे हैं। आधुनिक विश्व एवं आधुनिक चेतना के उद्भव होने एवं उसके विकास के साथ, विशेष रूप से लोकतंत्र एवं समाजवाद के सिद्धांतों के प्रभावी असर के कारण, यही अवधारणा पूरी तरह से बदल गई है। समकालिक विश्व में सामाजिक न्याय, समाज में वस्तुओं, सेवाओं, अवसरों, लाभों, शक्ति एवं प्रतिष्ठाओं और साथ ही विशेष रूप से अभाव की स्थिति में, दायित्वों के आवंटन का तर्कसंगत मानदंड निर्धारित करने से संबंधित है।

यह सुस्पष्ट है कि प्लेटो से लेकर रॉल्स तक राजनीतिक दार्षनिक एवं विद्वान वितरणात्मक न्याय अथवा सामाजिक न्याय के बारे में बृहद बहस में लगे हुए हैं। इस

समृद्ध कार्य ने सामाजिक न्याय के भिन्न–भिन्न परिप्रेक्ष्यों को जन्म दिया है। इनमें ज्यादा महत्वपूर्ण निम्नलिखित हैं : (क) उदारवादी दृष्टिकोण; (ख) समाजवादी दृष्टिकोण; (ग) सब आल्ट्रन या उपाश्रित वर्गीय दृष्टिकोण; और (घ) नारीवादी दृष्टिकोण।

## 16-3-1 mnkjoknh nf"Vdks.k ¼mikxe½

उदारवादी मॉडल की जड़े व्यक्तिवाद में निहित है और ये सामाजिक स्थिति एवं सम्पदा में स्थाई तथा संरचनात्मक श्रेणियों के विपरीत असमानताओं के लचीले पैटर्न और ये सामाजिक गतिशीलता के प्रति प्रतिबद्धता पर आधारित है। डी.एन. मैक कॉर्मिक ने व्यक्तियों के समान कुषलक्षेम को सामाजिक–न्याय के आधार के रूप में देखा है। पी. ए.पिंकर ने इस बात पर जोर दिया है कि सामाजिक न्याय न सिर्फ समानता की प्रकृति से परंतु इस कसौटी से भी सरोकार रखता है जिसके असमानता को न्याय संगत या अन्यायपूर्ण माना जा सकता है। डी. मिल्लर तर्क करते हैं कि असमानता अत्याधिक व्यापक है और अनिवार्य रूप से अनिष्टकारी बन जाती है और समाज में पूर्णतया पराजित व्यक्ति के लिए सामाजिक न्याय आवश्यक है।

ऐसा महसूस किया गया कि उदार–उपयोगितावादी न्याय के विपरीत, जॉन रॉल्स का उदार–समतावादी न्याय प्रत्येक की समानता एवं कल्याण से सरोकार रखता है, विशेष रूप से समाज के न्यूनतम सुविधा प्राप्त लोगों के लिए। उन्होंने वितरणात्मक न्याय की अत्याधिक आवश्यकता के लिए तर्क प्रस्तुत किया है। उन्होंने इस पर जोर दिया कि समस्त सामाजिक प्राथमिक वस्तुओं स्वतंत्रता एवं अवसर, आय एवं सम्पदा और आत्म–सम्मान के आधार को तब तक समान रूप से वितरित किया जाए, जब तक इनमें से किसी का या इन सब वस्तुओं का असमान वितरण न्यूनतम सुविधा प्राप्त के हित में न हो।

इस संदर्भ में, काफी बहस चल रही है कि स्तरित समाज में न्याय की धारणा के बारे में व्यक्ति किस प्रकार से हैं। इस संबंध में अम्बेडकर के योगदान का अध्ययन करना श्रेष्ठ होगा। उनका मानना था कि सामाजिक न्याय को तभी चरितार्थ किया जा सकता है जब राजनीतिक लोकतंत्र को सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्र में भी विस्तारित किया जाय। सामाजिक न्याय के बारे में उनका विचार रॉल्स के सामाजिक न्याय की अवधारणा से मिलता जुलता है। रॉल्स ने वितरणात्मक न्याय के अपने सिद्धांत में 'भिन्नता के तत्व' सिद्धांत को समाविष्ट किया है जो अम्बेडकर के लिए विशेष व्यवहार का सिद्धांत है।

## 16-3-2 lektoknh nf"Vdks.k

न्याय के समाजवादी दृष्टिकोण की जड़ें समूहवाद में स्थित है और यह सामाजिक समानता तथा समुदाय के लिए बृहद्तर समर्थन प्रदर्षित करता है। सभी प्रकार के समाजवादियों के लिए, न्याय वहीं है जहाँ कोई अन्याय नहीं है। सामान्यतौर पर समाज में और विशेष रूप से पूंजीवादी समाज में, विद्यमान तंत्र में कामगारों, किसानों, बेरोजगार, अत्यधिक पिछड़े व्यक्तियों इत्यादि के साथ किए जाने वाला अन्याय सभी समाजवादियों के लिए मुख्य सरोकार रहा है। मार्क्सवादियों के लिए, वर्ग समाजों में न्याय हमेशा वर्ग न्याय है और पूंजीवादी के लिए न्याय और वितरीत रूप से कामगारों के लिए अन्याय है। अतः मार्क्सवादी केवल वर्ग विहीन समाज के न्याय की शर्ते मानते हैं। उनके लिए न्याय मात्र न्यायपूर्ण कानून नहीं परंतु न्यायसंगत समाज से बनने वाले न्याय संगत कानून भी हैं; ये मात्र आर्थिक या सामाजिक प्रकृति के नहीं, परंतु अपने विस्तार में सामाजिक आर्थिक भी है। लोकतांत्रिक समाजवादी, लोकतांत्रिक और समाजवादी दोनों ही हैं, और इसलिए, उनके लिए न्याय न्यायसंगत व्यवस्था और न्यायसंगत समाज में

विद्यमान होता है। लोकतांत्रिक समाजवाद नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकारों, नागरिक स्वतंत्रताएं और साथ ही सामाजिक–आर्थिक अधिकार उपलब्ध कराने की चेष्टा करता है – निःसंदेह यह कठिन संयोजन है। यदि इसे प्राप्त किया जा सकेगा तो, यह सामाजिक न्याय के लिए एक आदर्श स्कीम का काम करेगा।

### 16.3.3 सबाल्टर्न या उपाश्रित वर्गीय दृष्टिकोण **(Subaltern Approach)**

यह दृष्टिकोण समाज के किसी भी ऐसे समूह पर विचार करता है जो अधीनस्थ स्थिति पदावनत दिए गए हैं (जेंडर, आयु, व्यावसाय, वर्ग, जाति, प्रजाति, धर्म, भाषा, संस्कृति इत्यादि के कारण)। जिससे वो उपेक्षित या अभाव ग्रस्त समूहों के वर्ग में आ जाते हैं। ऐसे समूह सामाजिक ढांचे में अंतनिर्हित विभिन्न रुकावटों के कारण लगभग अधीनस्थ स्थिति में रखे जाते हैं। वो अभाव ग्रस्त शोषित, दमित और सीमान्त समूह होते हैं। न्याय का सबआल्ट्रन परिप्रेक्ष्य वंचित तथा अभााव ग्रस्त लोगों के लिए सामाजिक न्याय की मांग करता है। यह एक साथ, दोहरे उद्देश्यों की मांग करता है : (अ) सभी प्रकार के भेदभावों का उन्मूलन; और (ब) सामाजिक समानता प्राप्त करने के लिए। विशेष देखरेख का प्रावधान करता है न्याय का सब आल्ट्र दृष्टिकोण सिर्फ आर्थिक ही नहीं है, बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक और यहाँ तक कि मनोवैज्ञानिक भी है।

### 16.3.4 नारीवादी दृष्टिकोण

न्याय की नारीवादी आलोचना के अनुसार पुरुषों की तुलना में महिलाएं सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित होता हैं; और यह वचन उनके प्राकृतिक तथा जैविक अंतरों द्वारा प्रामाणित नहीं होता है। इस अन्तर की जड़ें सामाजिक व्यवस्थाओं में स्थित है जिसने महिलाओं के विरुद्ध अन्याय करने का अपराध किया है में स्थित हैं। समाज में विभिन्न रूपों के अन्याय के विरुद्ध बढ़ रही सामाजिक चेतना के प्रकाश में, महिलाओं के दर्जे सम्बन्ध में स्थिति का पुनरावलोकन करने, उसे चुनौती देने और बदलने की जरूरत है। नारीवादी सिद्धांत एवं आंदोलन निस्संदेह यह आग्रह करता है कि महिलाओं की स्थिति और पुरुषों एवं महिलाओं के बीच असमानताओं को केंद्रीय राजनीतिक मुद्दों के रूप में लिया जाना चाहिए। नारीवादी विचारधारा के तमाम पक्ष महिलाओं की असमानता, अधीनस्थता अथवा उत्पीड़न के कारणों एवं उपचार समाधानों पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

महिला को पुरुष के समान न समझ कर असमान समझा जाता है। अतः, उसे अपने पूरे जीवन के दौरान कष्ट भोगना पड़ता है : उसकी अधीनस्थता, शक्तिहीनता एवं उत्पीड़न पुरुष प्रभुत्व के परिणाम है। नारीवादी परिप्रेक्ष्य से न्याय मांग करता है कि स्त्री जेंडर के विचार का स्त्री द्वारा आंतरीक और उससे जुड़े निम्न स्व–आदरभाव, उदासीनता (अनिच्छा) लाचारी से पलायन किया जाए। नारीवादियों का कहना है कि अब जो जरूरत है, वह केवल पुरुषों के प्राप्त अधिकार के समान अधिकार नहीं परंतु जैसा कि नारीवादी आग्रह करते हैं कि घरेलू एवं बाल देखरेख कार्यों के साम्प्रदायिकीकरण; पुरुष प्रभुता के उन्मूलन, पितृसत्तात्मक संस्कृति के विनाश; जेंडर समाजीकरण के पुनर्क्रमीकरण की भी जरूरत है और पुरुष के उत्पीड़न से महिलाओं की मुक्ति के लिए लड़ना होगा। पुरुष और महिला के बीच विवादों में कानून को नारीवादी, तटस्थ नहीं समझते हैं; न्याय का विचार, अपनी प्रकृति के कारण से पुरुषलिंगी या दूसरे शब्दों में संरचित है। न्याय के नारीवादी परिप्रेक्ष्य का अर्थ समस्त पुरुष प्रभुता को समाप्त करना, अधिकारों की समानता, सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों को करीब लाना और समाज, संस्कृति और राजनीति को नवीन एवं गैर–पितृसत्तात्मक रूपों में सृजित करना है। अतः न्याय का नारीवादी परिप्रेक्ष्य मांग करता है कि महिलाओं के स्वास्थ्य तथा शिक्षा में सुधार हो और उन्हें अपना सामाजिक स्थान देने के साथ आर्थिक एवं राजनीतिक शक्ति में उन्हें पर्याप्त हिस्सा दिया जाए और उनका सम्पूर्ण विकास सुरक्षित किया जाए।

## 16-4 tsaMj U;k; dh lS)kfUrd :ijs[kk

जेंडर न्याय का उपयोग प्रायः उन अधिकार सम्पन्न परियोजनाओं के संदर्भ में किया जाता है जो कानून में परिवर्तन के जरिये स्त्रियों के अधिकारों को उन्नत करती है, या सामाजिक तथा आर्थिक नीति में महिलाओं के हितों को बढ़ावा देती हैं। तथापि, इस शब्द की विरले ही सटीक परिभाषा दी गई और प्रायः इसे जेंडर, समानता, जेंडर समता, महिलाओं के सशक्तिकरण और महिलाओं के अधिकारों की धारणाओं के स्थान पर रखकर उपयोग किया जाता हैं। जेंडर न्याय की धारणा में अनूठे घटकों समाविष्ट हैं जो वर्ग या प्रजाति से सम्बन्धित न्याय की धारणाओं से परे जाते हैं और जो उसकी परिभाषा एवं अधिनियमन को जटिल बना देते हैं। परंतु जेंडर न्याय का अर्थ, आयाम एवं उसके स्वरूप को काफी हद तक समझने के लिए उसकी तीन धारणाओं की जांच की जा सकती है।

### 16-4-1 gdnkjh ,oa pquko ds :Ik esa tsaMj U;k;

यह दृष्टिकोण जिसकी जड़ें उदार नारीवादी राजनीतिक दर्शन में हैं नारीवादी राजनीति की ऊहापोह से शुरू होता है : उत्पीड़ित महिलाएं स्वयं जेंडर न्याय के ऐसे रूप का प्रस्ताव शायद नहीं करें जो कि पुरुष विशेषाधिकार को चुनौती देता है क्योंकि उनका सामाजिकरण अपनी स्थिति को स्वीकारने में कर दिया गया है। पारिवारिक तथा सामाजिक रूढ़ियां, चुनाव करने तर्कणा करने तथा स्वतंत्र रूप से कार्रवाई करने की उनकी क्षमताओं को सीमित करके, और दूसरों की जरूरतों को उनकी अपनी खुद की जरूरतों से आगे रख कर उन्हें अनुगृहीत करके, महिलाओं की एजेन्सी को (चुनाव करने की योग्यता को) अक्षम कर सकती है। महिलाओं की अपनी खुद की सामाजिक तथा आर्थिक अधीनस्थता में उनकी रजामंदी के इस उहापोह की प्रतिक्रिया में, नारीवादी राजनीतिक दार्शनिकों ने उन न्यूनतम आर्थिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक दशाओं पर वादविवाद किया जिनके अंतर्गत महिलाएं उन सामाजिक व्यवस्थाओं को इंकार कर सकें या उस पर पुनः समझौता कर सकेंगी। जिन में वे अपने को पाती है। मार्था नस्सबॉम ने दृष्टिकोण अमर्त्य सेन के 'क्षमताएं' को अनुकूलित करते हुए है। न्यूनतम क्षमताओं के इस दृष्टिकमोण को बहुत अच्छी तरह से विस्तृत किया गया है और 'क्षमताएं' वो हैं जो कि लोग वास्तव में कर सकने में सक्षम है और सक्षम होंगे।

क्रियान्वयन से जुड़ी राजनीतिक चुनौतियों की समस्या से परे, विशेष रूप से राष्ट्रीय संसाधन मजबूरियों में होते हुए, इस दृष्टिकोण की कई आलोचनाएं हुई हैं। सर्वाधिक गंभीर आलोचना अन्य उदार नारीवादी राजनीतिक दार्शनिक, ऐन फिलिप्स द्वारा की गई है, जो तर्क करती हैं कि क्षमताओं के दृष्टिकोण के केन्द्र में नवउदार कार्यसूची है। उनका कहना है कि क्योंकि नस्सबॉम का क्षमताएं दृष्टिकोण न्यूनतम आवश्यक जरूरतों पर फोकस करता है, वह मानव समानता, न सिर्फ स्त्रियों और पुरुषों के बीच परंतु राष्ट्रों के अंदर या सभी राष्ट्रों के सामाजिक समूहों में समानता के लिए सघर्ष की गम्भीर चुनौतियों से पीछे हट जाता है। वास्तव में, क्षमता दृष्टिकोण का भौतिक फोकस स्थिति के अंत पर संपूर्ण असमानताओं पर विचार नहीं करता है और समान अधिकारों से हटकर मूलभूत सुख–सुविधाओं की हकदारी को लौट आता है।

### 16-4-2 HksnHkko dh xSj ekStwnxh ds :Ik esa tsaMj U;k;

1999 के स्त्रियों के विरुद्ध सर्वरूपी भेदभाव उन्मूलन अभिसमय (CEDAW) में जेंडर न्याय के सिद्धांत स्थापित करने की सर्वाधिक कानूनी औपचारिक चेष्टा मिलती है, जिसने जेंडर आधारित भेदभाव की गैर मौजूदगी को जेंडर न्याय का सूचक बनाया है।

इस दृष्टिकोण को 'नकारात्मक स्वतंत्रताएं' दृष्टिकोण का नाम दिया जा सकता है – यह अभि समय भेदभाव को रोकने के लिए राज्यों को अधिकारिक रूप से रोकता है।

यह अभिसमय बिल्कुल साथ यूरोपियन कानूनी परम्परा में जमा है जो, न्याय के सार्वभौमिक रूप से प्रयुक्तनीय सिद्धांत स्थापित करने और उन्हें जहाँ तक संभव हो निश्पक्षता के साथ लागू करने पर आधारित है। आलोचकों ने आरोप लगाया हैं कि निश्पक्षता के इस मिथक के कारण कानूनी प्रणालियों में महत्वपूर्ण तथा गहन रूप से संस्थागत पूर्वाग्रह भांपे या पकड़े बगैर चलते रहेंगे। तथापि, अभिसमय की सर्वाधिक सर्वसामान्य आलोचना यह है कि इसके पास लागू करने की व्यवहार्यक्षम कार्यविधियों का अभाव है क्योंकि वो उन गलतियां जांच के लिए राजकीय पक्षों पर निर्भर करते हैं जो कि स्वयं करते हैं।

### 16.4.3 सकारात्मक अधिकारों के रूप में जेंडर न्याय

जेंडर न्याय की यह सकारात्मक संकल्पना विकास, चिंतन के समकालीन अधिकार आधारित दृष्टिकोण का हिस्सा है। अधिकार–आधारित दृष्टिकोण 1990 के दशक के दौरान उद्विकसित हुए, विश्व भर में लोकतंत्रीकरण की शताब्दी लम्बी लहर के समाप्त होने पर ये दृष्टिकोण आर्थिक विकास के लिए राजनीतिक तथा कानूनी संस्थाओं के महत्व की समझ पर आधारित हैं। विशेष रूप से, ये व्यक्ति तथा सामूहिक वरीयताओं (आवाज) की स्पष्टता और राजकीय प्रतिक्रियाओं के बीच संबंध पर जोर देते है और मूलभूत अधिकारों जिनका कि नागरिक गण राज्य से वैध रूप से लेने का दावा कर सकते हैं को स्थापित करने की चेष्टा करते हैं। वो इस बात की स्वीकृति प्रकट करते हैं कि सत्ता संबध नीतियों के परिणामों को प्रभावित करते हैं, और कि मानव विकास को आगे बढ़ाने के लिए कानून तथा मूलभूत जवाबदेयता की आवश्यकता है – ताकि लोग संसाधनों या कौशलों में अपनी मूलभूत वृत्तियों का अधिक से अधिक उपयोग करने में सक्षम बन पाएं। जेंडर न्याय की परियोजनाओं के लिए राजनीति तथा अभिशासन की औपचारिक स्वीकृति बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसे स्त्रियों तथा पुरुषों के बीच संबंधों पर प्रयोग किया जा सकता है – यह मान्यता कि सत्ता के असंतुलन स्त्रियों को अपने हितों को आगे बढ़ाने हेतु कार्रवाई करने से रोक सकते हैं, और यह मान्यता कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं को स्त्रियों के प्रति अवश्य जवाबदेय बनाया जाए – इन सबके लिए सांस्थानीकृत पितृसत्तात्मक सत्ता प्रणालियों को उखाड़ फेंकना जरूरी हो जाता है।

जेंडर समानता के दावों ने आर्थिक अधिकारों की तुलना में राजनीतिक तथा नागरिक अधिकारों के क्षेत्र मं जड़े ज्यादा जमाई हैं – आर्थिक अधिकारों को नव–उदार वातावरण में कम समर्थन मिला है। राजनीतिक तथा नागरिक अधिकारों को निरपेक्ष तथा अनपरक्राम्य के रूप में देखा जाने लगा है, जबकि आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार क्योंकि ये संसाधन से बंधे राज्यों को ठोस हकदारियां प्रदान करने के लिए मजबूर कर सकते हैं 'सापेक्ष' तथा सांस्कृतिक रूप से विशिष्ट के रूप में सूत्रित किए जाने लगे; जिन्हें धीरे–धीरे चरितार्थ किया जाएगा।

अधिकार–आधारित रूपरेखा की कई आधारों पर आलोचना की गई है – पश्चिमी सांस्कृतिक साम्राज्यवाद का उपकरण होने संवैधानिकवाद और राजनीतिक लोकतंत्र का विशिष्ट रूप से पश्चिमी उदार गणतंत्रीय दृष्टिकोण होने के रूप में। कुछ आलोचकों से जुड़े होने पर का यह भी तात्पर्य है कि यह पूंजीवादी बाजारों के विस्तार का भाग है। जिसमें मानवाधिकार उन शासन प्रणालियों, के सुधार के लिए प्रवेश बिन्दु हैं जो कि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं को वैश्विक बाजार में समेकित करने के लिए बनाई की गई हैं

अधिकार–आधारित दृष्टिकोणों को लागू करने के लिए भ्रामक रूप से आसान मान कर व्याख्या की गई है और जबकि उन एजेन्टों की पहचान करके मामले पर उन्हें गम्भीर रूप से बहाने बाज माना गया जो कि अधिकारों के दावों को संतुष्ट करने और जिस डिग्री तक संतुष्ट करना चाहिए के लिये बाध्य होते हैं।

जेंडर न्याय के मुख्य समकालीन परिप्रेक्ष्यों के आधार पर, इसे पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच असमानता की समाप्ति के रूप में और यदि आवश्यक हो तो इनके समाधान के प्रावधान के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसका परिणाम महिलाओं की पुरुषों की अधीनस्थता का होता है, ये असमानताएं संसाधनों तथा अवसरों के वितरण में हो सकती है। जो कि व्यक्तियों को मानवीय, सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक पूंजी निर्मित करने के योग्य बनाते हैं अथवा, ये मानवीय गरिमा, वैयक्तिक स्वायत्ता तथा अधिकारों की धारणाओं जो कि स्त्रियों को भौतिक एकता से और अपना जीवन किस प्रकार जीएं के बारे में चुनाव करने की क्षमता से वंचित करती हैं। परिणाम स्वरूप, जेंडर न्याय का आशय चुनाव करने की एजेंसी या योग्यता के साथ, संसाधनों की गम्यता तथा उसपर नियंत्रण है।

cksèk iz'u 1

uksV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. सामाजिक न्याय के उदार तथा समाजवादी दृष्टिकोण क्या हैं? स्पष्ट कीजिए।

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

2. जेंडर न्याय की सैद्धांतिक रूपरेखा संक्षेप में स्पष्ट कीजिए।

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

## 16-5 lkekftd U;k; vkSj tsaMj U;k;

सामाजिक न्याय की भावना से जेंडर न्याय पुरुषों और स्त्रियों के बीच संबंध पर केवल सवाल उठाने के बारे में नहीं, उससे ज्यादा है। यह समाज को ज्यादा न्यायपूर्ण और समान बनाने के लिए संपूर्ण समाज को बदल डालने की दिशा में सुधारात्मक कार्रवाई के लिए रणनीतियां बनाने से संबंधित है, और इसका अर्थ ऐसा स्थान है जिसमें स्त्रियों और पुरुषों को पूर्णतया मानव समझा जा सके। इसके अतिरिक्त, इसका आशय स्वैच्छिक सामाजिक सम्बन्धों से हट कर न्यायसंगत और संतुलित अर्थात्, न्यायोचित – सामाजिक संबंधों की ओर जाना है।

महिलाओं की प्रतिस्थति में सकारात्मक परिवर्तन लाने तथा जेंडर (लिंग आधारित) शोषण को बदलने के लिए एकमात्र संभावित तरीके के रूप में न्याय के साथ विकास

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

को देखा गया है। अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन ने विकास को स्वतंत्रता कहा जहाँ विकास स्त्रियों को अपने आप को पूर्ण रूप से विकसित करने के लिए क्षमताएं प्रदान करने का एक तरीका है यह तर्क किया जाता है कि यह कार्य साक्षरता, स्वास्थ्य तथा अन्य मूलभूत सुविधाएं प्रदान करके किया जाए जो स्त्रियों को परिवार, और समाज में अपनी आर्थिक प्रस्थिति को बदलने के लिए सब कुछ देगा है और इस तरह से निर्णय लेने की शक्तियों को हासिल करने के लिए उसकी स्थिति को सुधारेगा। तृतीय विश्व विकास वार्ता ने प्रारम्भ से ही माना यह गरीबी और बहुधा आर्थिक एवं सामाजिक अपवर्जन ही था जिसने उन्हें निर्णयन में किसी भी भूमिका से वंचित किया। इसने पितृसत्तात्मक प्रणाली को सुदृढ़ किया और अत्यन्त गरीबी के कारणवष स्त्रियों का शोषण बहुत बढ़ गया था।

## 16.6 भारतीय स्थिति : सामाजिक न्याय एवं जेंडर न्याय

भारत सहित दक्षिण एशिया में, संरचनात्मक अवरोधों के सर्वसामान्य प्रतिमान या पैटर्न (नमूने) और परिणामी अपवर्जन सुस्पष्ट है। यह संरचनात्मक अवरोध ज्यादा सामान्य तौर पर गरीब लोगों को और ज्यादा विशेष रूप से स्त्रियों को अधिकारों और एजेंसी से वंचित करते हैं।

भारत में स्त्री वंचन के उच्च स्तर पाए जाते और स्वयं जीवन के अधिकार से वचन शुरू हो जाता है। यह बहुत से राज्यों में जहाँ महिला जनसंख्या घट रही हैं गिरते हुए लिंग अनुपात में गहन रूप से प्रकट होता है। भारतीय समाज अत्याधिक विषम है और यह विषमताएं संरचनात्मक तथा ऐतिहासिक हैं। उदाहरण के लिए, जाति, धर्म, नृजातीयता और लिंग के आधार पर विषमताओं ने बिल्कुल नृजातीय पार्थक्य की स्थिति उत्पन्न कर दी है जिसमें अधिकांश लोगों के लिए न्याय तथा समान नागरिकता की गम्यता अप्राप्य बनी हुई है।

विषमता के उच्च स्तर हाशिये पर आए समूहों की सामाजिक तथा आर्थिक निर्भरता द्वारा वहीं के वहीं रह गए हैं। सामाजिक तथा आर्थिक अधिकारों की राजकीय सुरक्षा तथा प्रौन्नति अपर्याप्त रही और अधिकांश के लिए अनुपस्थित रही। हाशिये के या सीमान्त समूहों की महिलाओं के लिए, और विशेष रूप से गरीब महिलाओं के लिए इसका अर्थ सामाजिक वस्तुओं और आर्थिक अवसरों की गम्यता के लिए परिवार (विशेष रूप से विवाह), रिश्तेदार और समुदाय पर निर्भरता का हुआ। परिणाम यह हुआ कि गरीब समूहों में पुरुषों की अपेक्षा ज्यादा महिलाएं निरक्षर हैं, बीमार होने पर उनकी चिकित्सा पर ध्यान दिए जाने की संभावना कम है और श्रम बाजार में असमान शर्तों पर भर्ती की जाती हैं। भारतीय परिवारों का सर्वव्यापक परिदृश्य जेंडर भेदभाव का है जो जाति, धर्म तथा वर्ग की सीमाएं लांघ गया है। शिक्षा, रोजगार तथा स्वास्थ्य के क्षेत्रों में महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव का व्यापक प्रचलन है। घर के अंदर महिलाओं के अधिकांश काम पर गौर ही नहीं किया जाता है और यह काम पारितोषिक बगैर होता है। घर के बाहर भी उन्हें अल्पवेतन ही मिलता है।

## 16.7 भारतीय परिवार में जेंडर संबंधी भेदभाव

जीवन के सभी क्षेत्रों में जाति, वर्ग, नृजातीयता, प्रजाति और धर्म में जेंडर भेदभाव देखा जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र की सांख्यिकी के अनुसार, ''विश्व की जनसंख्या में 50% महिलाएं हैं, और काम का दो–तिहाई भाग वो करती है, कुल आय का 10% पाती हैं और कुल परिसम्पत्तियों में से 1% पर उनका स्वामित्व है''। जबकि यह वैश्विक तथ्य है, भारत में दृश्य और भी बद्‌दतर है।

आज कन्या शिशु हत्या का प्रतिस्थापन भ्रूण हत्या से हो रहा है। महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव ऐसे स्तर तक पहुँच गया है कि इसने माँ के सुरक्षित गर्भाशय में अजन्मी बच्ची पर आक्रमण करना शुरू कर दिया है। प्रौद्योगिकीय प्रगति मानव के लिए लाभकारी कार्य करने के बजाय समतापूर्ण सामाजिक व्यवस्था के विकास को अवरुद्ध कर रही है। परिवार में जेंडर भेदभाव बहुत से भिन्न रूप हैं — पोषण, स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा का वंचन, घरेलु कामों के धकेले जाना, विवाह से संबंधित सभी प्रकार की हिंसा, जैसे कि छोटी उम्र में विवाह, दहेज मृत्यु इत्यादि.. सूची अंतहीन है। इसके दूसरी ओर, न्यूक्लियर परिवार में जहाँ पुरुष तथा पत्नि इकट्ठे निवास करते हैं महिलाओं के लिए ज्यादा स्वतंत्रता तथा समानता को बढ़ाने की सामर्थ्य रखता है परंतु इसके बजाय बहुत सी और कभी—कभी परस्पर विरोधी भूमिकाओं का भार उन पर डाल सकता है।

पत्नी के रूप में और माँ के रूप में महिला परिवार को चलाने के लिए अकेले जिम्मेदार होती है, प्रत्येक सदस्य की तमाम आवश्यकताओं की परवाह करती है और अपनी परवाह करने के लिए सबसे कम समय और ऊर्जा का उपयोग करती है। महिला को दिए गए कार्य और उत्तरदायित्व जरूरत से ज्यादा होते हैं परंतु जब निर्णय लेने की बात आती है तो, पुरुष का नियन्त्रण रहता है। निर्णयन प्रक्रिया में, उसे पीछे कर दिया जाता है क्योंकि उसे कम समझदार समझा जाता है। इस वातावरण में रह रहे बच्चे, जो पुरुष और महिला की भिन्न—भिन्न भूमिका के पैटर्न को देखते हैं; अपने बचपन से ही जेंडर असमानता के पाठ सीख लेते हैं और इस पैटर्न की पीढ़ी—दर—पीढ़ी चलना ही निश्चित है।

जेंडर भेदभाव को मिटाने का कोई भी प्रयत्न असफल होगा यदि परिवार के अंदर भेदभाव पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। परिवार में से भेदभाव को मिटाना दुष्कर कार्य होगा, क्योंकि यह कानून या अन्य किसी जोरदार साधनों के द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है। परिवार में परिवर्तन सिर्फ तभी आएगा जब परिवार के सदस्यों यह को समझ आ जाता है कि न सिर्फ महिलाएं परंतु पूरा परिवार ही उनकी अन्यायपूर्ण प्रथा के कारण कष्ट भोगता है। सशक्तिकरण, आत्मविश्वास और स्वतंत्र व्यक्तित्व के साथ, महिला अन्याय का मुकाबला कर सकती है। फिर भी, हाल ही के वर्षों में, शहरीकरण तथा आधुनिकीकरण के प्रभाव से, एकपक्षीय से द्विपक्षीय परिवारिक निर्णयन में परिवर्तन अथवा समतावादी विचारधारा की तरफ परिवर्तन हो रहा है।

### 16-7-1 f'k{kk

दिन—प्रतिदिन के जीवन में समानता, न्याय तथा लोकतंत्र प्राप्त करने की कुंजी शिक्षा है और निर्णय करने के पदों स्थितियों तक आने के लिए यथेष्ट रूप से व्यापक आधार की गारंटी है। जन मीडिया और सामाजिक संस्थाओं के माध्यक से स्कूलों में, परिवारों में, औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों की प्रकार शिक्षा, सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोग शांति की संस्कृति के मूल्य, अभिवृत्तियों और व्यवहारपरक पैटर्न को जान सकते हैं। शांति की संस्कृति को प्रोत्साहित करने के लिए शिक्षा का मुख्य है, बशर्ते कि शिक्षा अपवर्जित को समाविष्ट करें, भिन्न सामाजिक—सांस्कृतिक संदर्भों के लिए प्रासंगिक हो उच्च गुणवत्ता की है, संवेदनशील हो, (अर्थात् स्त्रियों और पुरुषों के बीच अंतरों को मानती है, उनकी मूलभूत समानता का सम्मान करती है, जेंडर असमानताओं पर काबू पाने की चेष्टा करती है) और अंतःवैयक्तिक, अंतः सांस्कृतिक तथा अंतःराष्ट्रीय वार्ता को प्रोत्साहन देती हो।

समान शैक्षिक अवसरों या कौशलों और योग्यताओं के बगैर, कुछ वर्गों और सामाजिक समूहों की महिलाएं समयोपरि निकृष्ट स्थिति में आ गई है, विशेष रूप से अपने

व्यक्तिगत विकास में नागरिक के रूप में, काम के अपने चुनाव में, और सरकारी नेतृत्व और निर्णयों को प्रभावित करने की अपनी शक्ति में। समस्त विश्व में और हमारे देश में, समाज के विषम संबधों का एक पहलु शिक्षा तथा विशेष रूप से उच्च शिक्षा में, महिलाओं और लड़कियों की अलाभकरी तथा हाशियाकृत या सीमान्त स्थिति है। अधिकांश लड़कियों के लिए उच्च शिक्षा में न जा पाने का एक मुख्य कारण कमजोर आधार या नींव है, अर्थात् विद्यालयी अवस्था में, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में। इसके आर्थिक वंचन, अतिरिक्त अभिप्रेरणा का अभाव और लड़कियों की शिक्षा कें विरुद्ध शक्तिशाली पितृसत्तात्मक खैइया भी जिम्मेदार है।

ऐतिहासिक रूप से, भारत में, भारत में स्त्रियों की अक्षमताएं समाज की प्रगति में सुविदित सामाजिक अवरोध और मंदनकारी कारक रहे हैं। भारत में, आर्थिक विकास तथा सामाजिक परिवर्तन पर वर्तमान भारतीय बहस में, स्त्रियों की शिक्षा के महत्व को ज्यादा से ज्यादा समझा जाने लगा है। राष्ट्र अपने मानव संसाधनों के पूरे आधे भाग की उपेक्षा को वहन करने की सामर्थ्य नहीं रखता है। अब यह आनुभाविक रूप से स्थापित हो गया है कि हजारों सामाजिक बुराइयों का एकल उपचार स्त्रियों की शिक्षा है। एक तरफ महिलाओं की साक्षरता और दूसरी ओर जनसंख्या वृद्धि, शिशु मृत्यु दर, मातृ मृत्यु दर, कुपोषण और निम्न उत्पादकता के बीच प्रतिकूल अनुपात को स्वीकार किया जाने लगा है। स्त्री शिक्षा ने साक्षरता के मार्ग से जनसंख्या नियंत्रण करने की क्षमता को प्रदर्शित किया है। बाल कन्या की शिक्षा को सामाजिक सशक्तिकरण के अपरिहार्य और महत्वपूर्ण संघटक के रूप में देखा गया है और जो सही भी है, क्योंकि अकेले शिक्षा ही नागरिक समाज को राजनीतिक समाज से उचित निष्पादन लेने के लिए सक्षम बनाएगी। निस्संदेह, भारत के आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन पर विस्तृत शोध और व्यापक अध्ययन में, मौलिक क्षमताओं को बढ़ावा देने में महिलाओं की साक्षरता की भूमिका को बलपूर्वक प्रस्तुत किया गया है, जो इंगित करता है कि अर्थव्यवस्था में महिलाओं की स्वतंत्र सहभागिता सफलता का अनिवार्य संघटक है। जीन ड्रेज़ और अमर्त्य सेन के अनुसार, इस तत्व ने उत्तर प्रदेश के राज्य की तुलना में केरल राज्य को महत्वपूर्ण अध्ययन बना दिया है। महिलाओं की एजेंसी की भूमिका और साक्षरता के प्रसार के बीच सुस्पष्ट अंतःनिर्भरता है।

नवीन चुनौतियों का सामना करने और पिछले शैक्षिक वंचन की क्षतिपूर्ति कर सकने के लिए महिलाओं के लिए प्रौढ़ शिक्षा अति आवश्यक है। महिलाओं के लिए दूरस्थ शिक्षा विशेष महत्व की सिद्ध हुई है जो पारिवारिक जिम्मेदारियाँ तथा सांस्कृतिक कारकों के कारण भौगोलिक रूप से पुरुषों की तुलना में प्रायः कम गतिशील है, हाल ही के सुधारों के बावजूद, शैक्षिक अवसरों में वर्तमान जेंडर असुंतलन न्याय और विकास की अवधारणाओं को चुनौती है। यह शांति के लिए भी समान रूप से चुनौती है। भारत में साक्षर महिलाएं और पुरुष होने चाहिए, जो हमारे सर्वसामान्य भविष्य को गढ़ने में अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा रचनात्मक सहभागिता करें।

### 16-7-2 LokLF;

दुरूस्त स्वास्थ्य एक दिन का फल नहीं है। भारत में महिलाएं शुरू से ही लापरवाही तथा अज्ञानता के कारण अपने स्वास्थ्य की प्रायः उपेक्षा करती हैं। शारीरिक योगक्षेम तथा स्वास्थ्य देखभाल तक पहुँच या निर्धारित करने में जेंडर महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। भारतीय महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति पश्चिम की महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति से – उनकी आहारीय आदतों, रहन–सहन के स्तर, जीवन शैली और वातावरण संबंधी कारकों के कारण काफी भिन्न हैं। उनकी स्वास्थ्य प्रस्थिति जटिल जैविक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक कारकों से प्रभावित होती है जो कि अत्याधिक

अंतःसंबंधित होते हैं। भारत क्योंकि प्रमुख रूप से पितृसत्तात्मक समाज है, स्वास्थ्य देखभाल में महिलाओं का हिस्सा और उस तक उनकी पहुँच कम है। पोषण, देखभाल, मान्यता, उपचार और निवारण के संबंध में उनके साथ भेदभाव किया जाता है। इन सभी कारक को रोग निदान में योगात्मक प्रभाव होता है।

महिलाओं, विशेष रूप से लड़कियों की उपेक्षा हमारे समाज पर काला धब्बा है। जैसा कि डब्ल्यूएचओ की 1998 की क्षेत्रीय स्वास्थ्य रिपोर्ट बताती है, दक्षिण एशिया में 74 मिलियन स्त्रियाँ एकदम गायब हैं। इसी प्रकार से, विश्व में यही एकमात्र क्षेत्र है जहाँ कुल जनसंख्या में पुरुषों की संख्या महिलाओं की संख्या से ज्यादा है। विख्यात अर्थशास्त्री अमर्त्य सेन के अनुसार, भारत में प्रचलित मृत्यु दरों, रुग्णता की दरों, अस्पताल देखरेख तथा पोषाणिक दर्जे की विस्तृत तुलना, देश के बहुत से भागों विशेष रूप से ग्रामीण भारत में महिलाओं के क्रमबद्ध वंचन की बहुत की निर्णायक चित्र की पुष्टि करता है।

महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति बद्तर हो जाती है। जब यह इसे निर्धनता, निरक्षता, ग्रामीण पृष्ठभूमि, निम्न जाति, विधवापन, अभित्यजन, विक्लांगता, एकल वैवाहिक दर्जा अथवा संतानहीनता के साथ संबंधित किया जाता है। यह स्थिति भारत के उत्तरी राज्यों में और भी बद्दतर है, जहाँ महिलाओं की निम्न साक्षरता महिलाओं की निम्न सामाजिक प्रस्थिति के साथ मिलकर उन्हें समुदाय, संस्कृति, परम्परा, पारिवारिक प्रतिष्ठा और धर्म के नाम पर उत्पीड़ित रखने में सफल हुई है। उन क्षेत्रों में जहाँ स्त्रियों तथा लड़कियों की उपेक्षा की जाती है, उनके स्वास्थ्य का स्पष्ट रूप से प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है।

जिन क्षेत्रों में महिला साक्षरता की निम्न दरें हैं उन क्षेत्रों में मातृ मृत्युदर, शिशु मृत्यु जन्म दर और कन्या भ्रूण हत्या और दहेज के कारण मृत्यु के मामलों की दरें उच्च पाई गई है। जब जेंडर भेदभाव का समाजीकरण और आंतरीकरण हो जाता है, तो फिर उसे अब जेंडर–असंवेदनशील बिल्कुल नहीं समझा जाता है।

स्वास्थ्य देखभाल तथा विकास में जेंडर परिप्रेक्ष्य का निर्माण तथा जेंडर संवेदीकरण के प्रयासों को पितृसत्तात्मक संरचनाओं से बारम्बार विरोध का सामना करना पड़ा है। पुरुषों द्वारा निर्णयन, प्रक्रिया सीमित परिवार संसाधनों, स्त्रियों की लैंगिकता गतिशीलता की स्वतंत्रता, घर से बाहर की दुनियां तक पहुँच आदि पर पुरुषों का नियंत्रण जारी है। इन परिस्थितियों के अंदर, स्त्रियाँ तब तक पूर्णतया आश्रित तथा शक्तिहीन बनी रहती है जब तक कि उन्हें अपने अंदर से शक्ति या बाहर से अवलम्बन प्राप्त नहीं होता है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि उन्हें पर्याप्त रूप से भोजन दिया जाए वो शिक्षित की जाए हैं और अपने जीवन तथा अपने बच्चों के संबंध में निर्णय ले सकें स्त्रियों को सहायक वातावरण की जरूरत है।

एक ही परिवार के अंदर भिन्न लिंगों के बच्चों के बीच पोषण, शैक्षिक अवसरों, गतिशीलता की स्वतंत्रता, इत्यादि में भिन्नताएं उन समाजों में देखने को नहीं मिलती है जहाँ स्त्रियों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया जाता है और उन्हें बराबर के साथी के रूप में स्वीकार किया जाता है। उन स्थानों में जहाँ महिलाओं का सामाजिक दर्जा निम्न है वहाँ कन्या शिशु मृत्यु की उच्च दरें प्रजननता, मातृ मृत्यु और महिलाओं की निम्न साक्षरता और निम्न पोषणिक दर्जा, विवाह की कम आयु देखने को मिली है।

महिलाओं को शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्वास्थ्य को सुधारने के लिए गंभीर प्रयत्न नहीं किए गए हैं। अत्याधिक भारी रुकावटों के बावजूद, महिलाओं ने

जीवित रहने, बच्चों को पालने, घर निर्मित करने, स्वास्थ्य देखरेख अपने परिवार की पालन करने के लिए संघर्ष किया है। इस बात को न ही समझा गया है और न ही सराहा गया है कि महिलाओं द्वारा प्रदान किए जाने वाले श्रम, अध्यवसाय और देखरेख ही है जो विश्व को बनाए रखे हुए है।

## 16-7-3 jkstxkj

समाज में श्रम का लैंगिक विभाजन प्रचलित है। परंतु, श्रम के लैंगिक विभााजन के बारे में कुछ ''स्वाभाविक'' नहीं है। इस तथ्य का कि पुरुष और महिलाएं घर में और बाहर दोनों जगह भिन्न प्रकार के काम करते हैं, जीवन विज्ञान से कोई लेना देना नहीं है। केवल गर्भधारण की वास्तविक प्रक्रिया जैविक है घर के अंदर दूसरा समस्त काम जो स्त्रियों को करना पड़ता है – खाना बनाना, सफाई, बच्चों की देखभाल इत्यादि – पुरुषों के द्वारा भी समान रूप से किया जा सकता है। दुर्भाग्यवष इस काम को ''स्त्रियों का कार्य'' समझा जाता है।

श्रम का यह लैंगिक विभाजन, घर तक ही सीमित नहीं है, यह वेतन प्रद्रत्त कार्य के ''सार्वजनिक'' क्षेत्र तक भी विस्तरित होता है, और यहां भी, इसका ''लिंग'' (जीव विज्ञान) के साथ कोई लेना देना नहीं है और सब लेना देना जेंडर (संस्कृति) के साथ ही है। कुछ प्रकार के कार्यों को ''स्त्रियों का कार्य'', और अन्य प्रकार के कार्यों को, पुरुष का कार्य समझा जाता है, परंतु ज्यादा महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जो भी काम स्त्रियां करती हैं, उसे कम मजदूरी मिलती है और उसे कम मूल्या दिया जाता है। उदाहरण के लिए, नर्सिंग और अध्यापन, विशेष रूप से निम्न स्तरों पर, प्रमुख रूप से महिला व्यावसाय है और अन्य श्वेत पोषी नौकरियों, जो कि मध्यम वर्गों ने ले ली हैं, के संबंध में भी तुलनात्मक रूप से कम वेतन दिया जाता है। नारीवादी बताते हें कि अध्यापन और नर्सिंग कार्य का स्त्रीकरण इसलिए है क्योंकि इस कार्य को स्त्रियां घर के अंदर जो चालन पोषण का कार्य करती हैं उसके विस्तरण के रूप में देखा जाता है।

क्षैतिज पृथकता के संबंध में, महिलाएं निम्न वेतन प्रदत्त पदों जैसे कि सैक्रेटेरी, टाईपिस्ट, ब्यूटिषियन, नर्स, केन्यरगिवर और असेम्बली –लाईन वर्कर – में केंद्रित हैं। अभी भी भारत के निजी क्षेत्र में ''समान कार्य परंतु असमान वेतन'' आम प्रथा है।

असंगठित क्षेत्र में महिलाओं के नियोजन ने अभी तक भी सहायक सेवाएं जैसे बच्चे की देखभाल, स्वास्थ्य देखभाल, समान वेतन और सबसे अधिक पदोन्नति संबंधी मार्ग उनके लिए सुनिश्चित नहीं की हैं। रोजगार के निम्न पदानुक्रमों में महिलाएं सबसे अधिक होती हैं और विरले ही प्रबंधकीय तथा निर्णयन संबंधी पदों तक ऊपर जाती हैं। यह अभी भी चिन्ता के क्षेत्र हैं।

संगठित क्षेत्र में नियोजित महिलाओं के लिए भी, बाल देखभाल सेवा अपनी गैर–मौजूदगी के कारण बहुत साफ दीखती होती है। बहुत कम सेवा कुछ ही शहरी क्षेत्रों में उपलब्ध कराई जाती है। महिलाओं की प्रजनन भूमिका और बच्चा जनने की आवृत्ति उन्हें उनके जननावधि के काफी बड़े भाग के लिए श्रम बाजार से बाहर धकेल देती है। यह उनके आर्थिक योगदान में अत्याधिक बाधा डालता है। परिवार नियोजन के बारे में बढ़ती जागरूकता स्त्रियों के सशक्तिकरण का उपाय होगी और उन्हें अपने जीवन की लम्बी अवधि के लिए अपनी पसंद की गतिविधियों के लिए मुक्त करेगी।

स्त्रियों के रोजगार के लिए दूसरी मुख्य बाधा पेय जल तथा ईंधन के लिए बुनियादी ढांचे का अभाव है, जिसे एकत्र करने में उनके समय काफी बड़ा भाग लगता है। जल और ईंधन जीने के लिए अनिवार्य हैं, इस कारण वे प्रायः जल और ईंधन एकत्रित करने के

बाद ही रोजगार के बारे में विचार कर पाती हैं। इन क्षेत्रों को अहिस्ता–अहिस्ता ध्यान मिलने लगा है। परंतु हम किसी भी संतोषजनक हल से दूर है।

लगभग सभी देशों में महिलाएं औपचारिक अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण भाग हैं – कार्यरत महिलाओं की संख्या और अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के उत्पादन में उनके योगदान दोनों के संबंध में गतिविधियों की प्रकृति को देखते हुए (गृह आधारित, गली में बेचना और अन्य स्व रोजगार उद्यम), महिलाओं के योगदान का अल्प मूल्यांकन होने की पूरी संभावना होती है।

भारत में, कार्य बल का लगभग एक तिहाई महिलाएं हैं। असंगठित क्षेत्र में नियोजित महिला कामगारों की संख्या शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक है, और अधिकांश कृषि क्षेत्र में कार्य करती है। शहरी क्षेत्रों में, महिलाएं विविध रूप के व्यावसायों में कार्यरत है, जैसे कि सब्जी बेचना, फूल बेचना, कपड़े प्रैस करना, निर्माण मजदूर, घरेलु नैकरानियाँ इत्यादि छोटे मोट कारोबार। क्योंकि असंगठित क्षेत्र में अधिकांश गतिविधियों के लिए आमतौर पर कम कौशल तथा कम शिक्षा की जरूरत होती है और वो पारंपरिक प्रकृति की होती है, भारत में महिला कार्मिकों का बड़ा अनुपात इसी क्षेत्र में है।

शहरी क्षेत्रों में, 80% से ज्यादा महिलाएं असंगठित अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में कार्य कर रही हैं जहाँ कमाई अत्यन्त निम्न है, काम के घंटे लम्बे, कोई प्रदत्त छुट्टी नहीं, कोई चिकित्सा बीमा या पेंशन या कोई अन्य सामाजिक सुरक्षा हितलाभ नहीं है। अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में काम करना काम अल्पपोषित महिलाओं के लिए प्रायः जोखिमपूर्ण बन जाता है, विशेष रूप से, बच्चों तथा किशोरों/किषोरियों के लिए।

गृह उद्योगों, में गृह–आधारित कामगारों के रूप में, घरेलु कामगारों, घुटपुट कारोबार सेवा क्षेत्र निर्माण क्षेत्र इत्यादि में काम करते हुए महिलाएं राष्ट्रीय आर्थिक संवृद्धि तथा पारिवारिक कल्याण में महत्वपूर्ण योगदान करती हैं। फिर भी, उनके योगदान को पर्याप्त रूप से मान्यता नहीं मिली है; न ही उनकी जेंडर–विशिष्ट समस्याओं पर पर्याप्त रूप से विचार किया गया है। वो आमतौर पर असंगठित, अनुसुनी, अल्प–निरूपित प्रदत्त रहती हैं।

निम्न तथा वंचित जातियों के पुरुषों तथा महिलाओं दोनों के लिए व्यापक शैक्षिक वंचन और सामाजिक अन्याय आम बात है। यह जबकि सामान्य तौर पर सत्य होता है, यह भी सत्य है कि जब इन जातियों के भावी अवसर बेहतर करने के लिए कानूनों, की व्यवस्था की जाती है, तो इन शैक्षिक संस्थाओं में आरक्षण और पिछड़ी जातियों के लिए सरकार पदों का लाभ के जैसे उपायों ज्यादा ले पाते हैं। भारत में 1980 के दशक के दौरान पिछड़ी हुई जातियों के लिए आरक्षणों के बारे में समस्त बहस के दौरान, ज्यादा लोगों ने प्रश्न नहीं किया कि क्या इन जातियों की महिलाएं भी प्रस्तावित उपाय से समान रूप से लाभान्वित होगी। यह मान लिया गया था कि सामाजिक न्याय जेंडर–तटस्थ विचार है। दूसरे शब्दों में, प्रारुपिक या ठेठ पिछड़ी जाति के व्यक्ति की कल्पना पुरुष के रूप में की गई थी, और इस तथ्य के बावजूद कि पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए एक मानदंड विशेष जाति में या पिछड़े वर्ग समूह में महिलाओं की शैक्षिक प्रस्थिति है। अतः किसी ने भी इस बात पर जोर नहीं दिया कि सकारात्मक या पुष्टिकारक कार्रवाई का महत्वपूर्ण घटक जेंडर न्याय होना चाहिए, ताकि पुरुषों की तरह से ही इतनी सारी महिलाएं लाभान्वित हो पाएं।

### 16-7-4 fgalk% lkekftd fo'ys"k.k

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा अत्यन्त गंभीर क्षेत्र है और इस पर तत्काल ध्यान दिए जाने की जरूरत है। हिंसा केवल घरेलु हिंसा तक सीमित नहीं है। महिला को सभी समयों

पर दुर्व्यवहार, मानसिक और यौन छेड़छाड़ तथा बलात्कार का भी खतरा रहता है। वैयक्तिक हिंसा के अतिरिक्त, मानव निर्मित और प्राकृतिक दोनों विपत्तियों में महिलाएं तथा बच्चे स्वाभाविक निशाना और बद्‌दतर कष्ट झेलने वाले बने रहते हैं। अतः सूखा, चक्रवात और भूकंप और साथ ही साम्प्रदायिक दंगे, मजदूरों के संघर्ष, गरीबी और ऋणग्रस्तता, मूलतत्ववाद और यौन अतिवाद, जातिवाद और क्षेत्रीय धर्मान्धता, पहले महिलाओं पर ही आक्रमण करते हैं। महिलायें संकटाबद्ध वातावरण में ही रहती चली आ रही हैं। वह न सिर्फ अपने घर से बाहर परंतु अपने घर के अंदर भी प्रायः शारीरिक हिंसा से पीड़ित होती है, भारत में, महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को रोकने के लिए हमने हाल ही के वर्षों में कानून में दूरगामी परिवर्तन किए हैं।

सामन्ती–जाति–धार्मिक संदर्भ में यौन हिंसा वहाँ उभर कर आई जहाँ पुरुष अपनी प्रतिष्ठा और अपनी सामुयिक प्रतिष्ठा बनाए रखते हैं इसे अपनी स्त्रियों के शरीरों पर अंकित करते हैं। अतः महिला की पवित्रता की सुरक्षा करना या महिला को यौन आघात देने को पुरुष की प्रतिष्ठा और जाति या धार्मिक पहचान को क्रमशः परिरक्षित और दूषित करने के समरूप देखा जाता था। 1980 के दशक के उत्तरार्ध और बाद में जाति तथा धार्मिक दंगे नियमित अंतरालों पर हुए और प्रायः महिलाएं उत्पीड़ित के रूप में इन घटनाओं का केन्द्रक होती थी – जाति पहचान या धार्मिक जोश के हिंसात्मक दावों में संदर्भ बिंदु के रूप में केन्द्रक होती थी। ग्रामीण निर्धनों या दलितों या आदिवासियों के साथ, या दंगों के पीड़ितों के साथ काम कर रहे नारीवादियों ने, यौन हिंसा में सत्ता की विशिष्ट और जेंडर अभिव्यक्ति को देखा जो कि अधिक्रमिक और अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए किए जाते थे। उन्होंने बताया कि महिलाओं के शरीर स्थल हैं जहाँ पर पहचान तथा सत्ता, अत्याचार और विद्रोह के बारे में पितृसत्तात्मक लड़ाइयाँ लड़ी जाती थी।

महिलाओं का सशक्तिकरण करने और हाषियाकृत महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने की तमाम चेष्टा के होते भी हुए यौन छेड़छाड़ तो स्पष्टतः बढ़ रही है। आज की कामकाजी महिलाओं के लिए, यौन छेड़छाड़ संकट बन गई है जिसका उन्हें सामना करना पड़ता है और अधिकांश मामलों में, पीड़िताएं छेड़छाड़ के दृष्टांतों को सार्वजनिक नहीं बनाती हैं। यह व्यंग्यपूर्ण बात है कि समाज के विकास के फलस्वरूप घर में और कार्यस्थल में महिलाओं की स्थिति दुर्बल हो गई है। भारतीय संदर्भ में, यद्यपि महिलाओं ने पुरुष के बुर्जों जैसे कि राजनीति या सिविल सेवाओं में छापे तो मारे हैं, परन्तु उनका कार्यकारी वातावरण आरामदेय होने से दूर है। जहाँ तक महिला को घर और दफ्तर दोनों जगहों में अपने बराबर के स्तर पर स्वीकार करने की बात है, भारतीय पुरुष को अभी बहुत दूरी तय करना है। यौन छेड़छाड़ के मामले के बारे में पढ़े बिना एक दिन भी यूं ही नहीं जाता है चाहे वो सचिवालय हो अस्पताल या अकादमिक संस्थाओं हो।

महिलाओं के विरुद्ध यौन हिंसा, यौन छेड़छाड़ इत्यादि के रूप में अपराध निश्चित रूप से बढ़ रहे हैं। इस विकृति विज्ञान और उसके रोग जनन कारण, सीमा, प्रकृति, स्पेक्ट्रम और रूपों की पहचान करने के लिए महामारी विज्ञानीय अध्ययन किए जाने चाहिए। इस परिघटना से निबटने के लिए उपायों की भी पहचान की जानी चाहिए। इस समस्या पर चिकित्सीय रूप से, विधिक रूप से और मनोवैज्ञानिक रूप से विचार करने के लिए और उसकी पहचान करने के लिए स्वास्थ्य कर्मी पर्याप्त संवेदनशीलता से प्रशिक्षण नहीं दे रहे हैं। कानूनी सलाह तथा परामर्श देने के लिए उनके पास सूचना अपर्याप्त रहती है और वे लोग अप्रर्याप्त रूप से सज्ज या लैस नहीं है।

## 16-8 tMj] ekuokfèkdkj vkj 'kklu dh Hkfedk

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था ने देश की मुख्यधारा की शासन प्रणाली में महिलाओं की भर्ती के लिए आवश्यक अवसर नहीं दिए। हाल ही के वर्षों में, संवैधानिक संशोधनों जो स्थानीय शासन में उनके लिए 33% आरक्षण करते हैं के कारण भारतीय महिलाएं लोगों के संवेदन को महसूस कर पाई हैं, अपने को उसका सक्रिय हिस्सा समझ पाई हैं। आज प्रत्येक पंचायत में महिलाओं की महत्वपूर्ण संख्या है। जबकि यह सत्य है कि उनमें से बहुत सी संकोची, अपने पतियों या भाइयों के लिए मात्र ऐलिबिस (उपनाम) है। यह तथ्य कि पंचायत में उनकी उपस्थिति अनिवार्य है, कि उनमें गाँव के मामलों पर निर्णय करने की शक्ति है, ने ज्यादा साफ बोलने वाली स्त्रियों को लोकतांत्रिक प्रक्रिया में सचमुच में सहभागिता करने के योग्य बना दिया है। यह संभावित है कि महिलाओं का उनके अपने बारे में अनुभूति उनकी भूमिकाएं और कार्यों में निकट भविष्य में आहिस्ता–आहिस्ता बदलाव आए बशर्ते कि स्थायी सरकार की व्यवस्था कार्य करती रहे।

महिलाओं के आंदोलन के सैद्धांतिक विचार के अनुसार, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था की अधिकांश वर्तमान व्याधियाँ और देश के अंदर बढ़ती हुई राजनीतिक हिंसा के लिए देश के शासन में बड़ी संख्या में महिलाओं की और भी ज्यादा सक्रिय प्रतिभागिता की आवश्यकता है। प्रस्तावित महिला विधेयक भारत की समस्त राजनीतिक समस्याओं का हल नहीं करेगा, और बहु संस्कृतिवादी, बहुनृजातीय और अत्याधिक असमतावादी समाज के लिए प्रतिनिधित्व की न्यायपूर्ण व्यवस्था उपलब्ध करने की समस्या का भी समाधान नहीं करेगा। परंतु अधिकांश लोकतंत्र आज इसी समस्या के साथ जूझ रहे हैं।

जटिलता, चुनौतियों, हिंसा और अतिरिक्त आवश्यकताओं ने महिलाओं को विश्वास दिला दिया है कि नामांकन की विद्यमान प्रक्रिया के अंतर्गत वे कभी उठ नहीं सकती हैं और कि उन्हें जैसे कुछ दबाव या बाध्यता कोटा और आरक्षण की जरूरत है। यूपीए-II सरकार के अंतर्गत, महिलाओं के विधेयक पर राज्य सभा में बहस उचित रूप से नहीं की जा सकी और बिल भिन्न झटकों और दबावों जो कि पितृसत्तात्मक प्रकृति के है और गंभीर प्रकृति के नहीं है के कारण पारित नहीं हुआ है।

महिलाओं के राजनीतिक सशक्तिरण और उनकी सहभागिता के लिए व्यापक अभियान और लोकप्रिय समर्थन के बावजूद, महिलाओं की इस उभरती भूमिका के प्रति पुरुषों का रवैइया कुछ द्वैधवृति का है। सैद्धांतिक रूप से स्वीकारते हुए, वे लोग पितृसत्तात्मक सोच प्रक्रिया और मानसिकता से पिंड छुड़ाने में कठिनाई अनुभव करते हैं। आनुभाविक ज्ञान, शारीरिक शक्ति और जेंडर न्याय से संबंधित बातों पर व्यापक जानकारी के संबध में पुरुष उत्कृष्टता पर दावा करके पुरुष संप्रभुता को बचाए रखने की चिन्ता में प्रायः यह सब कुछ यह उभर कर आता है।

चुनाव के अभियान और उनकी कार्यकारिता के दौरान कुछ हिंसक घटनाएं देखने में आई हैं। पुरुषों द्वारा कुछ महिला अभ्यार्थियों को इस आधार पर कि महिलाओं को केवल घर के काम ही करने चाहिए। अपना नामांकन नही जमा कराने दिया गया था, कुछ मामलों में ग्रामवासियों ने उन्हें पुरुषों के साथ संबंध रखने का आरोप लगाया था और चुनाव में लड़ने या जीतने से उन्हें रोकने की कोशिश की थी।

महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार की अफवाहें फैलाना, और चरित्र हनन और उन्हें परेशान करना काफी आम बात है। अनुसूचित जाति की बहुत सी महिलाओं को अपमानित किया गया और उनके साथ भेदभाव किया गया था, पंचायतों की अध्यक्षता करने की उनकी क्षमता पर विशेष रूप से सवाल उठाए गए और उन्हें अपमानित किया गया था। निर्वाचित हो जाने के बाद भी कुछ महिलाओं को हिंसा का सामना करना

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पड़ा। अशिक्षित महिला सदस्य जब अपना काम कराने के लिए अधिकारीगण के पास आती है, तो वो जो उन्हें चिढ़ाते हैं। निर्वाचित महिलाओं के साथ विशेष रूप से अधिकारी गण, प्रायः बहुत अच्छा महसूस नहीं करते हैं और उन्हें रोकने का प्रयास करते हैं। विरोधी पक्ष के पुरुष सदस्य इनके साथ सांठ–गांठ करके कई बार महिला अध्यक्षों के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव लाते हैं और उन्हें धमकाते हैं। कई महिला प्रधानों ने बताया कि पुरुष महिला को अपने प्रधान के रूप में बर्दाष्त नहीं करते हैं। राजनीतिक पार्टियों द्वारा भी धमकियाँ मिलती है और महिला सदस्यों के साथ निकट संबंधियों अथवा अधिकारियों द्वारा यौन दुर्व्यवहार के उदाहरण भी मिले हैं। अतः, चुनाव ने महिलाओं के लिए पहले जब वे मात्र गृहपत्नियाँ थीं, से ज्यादा समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं।

परन्तु इसके साथ ही बहुत से सकारात्मक बदलाव हुए जैसे कि महिलाओं के द्वारा पर्दा प्रथा (पर्दा/घूंघट) को त्यागना, पुरुषों के साथ बैठना, गतिशील होना हैं, बोलने का अपना अधिकार मांगना और उन पर होने वाले अन्याय के विरुद्ध विद्रोह करना। महिलाओं के आरक्षण को जी जान से समर्थन दिया गया न केवल महिलाओं के द्वारा परंतु बहुत से पुरुषों के द्वारा भी उनका मानना है कि आरक्षण ने महिलाओं को घरों की चार दीवारी से बाहर निकल आने में सहायता दी है, समुदाय में महिलाओं की जागरूकता बढ़ाई है और सामाजिक रुख में बदलाव किए है। महिला होने के नाते बहुत से स्थानों में उनका सम्मान भी किया गया और सभाओं में उनकी बात को सुना गया। महिलाओं की कार्य प्रणाली की कुछ पुरुष प्रशंसा भी करते हैं क्योंकि उन्हें जब महिलाएं बोलती हैं तो कुछ सच्चाई और अर्थ का बोध होता है।

महिलाओं की विकासात्मक आवश्यकताओं और गतिविधियों का प्राथमिकीकरण करने के बारे में सम्पत्ति सम्बन्धी विवादों, रूप में दहेज लेने, घरेलु हिंसा और शराब पीने की आदत के विरुद्ध उनके अधिकारों के लिए लड़ने में महिलाओं की सहायता करने की बात बहुत सी निर्वाचित महिलाएं कहती है। तथापि, बहुत से लोग है जो पर्याप्त राजनीतिक तथा वित्तीय शक्तियों के अभाव पारिवारिक जिम्मेदारियों और भूमिकाओं, पितृसत्तात्मक सामाजिक मानकों और पारिवारिक नियंत्रणों के अभाव में ज्यादा कुछ कर नहीं पाए।

अतः यदि ऐसी सशक्तिकरण प्रक्रिया को अपने तर्कसंगत अंत तक ले जाना है। महिलाओं को न्याय दिलाने के लिए सहायक क्रियाविधियों जैसे सूचना, क्षमता निर्माण कार्यक्रम इत्यादि, के साथ राजनीतिक सशक्तिकरण को आगे और सुदृढ़ किया जाना चाहिए।

ऐसे जेंडर न्याय और जेंडर समानता की गैर मौजूदगी में, आधे से ज्यादा भारतीय राष्ट्र नागरिकता की अवधारणा और अधिकारों से वंचित रह जाऐगा। संविधान, जाति, और यह वर्ग और लिंग पर ध्यान दिए बगैर नागरिकों को जो अधिकार प्रदान करता है वह झूठे रहे जाएंगे। सबसे बड़ी बात, उसके आमुख के रूप में प्रतिबद्धता तथा प्रतिज्ञा, जो आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक न्याय के प्रति प्रतिज्ञाबद्ध है – झूठी सिद्ध होगी, कम से कम महिलाओं के प्रसंग में।

## 16-9 ekuo fodkl vkSj tsaMj U;k;

विकास के विचार की शक्तिशाली आलोचनाएं की गई हैं। आधुनिक औद्योगिकवाद, राष्ट्र–राज्य और वैज्ञानिक विश्व दृष्टिकोण के विचार विकास के विचार जो सबसे नवीनतम था के साथ घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं। यह आलोचना की गई कि उन सभी ने महिलाओं के विरुद्ध काम किया है। यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि उन्होंने असमानताएं बढ़ा दी और महिलाओं को समुदाय या परिवार के संसाधनों पर उनका

पहले जो भी नियंत्रण था, उससे वंचित कर दिया है। उन अधिकारों और शक्तियों को आधुनिक राज्य और उसकी एजेंसियाँ लेने वाले थे। इसी तरह से आलोचना में संकेत किया गया कि भारी औद्योगिक परिसर महिलाओं के हितों के सीधे विरोधी है। यह तर्क दिया गया कि तकनीकी परिसर और प्रौद्योगिकीय दुनियां महिलाओं की प्रकृति और हित की कुछ मूलभूत विशेषताओं के विरुद्ध है। अतः पर्यावरणीय सक्रियतावाद की धारा और नारीवाद की एक धारा ने मिल कर शक्तिशाली आलोचना को जन्म दिया जिसे आर्थिक नारीवाद के नाम से जाना जाने लगा। किस प्रकार विकास महिला विद्रोही बन सकता है, इसके क्लासीकीय दृष्टांत के रूप में कुछ नारीवादी लेखकों ने भारत की हरित क्रांति को विशिष्टता प्रदान की है।

हरित क्रांति के आलोचकों ने बताया कि इसने लाभों के असमान वितरण को जन्म दिया और नव प्रौद्योगिकीयों पर उसके द्वारा जोर देना पुरुषों और महिलाओं के बीच वास्तव में ज्यादा असमानता उत्पन्न कर रहा था। इसका परिणाम एक जीवाणु समूह का भी हुआ जिसका अर्थ कम विविधता और इसलिए बाजार पर निर्भरता है, और इस कारण से महिलाओं के जीवन को पहले से ज्यादा कठिन बनाने का हुआ। इसी प्रकार से एक जीवाणु समूहों के साथ फसलें भी कीटों, सूखे इत्यादि के प्रति ज्यादा संवेदनशील बन गई है। इसलिए न केवल स्थानीय स्तर पर खाद्य सुरक्षा में कमी हुई है परंतु पर्यावरणीय खतरे जैसे कि वर्द्धित लवणता जो लोगों के जीवन को प्रभावित करते हैं भी उत्पन्न हो गए हैं। और इस सब में, महिलाओं के सरोकारों को बड़ा नुक्सान हुआ है।

महिलाएं और बच्चे घरेलु हिंसा के शिकार हैं। हरित क्रांति के क्षेत्र में शराब के उपभोग में वृद्धि हुई है और महिलाओं और बच्चों के विरुद्ध घरेलु हिंसा भी बढ़ी है। भारत में तुलनात्मक रूप से ज्यादा विकसित कुछ राज्यों जैसे कि पंजाब, हरियाणा और गुजरात में कन्या भ्रूण हत्या का व्यापक प्रचलन गंभीर चिन्ता का विषय है।

## 16-10 lkjk’k

जेंडर समता इस बात पर जोर देती है कि सभी मानव चाहे वो पुरुष या महिलाएं हैं अपनी व्यक्तिगत योग्यताओं को विकसित करने और रूढ़िबद्ध धारणाओं, कठोर जेंडर भूमिकाओं और राजनीतिक तथा अन्य पूर्वाग्रहों द्वारा निर्धारित सीमाओं के बिना चुनाव करने में स्वतंत्र हैं। उनके भिन्न व्यवहार और आकांक्षाओं को महत्व मिलना चाहिए और उनका समान रूप से पक्ष लिया जाना चाहिए और उनकी अपनी–अपनी जरूरतों के अनुसार उनके साथ उचित व्यवहार किया जाना चाहिए। इसे प्राप्त करने के लिए जेंडर न्याय की भावना से सामाजिक न्याय महत्वपूर्ण तरीकों माना जाना चाहिए।

महिलाओं की वर्तमान अधीनस्थता, अपरिवर्तनीय जैविक अंतरों से नहीं, परंतु सामाजिक तथा सांस्कृतिक मूल्यों, विचारधाराओं और संस्थाओं जो महिलाओं की भौतिक तथा वैचारिक अधीनस्थता सुनिश्चित करती है से जन्म लेती है।

विकास में, एक वर्ग के रूप में महिलाओं का महत्व समयोपरि बदल रहा है। अब यह समझा जाने लगा है कि विकास के लिए वर्द्धित उत्पादन, वृहदतर समता और सामाजिक प्रगति के लिए महिलाओं को सशक्त करना अनिवार्य है। निर्णयन प्रक्रिया में महिलाओं जैसे हाषियाकृत समूहों की सहभागिता को महत्वपूर्ण माना है। सशक्तिकरण, आत्मविश्वास तथा स्वतंत्र भावना के साथ महिला अन्याय के साथ लड़ सकती है। जेंडर भेदभाव एक समस्या है जो 50% जनसंख्या को प्रभावित करती है। पितृसत्ता केंद्रीय संस्था है जो जेंडर भेदभाव को स्थायी बना रही है। स्त्री के असहायपन तथा संसाधनविहीनता के

पीछे मुख्य कारण पितृसत्ता है। इसके दूसरी ओर, न्यूक्लियर परिवार, जहाँ पुरुष और पत्नि इकट्ठे निवास करते हैं, स्त्री को बहुत अधिक स्वतंत्रता तथा समानता देंगे।

लिंगों की समानता तथा जेंडर न्याय ने निस्संदेह बहुत धीमी प्रगति की है। सहस्त्रों वर्षों से सभी समाजों तथा देशों में पुरुषों के प्रति महिलाओं की अधीनस्थता बिना अपवाद के जारी रही है। इन जुड़वा कारकों और उनके प्रभाव को ज्यादा से ज्यादा पहचाना जा रहा है और अधीनस्थता तथा भेदभाव का मुकाबला करने के उपाय किए जा रहे हैं।

कानून न केवल प्रतिकूल स्थितियों को परंतु लोगों के रवैइये को भी बदलने के लिए उत्प्रेरक के रूप में काम करता है। भारत में, न्यायालयों ने विशेष रूप से सर्वोच्च न्यायालय ने विवाह, अभिरक्षण, भरणपोषण, आवास और सिविल मामलों में उत्तराधिकार के मामलों समेत महिलाओं के अधिकारों और सुरक्षा को प्रभावित करने वाले कानून की प्रत्येक शाखा में संवेदनशीलता प्रदर्शित की है। उन्होंने आपराधिक कार्रवाइयों, जो स्त्रियों के विरुद्ध अपराधों एवं बलात्कार से जुड़ी हैं, में महिलाओं के प्रति अन्यायपूर्ण व्यवहार को समाप्त करने में भी भूमिका अदा की है। परंतु अकेले कानून ज्यादा कुछ नहीं कर सकता है। समाज में वैचारिक परिवर्तन भी उतना ही आवश्यक है जितना कि कानूनी सुधार। समाज के सभी वर्गों को इस बदलाव के लिए काम करना होगा और यहां ही एनजीओ, मीडिया और जनप्रतिनिधियों ने बड़ी भूमिका अदा करनी है।

जेंडर न्याय मानवों के बीच वास्तविक न्याय है जहाँ न पुरुष उत्कृश्ट है और न स्त्री निम्न है। जेंडर न्याय प्रत्येक तथा सभी क्षेत्रों में लिंगों की समानता की कल्पना करता है। फिर भी, यह पुरुषों की तुलना में स्त्रियों के लिए किसी अधिमानी व्यवहार का दावा नहीं करता है। जेंडर न्याय जैविक अंतरों पर आधारित नहीं है। इसका उद्‌देश्य आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सिविल क्षेत्रों में अंतरों को समाप्त करना है।

भेदभावमूलक तथा अपमानजनक परिपाटियों या प्रथाएं समाप्त होने में अपना समय लेती हैं। लिंग समानता और जेंडर न्याय ने बहुत धीमी प्रगति की है। लिंग भेदभाव और जेंडर असमानता का उन्मूलन तथा हमारे समाज में जेंडर न्याय सुनिश्चित करना मुख्य सामाजिक लक्ष्य बने हुए हैं।

मानवाधिकारों और विकास के लिए उत्साह का बढ़ाना चाहिए। शांति, मानवाधिकारों और विकास की कुंजी जेंडर न्याय है।

अब यह सभी सरकारों, अंतरराष्ट्रीय निकायों तथा गैर–सरकारी संगठनों की जिम्मेदारी है कि वो सामाजिक न्याय और सामाजिक विकास के हित में कार्य करें और समाज में स्त्रियों के लिए समानता का वातावरण उत्पन्न करने के लिए गहन रूप से कार्रवाई करें।

## 16-11 'kCnkoyh

(1) **lkekftd U;k; (Social Justice)**% सामाजिक न्याय का व्यापक अर्थ है। यह सामाजिक जीवन के भौतिक तथा नैतिक लाभों दोनों के बंटन का समाविष्ट करता है। यह विकास की प्रगतिशील संप्रत्यय और मॉडल का संकेत करता है।

(2) **mnkj (liberal)**% उदार मॉडल व्यक्तिवाद के द्वारा विकसित हुआ है और यह सामाजिक पद तथा सम्पदा में स्थिर और संरचनात्मक श्रेणीकरणों के विपरीत सामाजिक गतिशीलता और असमानताओं के लचीले पैटर्न के प्रति वचनबद्धता पर आधारित है।

(3) **lektoknh (Socialist)**% न्याय का समाजवादी मॉडल समूहवाद में निहित है और सामाजिक समानता तथा समुदाय के लिए ज्यादा समर्थन प्रदर्शित करता है।

समाजवादियों का मुख्य सरोकार सामान्यतौर पर समाज में विद्यमान व्यवस्था में और विशेष रूप से पूंजीवादी व्यवस्था में कामगारों, कृषकों, गरीबों, बेरोजगारों और निम्न वर्ग के लोगों के साथ किया जा रहा अन्याय रहा है।

(4) **lcvkYVu ¼mikfJroxh;½ (subalterns)½** यह समाज में वो वर्ग है जो जेंडर, आयु, व्यावसाय, वर्ग, जाति, प्रजाति, धर्म, भाषा, संस्कृति आदि के कारण अधीनस्थ स्थिति में कर दिए गए हैं। वे लोग सामाजिक ढांचे में अंतर्जात विभिन्न प्रतिरोधों के कारण अधीनस्थ प्रास्थिति में कर दिए जाते हैं। वे शोषित, दमित तथा सीमान्त या हाशियाकृत समूह होते हैं।

## 16-12 ckèk i'uk dk mÙkj

### Ckkèk i'u 1

1) सामाजिक न्याय के उदार, समाजवादी दृष्टिकोण, उदार दृष्टिकोण व्यक्तिवाद और सामाजिक गतिशीलता के प्रति प्रतिबद्धता पर आधारित है। यह सामाजिक प्रस्थिति और सम्पदा में स्थिर तथा संरचनात्मक श्रेणीकरण के विपरीत असमानताओं का लचीला पैटर्न हे। डी.एन.मैक कॉर्मिक ने सामाजिक न्याय के लिए व्यक्तियों के योगक्षेम को मूलभूत माना है। आर.ए.पिंकर के अनुसार, ''सामाजिक न्याय न केवल समानता की प्रकृति के साथ परंतु उस मानदंड के साथ भी सरोकार रखता है जिसके द्वारा असमानता को न्यायपूर्ण अथवा अन्यायपूर्ण माना जा सकता है।'' डी. मिल्लर तर्क करते हैं कि असमानता अतिविस्तृत है और अनिवार्य बुराई बन जाती है और समाज में बद्दतर व्यक्ति के लिए सामाजिक न्याय आवश्यक है।

जॉन रॉल के उदार–समतावादी न्याय की विशेषता प्रत्येक की समानता तथा योगक्षेम के लिए सरोकार है, विशेष रूप से, समाज के सबसे कम लाभ प्राप्त सदस्य के उन्होंने वितरणात्मक न्याय की मुख्य आवश्यकता के लिए दलील दी है। उन्होंने इस पर जोर दिया कि सभी सामाजिक प्राथमिक वस्तुएं स्वतंत्रता और अवसर, आय और सम्पदा और आत्म सम्मान के आधार समान रूप से वितरित होनी चाहिए, जब तक कि इनमें से किसी या सभी वस्तुओं का असमान वितरण सबसे कम अनुग्रह प्राप्त व्यक्ति के लाभ के लिए है।

इस संदर्भ में इस बारे में अत्याधिक बहस होती है कि स्तरित समाज में न्याय की धारणा को किस प्रकार से समझा जाए। तथापि, न्याय का समाजवादी मॉडल समूहवाद पर आधारित है और सामाजिक समानता तथा समुदाय के लए बृहदतर समर्थन प्रदर्षित करता है। समाजवादियों का मुख्य सरोकार, समाज में सामान्यतौर पर विद्यमान व्यवस्था और विशेष रूप से पूंजीवादी व्यवस्था में कामगारों, किसानों, गरीबों, बेरोजगारों और निम्नतम वर्ग इत्यादि के साथ किए जाने वाला अन्याय है। मार्क्सवादियों के लिए, वर्ग समाजों में न्याय हमेशा वर्ग न्याय, पूंजीवादी के लिए न्याय और उल्टे तौर पर, मजदूरों के लिए अन्याय है। अतः मार्क्सवादी सिर्फ वर्ग विहीन समाज में ही न्याय पाते हैं। उनके लिए, न्याय मात्र न्यायपूर्ण कानून नहीं है, परंतु न्यायसंगत समाज में बनने वाले न्यायसंगत कानून भी है; यह प्रकृति सें मात्र आर्थिक या सामाजिक नहीं, परंतु अपने विस्तार में सामाजिक–आर्थिक भी है। लोकतांत्रिक समाजवादी समाजवादी और लोकतांत्रिक दोनों है, और इसलिए, उनके लिए, न्याय न्यायसंगत व्यवस्था और न्यायसंगत समाज में विद्यमान होता है। लोकतांत्रिक समाजवाद लोकतांत्रिक अधिकारों और सिविल स्वतंत्रताओं और साथ ही नागरिकों के सामाजिक–आर्थिक अधिकारों की व्यवस्था करने की चेष्टा

करता है – निस्संदेह यह कठिन संयोजन है। यदि इसे प्राप्त किया जा सकेगा, तो यह सामाजिक न्याय के लिए आदर्श योजना का काम करेगा।

2) जेंडर न्याय को प्रायः उन उद्धारक परियोजनाओं के संदर्भ में उपयोग किया जाता है जो कानूनी परिवर्तन के जरिये महिलाओं के अधिकारों को बढ़ावा देते हैं, अथवा सामाजिक तथा आर्थिक नीति में महिलाओं के हितों को प्रौन्नत करते हैं। तथापि, इस शब्द को विरले ही ठीक–ठीक परिभाषित किया गया और प्रायः इसे जेंडर समानता, जेंडर समता, स्त्रियों का सशक्तिकरण और स्त्रियों के अधिकारों की धारणाओं के स्थान पर रख कर उपयोग किया जाता हैं। जेंडर न्याय में अद्वितीय तत्व समाविष्ट है जो वर्ग या प्रजाति के संबंध में न्याय से जुड़ी अवधारणाओं से परे जाते हैं, और जो उसकी परिभाषा और अधिनियमन दोनों को जटिल बना देते हैं। परंतु जेंडर न्याय की अर्थ, आयाम और प्रकृति को बड़ी सीमा तक समझने के लिए इसकी तीन धारणाओं का परीक्षण किया जा सकता है।

## 1- gdnkjh vkSj pquko dk :Ik esa tsaMj U;k;

इस दृष्टिकोण की जड़े उदार नारीवादी राजनीतिक विचारधारा में निहित हैं। यह नारीवादी राजनीति की मुख्य्य दुविधा से शुरू होता है, दमित महिलाएं शायद स्वयं जेंडर न्याय के संस्करण का प्रस्ताव न करें जो कि पुरुष के विशेषाधिकार को चुनौती दे क्योंकि उनका समाजीकरण अपनी स्थिति को स्वीकारने में कर दिया गया है। परिवारिक तथा सामाजिक परंपराएं स्वतंत्र रूप से तर्क करने और कार्य करने स्त्रियों की एजेंसी की योग्यता की उनकी क्षमता को सीमित करके, और उनकी अपनी जरूरतों से आगे दूसरों का जरूरतों को रखकर उन्हें अनुग्रहीत करके अक्षम बना सकती है। अपनी खुद की सामाजिक और आर्थिक अधीनस्थता में महिलाओं स्वीकृति की इस दुविधा के प्रत्युत्तर में, नारीवादी राजनीतिक दार्शनिकों ने न्यूनतम आर्थिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक स्थितियों, जिनमें महिलाएं उन सामाजिक व्यवस्थाओं जिनमें वे अपने को पाती है उसे इंकार करने या पुनः समझोता करने के योग्य हो सकेंगी, को लेकर बहस की। अमर्त्य सेन के 'क्षमता' दृष्टिकोण अनुकूलित करते हुए मार्था नुससबॉम ने 'न्यूनतम क्षमताओं' के इस दृष्टिकोण को पूरी तरह से विस्तरित किया है, लोग जो वास्तव में कर सकते हैं और हो सकते हैं 'क्षमताएं' हैं इसके क्रियान्वयन, से जुड़ी राजनीतिक चुनौतियों की समस्या के परे, विशेष रूप से राष्ट्रीय संसाधन रुकावटें दिए हुए होने पर, इस दृष्टिकोण की कई आलोचनाएं हुई। सर्वाधिक गंभीर दूसरे उदार नारीवादी राजनीतिक दार्शनिक, ऐन फिलिप्स ने की, वो दावे से कहती है कि क्षमता दृष्टिकोण के मूल में नव–उदार कार्य सूची है। उसका कहना है कि नस्सबॉम का क्षमता दृष्टिकोण न्यूनतम अनिवार्य आवश्यकताओं पर फोकस करता है, इसलिए यह न सिर्फ महिलाओं और पुरुषों के बीच, परंतु राष्ट्रों के अंदर और राष्ट्रों के बीच दोनों सामजिक समूहों के बीच भी मानवीय समानता के लिए संघर्ष की गहन चुनौतियों से पीछे हट जाता है। वास्तव में, क्षमता दृष्टिकोण का भौतिक फोकस अंतिम स्थिति की सम्पूर्ण असमानताओं को संबोधित नहीं करता है और मूलभूत हकदारियों के समान अधिकारों से पीछे हट जाता है।

## 2- HksnHkko dh xSj&ekStwnxh dk :Ik esa tsaMj U;k;

जेंडर न्याय के सिद्धांतों को स्थापित करने के सर्वाधिक प्रयास, औपचारिक 1999 के स्त्री विरुद्ध सर्वरूपी भेदभाव उन्मूलन अभिसमय में मिलते हैं, जिसने जेंडर आधारित भेदभाव की गैर–मौजूदगी को जेंडर न्याय का सूचक बना दिया है। इस दृष्टिकोण को 'नकारात्मक स्वतंत्रताएं' दृष्टिकोण का नाम दिया जा सकता है –

यह अभिसमय भेदभाव समाप्त करने के लिए राज्यों को अधिकारिक रूप से रोकता है।

### 3. l dkjkRed vfèkdkjk d :Ik e tMj U;k;

जेंडर न्याय की यह सकारात्मक धारणा विकास विचारधारा के समकालीन 'अधिकार आधारित दृष्टिकोण का हिस्सा है। अधिकार – आधारित दृष्टिकोण 1990 के दशक के दौरान जब विश्व भर में लोकतांत्रिकीकरण की शताब्दी लम्बी लहर का अंत हुआ, विकसित हुए और वो, आर्थिक विकास हेतु राजनीतिक तथा विधिक संस्थाओं के महत्व की समझ पर आधारित हैं। वो, विशेष रूप से, व्यक्ति की स्पष्ट अभिव्यक्ति और सामूहिक वरीयताओं (विशिष्ट भावनाएं/'वॉयस') और राज्यों की प्रतिक्रियाओं के बीच संबंध पर जोर देते हैं, और वो उन मूलभूत अधिकारों को स्थापित करने की चेष्टा करते हैं जो कि नागरिक कानूनी तौर पर राज्य से मांग सकते हैं। वो इस स्वीकृति को निरुपित करते हैं कि सत्ता संबंध नीतियों के परिणाम को प्रभावित करते हैं, और कि मानव विकास को आगे बढ़ाने के लिए विधि का शासन और मूलभूत उत्तरादायित्व की जरूरत है – ताकि लोग संसाधनों और कौशलों में अपनी मूलभूत सम्पन्नता का अधिकतम लाभ उठा सकें। जेंडर न्याय परियोजनाओं के लिए राजनीतिक और अभिशासन की स्वीकृति बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसे महिलाओं और पुरुषों के बीच संबंधों पर इसका प्रयोग किया जा सकता है – स्वीकृति कि सत्ता असंतुलन महिलाओं को अपने हितों को प्रोन्नत करने से रोक सकते हैं, और ये स्वीकृति कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं को स्त्रियों के प्रति उत्तरदायी या जवाबदेय बनाया जाना चाहिए – इसके लिए संस्थात्मक पितृसत्तात्मक सत्ता की प्रणालियों को उखाड़ फेंकने है।

जेंडर समानता के दावों ने आर्थिक अधिकारों की तुलना में राजनीतिक तथा नागरिक अधिकारों के क्षेत्र में अधिक जड़े जमाई हैं – आर्थिक अधिकारों को नव–उदार वातावरण में कम समर्थन मिला है। राजनीतिक और नागरिक अधिकारों को 'सम्पूर्ण' (या निरपेक्ष) और अपराक्रम्य के रूप में देखा जाने लगा है। जबकि आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों, को क्योंकि ये संसाधन–बद्ध राज्यों को स्थूल हकदारियाँ प्रदान करने के लिए बाध्य कर सकते है, 'सापेक्ष' और सांस्कृतिक रूप से विशिष्ट सूत्रिता किया जाने लगा, जिन्हें आहिस्ता–आहिस्ता प्राप्त करना होगा। अधिकार–आधारित रूपरेखा की कई आधारों पर आलोचना की गई है, जैसे कि, पश्चिमी सांस्कृतिक साम्राज्यवाद के औजार होने के रूप में, और संविधानवाद और राजनीतिक प्रजातंत्र के विशिष्ट रूप से पश्चिमी उदार गणतंत्रवादी दृष्टिकोण होने पर। कुछ आलोचकों का यह भी तात्पर्य हैं कि ये पूंजीवादी बाजारों के विस्तार का हिस्सा है जिसमें मानवाधिकार करने के लिए उन शासन प्रणालियों के सुधारों के लिए प्रवेश बिंदु है जिन्हें वैश्विक बाजार में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं का समेकन करने के लिए तैयार किया गया है।

## 16-13 dN mi;kxh iLrd

1. अहमद, इम्तियाज एवं शषिभूशण, उपाध्याय (सं.) (2007), 'दलित असर्षन इन सोसाइटी, हिस्टरी एंड लिटरेचर, नई दिल्ली : देशकाल प्रकाशन

2. भट्टाचार्य जी, अजीत (सं.) (1997), 'सोशल जस्टिस एंड कंस्टिट्यूशन', दिल्ली : इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड सोसाइटी

3. भंडारी मुरलीधर (सं.) (1999) 'दी वर्ल्ड ऑफ जेंडर जस्टिस', नई दिल्ली : हर आनन्द प्रकाशन प्रा. लि.

4. मुखोपाध्याय, मैत्री एवं नवषरण सिंह (सं.) (2007), 'जेंडर जस्टिस, सिटिजनषिप एंड डेवलेपमेंट', नई दिल्ली : जुबान, काली फॉर वूमेन का मुदणांक

5. मिल्लर, डी. (1999) 'प्रिंसीपल्स ऑफ सोशल जस्टिस', केम्ब्रिज एम.ए. : हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस

6. मैककॉर्मिक डी.एन. (1982), 'जस्टिस एन अन ओरिजिनल पोजिशन', ऑक्सफोर्ड : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस

7. पिंकर, आर.ए. (1974), 'सोशल थ्योरी एंड सोशल पॉलिसी', लंदन : हीमैन

8. राल्स, जॉन, (1972), 'ए थ्योरी ऑफ जस्टिस', लंदन : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस

## 16-14 cks/k iz'u vH;kl ,oa euu gsrq

1. सामाजिक तथा जेंडर न्याय के भिन्न दृष्टिकोणों का वर्णन करें।

2. सामाजिक न्याय तथा जेंडर न्याय के संबंध में भारतीय स्थिति को स्पष्ट करें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 17 सामाजिक न्याय पर वैश्वीकरण का नकारात्मक प्रभाव

## इकाई की रूपरेखा

17.1 प्रस्तावना

17.2 उद्देश्य

17.3 वैश्वीकरण और उसका प्रभाव

17.3.1 सैप (एस.ए.पी.) का प्रभाव

17.4 विकृत आर्थिक स्थिति और महिलाओं के विरुद्ध बढ़ रही साम्प्रदायिक हिंसा

- 17.4.1 वैश्वीकरण तथा 1995–2006 के दौरान भारत में महिलाओं के आंदोलन
- 17.4.2 आर्थिक वैश्वीकरण के परिवर्तक/विकल्प
- 17.4.3 वैश्विक तथा स्थानीय स्तर के पक्ष समर्थन के महत्वपूर्ण मुद्दे
- 17.4.4 वैश्विक शासन के लिए निर्णयन

17.5 जल प्रतिमान : मुद्दे तथा विवाद

17.6 वैश्वीकरण और कृषि

- 17.6.1 कृषि पर समझौता
- 17.6.2 हाल ही की नीतिगत पहले/प्रयास
- 17.6.3 कृषि पर विश्व व्यापार संगठन (WTO) समझौते का प्रभाव
- 17.6.4 हाँगकाँग मंत्री स्तरीय सभा

17.7 खाद्य सुरक्षा

- 17.7.1 खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना
- 17.7.2 सुधार के उपाय तथा सुधार के उपायों के लिए बाहरी अभियान

17.8 सारांश

17.9 शब्दावली

17.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

17.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

17.12 बोध प्रश्न (मनन एवं अभ्यास हेतु)

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 17.1 प्रस्तावना

वैश्वीकरण का प्राथमिक अर्थ आर्थिक लेनदेनों और राष्ट्र राज्यों की राजनीतिक सीमाओं के पार आर्थिक गतिविधियों के संगठन का विस्तार है। अतः यह सिर्फ बाजार अर्थव्यवस्था से ही नहीं, परन्तु राजनीतिक अर्थव्यवस्था से भी संबंधित मामला है (नायर, 2002)। वैश्वीकरण, कुशलता सुनिश्चित करने के लिए सीमा और परिसीमाओं को समाप्त करने का समर्थन करता है। निजीकरण, उदारीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रिया विश्व की अर्थव्यवस्था में नवीन खिलाड़ियों को केन्द्रीय मंच पर ले आई है। इस खेल में आर्थिक खिलाड़ियों के दो मुख्य समूह हैं : पारराष्ट्रीय कॉरपोरेशन जो विश्व अर्थव्यवस्था

में निवेश, उत्पादन और कारोबार पर प्रभुत्व जमाए हुए है, और अंतरराष्ट्रीय बैंक एवं वित्तीय मध्यस्थ जिनका वित्त की दुनियाँ पर नियन्त्रण हैं। इसने राष्ट्र राज्यों को कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्रों में युद्धनीतिक रूप से पीछे हटने के लिए प्रेरित किया है। इसका अर्थ है राष्ट्र राज्य राजनीतिक खिलाड़ी बने हुए हैं परंतु अब मुख्य आर्थिक खिलाड़ी बिल्कुल नहीं रहे। इसे समस्या समझा जाता है क्योंकि सरकारें अपने लोगों के लिए उत्तरदायी होती हैं जबकि बाजार नहीं (नायर, 2002)। वैश्वीकरण की अवधारण को जिसे–डब्ल्यू.टी.ओ. और उसके समर्थक संगठनों द्वारा बढ़ावा दिया गया जाने, मिश्रित वरदान कही जाती है। कुछ कहते हैं यह वरदान है और कुछ कहते हैं कि ये शाप है। यह वरदान है क्योंकि यह निजी वित्त को सार्वजनिक क्षेत्र में लाता है, कुशलता और उत्पादन में बढ़ोतरी करता है, उपभोक्ताओं को निम्नतम संभावित कीमत पर अच्छी गुणवत्ता के उत्पाद पाने के योग्य बनाता है, रोज़गार के नवीन अवसरों को जन्म देता है जो फिर अधिक आय एवं जीवन जीने के बेहतर स्तरों की ओर प्रवृत्त करता है। यह शाप है क्योंकि ज्यादा गरीब देशों में जनसंख्या का बड़ा अनुपात वैश्वीकरण की प्रक्रिया द्वारा हाशिया कृत बना रहता है (भगवती, 2004)। ऐसे अपवर्जन या सीमान्तीकरण के सामाजिक परिणाम हुए है, पर्यावरणीय विनाश हुआ और सर्व सामान्य सम्पत्ति संसाधनों की अवनति हुई। यह व्यापक राय बनी हुई है कि वैश्वीकरण का विषय विभाजन है और जो अवधारणाएं विश्व में फैली है वे विवादास्पद हैं (स्टिग्लिहज, 2002)। इस इकाई में हम महिलाओं और कुछ चुनिंदा क्षेत्रों पर वैश्वीकरण के नकारात्मक प्रभावों की चर्चा करेंगे।

## 17-2 mnn’;

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप सक्षम होंने चाहिए :

- वैश्वीकरण की अवधारणा की व्याख्या करने में;
- वैश्वीकरण की प्रक्रिया को स्पष्ट करने में; और
- महिलाओं तथा कुछ चुनिन्दा क्षेत्रों पर वैश्वीकरण के परिणामों का सोदाहरण विश्लेषण करने में।

## 17-3 o’ohdj.k vkj mldk iHkko

भारत में वर्ष 1991 में राज्य एवं केन्द्र सरकारों की नीतियों के द्वारा वैश्वीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। जब नव आर्थिक नीति प्रारम्भ हुई थी। कृषि श्रमिक, मछुआरे, ग्रामीण शिल्पी एवं महिलाएं सर्वाधिक बुरी तरह से प्रभावित हुए। मूलभूत सेवाएं जैसे चिकित्सा, जल आपूर्ति तथा स्वच्छता सेवाएं लागत आधारित हो रही हैं और उपयोक्ताओं को उनके द्वारा दी गई कीमत के आधार पर प्रदान की जाती हैं। प्राकृतिक संसाधन, जो गरीबों का जीवन आधार हैं, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के द्वारा विपणन योग्य वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए शोषित किए जा रहे हैं। जल को बोतल बंद किया जा रहा है, रेत उठाई जा रही है और कंपनियों के द्वारा नीले धातु का उत्खनन किया जा रहा है। प्राकृतिक संसाधनों के इस प्रकार के शोषण के विरुद्ध स्थानीय स्तर पर समुदाय छुट–पुट लड़ाइयां लड़ रहे हैं। पंचायत नेता समुदायों के समर्थन के साथ इस प्रकार के शोषण के विरुद्ध व्यापक लड़ाई लड़ रहे हैं। तटीय क्षेत्रों में, झींगी (एक प्रकार की मछली) की खेती बड़े पैमाने पर की जा रही है, जो प्राकृतिक संसाधनों का क्षय कर रही है, और जिस कारण कई हजार मछुआरे एवं कृषि श्रमिकों ने अपनी जीविका खो दी है। वे लोग इन नवीन प्रयासों के विरुद्ध लड़ रहे हैं क्योंकि ये उनके जीवन तथा जीविका की सुरक्षा को प्रभावित करते हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

तमिलनाडु के नागपट्टिनम जिले में वंदुवंचेरी ग्राम पंचायत क्षेत्र से जब सिलिकोन मृदा को उठाया गया जो समुदाय के समर्थन के साथ पंचायत ने इसे रोक दिया था। यह मामला अब न्यायालय में है। खनिज जल को बोतलबंद करने के लिए जब तमिलनाडु में शिवगंगा से जल लिया जाने लगा तो स्थानीय लोगों के द्वार इसे रोक दिया गया था। जिन्होंने कहा कि जल वस्तु नहीं है बल्कि यह लोगों की हकदारी है और खनिज जल कंपनी को लाभ कमाने के लिए उसे बाजार की वस्तु बनाने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। जब राज्य सरकार ने खादी एवं हथकरघा उत्पादों के लिए आर्थिक सहायता बंद कर दी तो बुनकरों के रोजगार अवसर समाप्त हो गये और परिणामस्वरूप, वे लोग रोजगार की खोज में भिन्न–भिन्न स्थानों को प्रवजन (या देशान्तरण) करने लगे।

अतः वैश्वीकरण की प्रक्रियाओं ने गाँवों में लोगों की जीविका सुरक्षा को जो तबाह किया है उसके कारण जो आपदाग्रस्त स्थिति उत्पन्न हुई है उससे तबाही की गणना की जा सकती है। अकुशल मजदूर जो निर्माण उद्योग और सड़क परियोजनाओं में इस्तेमाल किये जा रहे थे निकाल दिए गए हैं क्योंकि यह गतिविधियाँ पूर्णत्या यान्त्रिक एवं प्रौद्योगिकी चालित हो गई हैं। जब सुधार गतिविधियाँ प्रारम्भ की गई थी, तो छोटे किसानों द्वारा बिजली उपभोग के लिए आर्थिक सहायता में कटौती कर दी गई, और परिणामस्वरूप, छोटे किसानों को अपनी खेतों की गतिविधियों को छोड़ देना पड़ा।

वैश्वीकरण समाज में केंद्रीय एवं राज्य सरकारों दोनों की नीतियों और कार्यक्रमों के द्वारा कार्य करता है। इस तथ्य के साथ हमें एक स्पष्ट बात यह समझनी चाहिए कि वैश्वीकरण ने सरकारों की प्रतिक्रिया करने की योग्यता को सीमित कर दिया है (स्टिग्लिट्ज़, 2006)। वैश्वीकरण का प्रभाव जमीनी स्तर पर और विशेष रूप से हाशिया, समाज के कमजोर एवं गरीब तबके के लोगों के द्वारा महसूस किया जायेगा। इस प्रभाव को क्षेत्र में व्यष्टि कार्रवाई द्वारा और नीतियों एवं निर्णयों के द्वारा समष्टि कार्रवाई के माध्यम से कम करना होगा। जमीनी स्तर के (या तृणमूल) नेता जो स्थानीय मामलों का संचालन करते हैं उन्हें वैश्वीकरण के फलितार्थों से जागरूक होना होगा और इस कारण उनका संवेदीकरण किया जाना चाहिये।

वैश्वीकरण, अर्थव्यवस्था के हाशिये पर लाखों गरीब महिलाओं और बाल मजदूरों की पीठ पर सवार होकर आगे बढ़ रहा है। संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम ने कामकाजी महिलाओं को असंगठित क्षेत्र में आने के लिए विवश कर दिया है और उन्हें उनके अधिकारों से वंचित कर दिया है।

ऋण के बढ़ते भार ने भुगतान संतुलन के संकट की ओर प्रवृत्त किया है और इसकी प्रतिक्रिया में भारत सरकार ने 1990 के दशक में संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम (Structural Adjustment Programme SAP) या सैप प्रारम्भ किया। इसमें समाविष्ट हैं – सार्वजनिक निवेश में कमी, अवमूल्यन, खाद्य एवं उर्वरक आर्थिक सहायता में कटौती, सार्वजनिक वितरण प्रणाली को विखंडित करना, सामाजिक क्षेत्र के लिए बजट कम करना, पूंजी गहन एवं उच्च प्रौद्योगिकी उत्पादन को बढ़ावा देना और बैंक दरें तथा बीमा शुल्क को बढ़ाना। सैप नीतियों का लक्ष्य अवमूल्यन, विनियमन, अपस्फीती और विश्वराष्ट्रीयकरण की सहायता से पूंजी, ऊर्जा और आयात–गहन, वृद्धि है। मुख्यधारा के अर्थशास्त्री इन प्रक्रियाओं को ''आर्थिक सुधार'' कहते हैं। वैश्वीकरण का यह भी अर्थ है कि श्रम को नूतन अंतरराष्ट्रीय विभाजन का उदय हुआ है। आर्थिक वैश्वीकरण, तमाम देशों में गहन आर्थिक पुनर्समायोजन तथा नव–उदार आर्थक नीतियों ने उत्पादन की अनौपचारिक और विकेन्द्रीय प्रकियाओं की ओर प्रवृत्त किया है जिसने औद्योगिक एवं विकासशील देशों में श्रम बाजारों और कार्य की दुनिया को रूपान्तरित कर दिया है।

इस प्रक्रिया में, मजदूरों को दी जाने वाली सामाजिक सुरक्षा तथा वैधानिक संरक्षण विखंडित हो गए हैं।

### 17.3.1 सैप (एस.ए.पी.) का प्रभाव

अध्ययनों ने दर्शाया है कि गरीबी का भार पुरुषों की तुलना में महिलाओं पर ज्यादा गहन पड़ता है। महिलाओं और पुरुषों के बीच आय एवं उपभोग स्तरों में असमानता को प्रलेखित भी किया गया है। भारत में कम से कम 11% परिवार एकमात्र महिलाओं की आय पर चलते हैं। दूसरे शब्दों में वे सब ''महिला–प्रधान परिवार'' (FHH) – ऐसे परिवार जो विधवाओं, एकल महिलाओं, परित्यक्त या तलाकषुदा महिलाओं द्वारा चलाए जा रहे हैं। एफ.एच.एच. आमतौर पर गरीबों में सबसे गरीब होते हैं। इन परिवारों पर नव आर्थिक नीतियों जो घटे हुए पी.डी.एस. (सार्वजनिक वितरण प्रणाली) कोटा, स्वास्थ्य देखरेख सुविधाओं तथा शैक्षिक सुविधाओं में कटोतियों में तबदील हो जाती हैं। मिश्रित प्रभाव उन्हें पूर्णतया नष्ट करने का होता है। इन परिवारों के बच्चे – पोष्टिकता या पोषणिक कमी, अपर्याप्त प्राथमिक स्वास्थय देखरेख सुविधाएं, और शिक्षा के क्षेत्र के लिए परिव्यय में कमी से ज्यादा हानि उठाते हैं। महिलाओं के लिए राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना (या NPP) (1998–2000) में, एफ.एच.एच. को राजकीय सहायता के लिए महिला समूहों की मांगों के प्रति सरकार ने काफी सकारात्मक प्रतिक्रिया की। परंतु सैप वास्तव में एन. पी.पी. के उद्देश्यों के विरुद्ध कार्य करता हैं।

सैप के स्फीतीकारी प्रभाव और वेतन प्रदत्त कार्य में कमी से परिवार की कय शक्ति कम होती है, जो, बदले में, महिलाओं के अप्रदत्त श्रम में वृद्धि करती है। उदाहरण के लिए, सस्ता भोजन खरीदने के लिए, चीजों के प्रापण, सफाई एवं तैयारी के लिए ज्यादा समय की जरूरत होती है। खाना पकाने, सफाई करने और देखरेख तथा अन्य छुटपुट कार्य जो परिवार के संसाधनों (जैसे ईंधन, चारा, जल का संग्रह, पशु एवं मुर्गी पालन की देखभाल, और कृषिगत वस्तुओं को संसाधित करना) को बढ़ाते हैं, उनमें महिलाओं के अप्रदत्त श्रम को सैप के द्वारा लचीला समझा जाता है।

सैप एवं स्थिरीकरण नीतियों के अधिरोपण के जवाब में, राष्ट्रीय सीमाओं के पार महिला आंदोलनों ने नव उदार विकास प्रतिमान को चुनौती दी है। न्यायसंगत मजदूरी, व्यावसायिक सुरक्षा और साामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित करने वाले सार्वभौमिक श्रम मानदंड महिलाओं के आंदोलन का केंद्रीय मुद्दा बनना चाहिए। सैप ने कामकाजी महिलाओं को असंगठित क्षेत्र में आने के लिए, विवश कर दिया है और उन्हें उनके अधिकारों से वंचित कर दिया है। महिलाएं संरक्षणात्मक कानूनों जैसे कि प्रसूति प्रासुविधा अधिनियम (1961), कर्मचारी राज्य बीमा योजना, कारखाना अधिनियम (1948), समान पारितोषिक/परिश्रमिक अधिनियम (1976), बाम्बे दुकाने एवं उपक्रम अधिनियम (1984), बागान श्रम अधिनियम और बाल श्रम (प्रतिषेध एवं विनियमन) अधिनियम, (1976) के बाहर पड़ जाती है।

बहु राष्ट्रीय कंपनियों ने बहुत पहले से ही समझ लिया था कि मजदूरी का बिल घटाने तथा लाभों में वृद्धि करने का सर्वोत्तम ढंग उत्पादन प्रक्रिया के कुछ भागों को ज्यादा गरीब देशों जैसे भारत, श्रीलंका, बांग्लादेश, इंडोनेषिया, फिलीपाइन्स, थाइलैंड इत्यादि को दे देना चाहिए। एशियाई महिलाओं के सस्ता श्रम को लाभ बढ़ाने का सर्वाधिक लाभकारी तरीका समझा जाता है। विकासशील देशों में महिलाएं लचीली श्रम शक्ति है। उनका ज्यादा आसानी से मिल जाने वाला श्रम, निर्यात उद्योगों जैसे कि इलैक्ट्रोनिक्स, वस्त्र, खेलकूद की वस्तुएं, खाद्य पदार्थों की प्रोसिसिंग, खिलौने, कृषि उद्योग इत्यादि में महिलाओं के प्रवेश का आधार है। महिलाएं किसी भी दिए गए कार्य को, चाहे वह कितना भी नीरस, श्रमशील शारीरिक रूप से नुकसानदेय अथवा बहुत कम पारिश्रमिकदत्त

हो, बिना शिकायत किये करने के लिए विवश होती हैं। श्रम के लिए, सामाजिक रूप से अध्यारोपित अनुचित मांग की संकुचित सीमाओं के अंदर काम की खोज कर रही बड़ी संख्या में गरीब महिलाए श्रम के अंतरराष्ट्रीय विभाजन में आदर्श कर्मकार बन गई हैं।

स्थिर/संगठित श्रमशक्ति (बल) से लचीले कार्यबल में अंतरण का अर्थ महिलाओं को अंशकालिक काम के लिए भर्ती करना और बेहतर प्रदत्त पुरुष मजदूरों को सस्ते स्त्री श्रम के द्वारा प्रतिस्थापन करना है। नव आर्थिक नीतियां उन कॉरपोरेट प्रतिष्ठानों को राजकीय सहायता प्रदान करती हैं जो शहरों की अपनी बड़ी इकाइयों को बंद कर रहे हैं और उन सहायक इकाइयों का प्रयोग कर रहे हैं जो स्त्रियों एवं लड़कियों को कार्यपरक मजदूरी (या उजरती मजदूरी) पर नियोजित करती हैं। अपराध, उपद्रव, विस्थापन और नये स्थान में आवास में वृद्धि के कारण समुदाय में बढ़ रही असुरक्षा के संदर्भ में स्त्रियों और लड़कियों द्वारा गृह–आधारित कार्य का वैधीकरण हो जाता है। उप–संविदाकरण, गृह–आधारित उत्पादन, पारिवारिक श्रम व्यवस्था, सभी आम या सामान्य बन गये हैं। इसे "क्षमता" और "उत्पादकता" में वृद्धि कहा जा रहा है।

विनिर्माण उद्योग (वस्त्र उद्योग प्रत्यक्ष उदाहरण है) में शहरी कर्मकार वर्ग की महिलाओं के अनियत (अथवा बदली) रोजगार ने, हजारों महिलाओं को समानान्तर छुटपुट कारोबार की गतिविधियों (असंगठित क्षेत्र के व्यावसाय के रूप में जानी जाती हैं) के द्वारा जीविका निर्वाह के लिए विवश कर दिया है।

सार्वजनिक क्षेत्र में स्थायी स्टाफ को पदच्युत करना (या नौकरी से निकाल देना) सरकार कठिन पाती है क्योंकि वो संगठित, मुखर एवं दृश्यमान होते हैं। स्त्रियों के लिए अंश–कालिक कार्य के मुद्दे पर सत्याभासी बहस मजदूरों के जेंडर के आधार पर खंडीकरण के लिए औचित्य पैदा करता है। जो लोग इसके पक्ष में हैं यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि कामकाजी महिलाएं घरेलु कर्तव्यों और पारिश्रमिक दत्त दफ्तरी का काम का भार उठाती है, इसलिए काम के घंटों में कमी उन्हें कुछ राहत देगी। यह महिलाओं को पदोन्नतियों और जिम्मेदार नियुक्तियों से वंचित करता है और उन्हें अनुपूरक अर्जक (कमाऊ) प्रक्षेपित करके उनके विरुद्ध पक्षपात करता है। इसके अतिरिक्त, प्रायः कार्य का सर्वाधिक मेहनती भाग कार्यस्थल से आना और जाना है, और व्यक्ति चाहे अंश–कालिक या पूर्णकालिक कार्य करता है, समय तथा ऊर्जा की वही मात्रा आने जाने पर खर्च होती है।

महिलाओं के लिए अंश–कालिक कार्य के पक्ष में दिए जाने वाला तर्क परिवार में मौजूद जेंडर–आधारित श्रम विभाजन पर प्रश्न नहीं उठाता है। वह बच्चों की देखरेख और गृहकार्य का भार व्यष्टिक स्त्री पर डाल देता है। पारिवारिक कार्य के लिए राज्य से सहायता की लम्बे समय से मांग को भी नकार दिया जाता है। भारत में महिलाओं को आन्दोलन ने संकेत किया है कि महिलाओं के कन्धे पर दोहरे भार को कम करने के तरीकों में, सस्ती एवं सुरक्षित खाने–पीने की सुविधाएं बच्चों की देखरेख के केन्द्र जो बच्चों के लिए अभिरक्षण देखरेख एवं विकासात्मक साधन दोनों प्रदान करें तथा बेहतर परिवहन सुविधाओं प्रावधान को समाविष्ट किया जा सकता है।

## 17-4 fcxM+ jgh vkfFkZd fLFkfr vkSj efgykvksa ds fo#) c<+ jgh lEiznkf;d fgalk

कोई भी मूल तत्ववादी प्रचार जो व्यक्तित्व के साथ सरोकार रखता है महिलाओं जो संस्कृति एवं परम्परा का भंडार मानी गई हैं पर कठोर आदर्श थोपने के लिए जेंडर के

प्रश्न का उपयोगी करता है। ये आदर्श या मानक अपने को निम्नलिखित में प्रकट करते हैं :

1) पुत्र – वरीयता और स्त्रीलिंगी भ्रूण हत्या (हिन्दु धर्म ग्रंथों में उद्धत ''परमेष्वर करें तुम 100 पुत्रों की माँ बनो'')। (पत्नि से प्रश्न पूछे जाते हैं –''रामायण या महाभारत के क्या किसी हीरो की पुत्री हुई? यह दर्शाता है कि बेटियाँ अषुभ होती हैं'')।

2) सती (विधवा को जलाना) का महिमागान – संपूर्ण भारत में हजारों सती मंदिर बने हुए हैं और ग्लोबल एसोसिएशन फॉर ग्लोरीफिकेशन ऑफ सती का प्रधान कार्यालय षिकागो (यूएसए) में स्थित है।

3) विधवाओं की संदिग्ध जादूगरी की तलाश – क्योंकि उन्हें अषुभ समझा जाता है, पोशाक संहिता, सामान्य आचरण और आदर्श स्त्री जो मूल तत्ववादी कार्यसूची द्वारा आरोपित पितृसत्तात्मक मानकों को विनम्रता से स्वीकार कर लेती है की सामाजिक निमिर्ति। पिछले कुंभ मेले में, 60000 महिला भक्तों का उनको भाइयों, बेटो और रिश्तेदारों के द्वारा परित्याग किया गया था। इलाहाबाद पुलिस ने उन्हें उनके अपने–अपने परिवारों तक पहुँचाने की भरसक कोशिश की परंतु परिवार के सदस्यों ने उन्हें पहचानने से इंकार कर दिया। सरकार ने अब तीर्थस्थान केंद्रों पर परित्यक्त विधवाओं और मुश्किल परिस्थितियों में महिलाओं के लिए विशेष बजटीय प्रावधान की व्यवस्था की है।

4) निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों में स्त्रियों के विरुद्ध हिंसा बृहद् रूप से बढ़ गई है। सैप (मेनस्ट्रीम अर्थशास्त्री इसे 'आर्थिक सुधार' कहते हैं) घरेलु तथा साम्प्रदायिक/जातिगत हिंसा के रूप में प्रकट होता है।

### 17-4-1 oS'ohdj.k rFkk 1995&2006 ds nkSjku Hkkjr esa efgykvksa dk vkUnksyu

महिलाओं की हकदारी की सुरक्षा करने वाली एनजीओ, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय, आर्थिक और वाणिज्यिक संस्थानों, नामतः, विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष, विश्व व्यापार संगठन और आर्थिक सहयोग विकास संगठनों को आर्थिक वैश्वीकरण की मौजूदा सशर्तों या अनुबंधों और नियमों को हटाने के लिए राजी कराने की कोशिश कर रहे हैं। और स्वयं संपूर्ण विश्व में पितृसत्तात्मक वर्ग प्रणाली के हितों को खुल्लमखुल्ला अथवा छिपा कर, ढ़ावा दे रहे हैं, और टी.एन.सीस एवं एम.एन.सीस के हितों की रक्षा कर रहे हैं, और अनियन्त्रित वस्तुकरण थोप रहे हैं। इस प्रकार से आर्थिक, वित्तीय और राजनीतिक शक्ति का कुछ के हाथों में केंद्रीयकरण एवं एकत्रीकरण होता जा रहा है।

क्योंकि हमारे देश में आर्थिक तथा विनिर्माण स्थितियों में बदलाव आ रहा है, केन्द्र तथा परिधि के बीच आज धुंधला विभाजन है। वैश्वीकरण के कारण संरचनात्मक परिवर्तन आ गए हैं जो जेंडर को प्रभावित कर रहे हैं। रोजगार के अलावा यह चिरस्थायी विकास को प्रभावित करता है, और राज्य को सामाजिक क्षेत्र के प्रति प्रतिबद्धताओं से हट जाने के लिए प्रवृत्त करता है। इससे महिलाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। विश्व व्यापार संगठन (WTO), करारोपण पैटर्न और उपयोक्ता फीस की अवधारणा महिलाओं को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर रहे हैं (विभूति पटेल)। द्वितीय राष्ट्रीय श्रम आयोग, जहाँ तक कामकाजी (कर्मकार) वर्ग का सरोकार है, नव–उदार कार्य सूची को आगे बढ़ा रहा है, यद्यपि अनौपचारिक क्षेत्र और बाल–श्रम के क्षेत्र में महिलाओं पर उसके पृथक अध्याय हैं।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 17.4.2 आर्थिक वैश्वीकरण का विकल्प

सामाजिक आंदोलनों से वैश्वीकरण के प्रति दो प्रतिक्रियाएं हुई हैं :

अ) जेंडर जागरूकता निर्मित करके (G- ग्लोबलाइज़ेशन या वैश्वीकरण) का मानवीयकरण करो। वैश्विक रूप से और साथ ही साथ स्थानीय रूप से सोचो और करो। वितरणात्मक न्याय तथा विश्व शांति स्थापित करने के लिए बहुमुखी व्यापार तथा कूटनीतिक संबंधों को बढ़ावा दो।

ब) स्थानीय विकल्प निर्मित और WTO को छोड़ दो। उदाहरण स्वरूप सामाजिक आंदोलनों ने केवल स्थानीय मिट्टी में ही जड़ें जमाई है।

हमें दोनों ही प्रवृत्तियों के साथ काम करना चाहिए, क्योंकि दोनों के अंतिम लक्ष्य एक समान हैं – न्यायसंगत, औचित्यिपूर्ण एवं जिम्मेदार समाज के लिए सामाजिक रूपान्तरण। पार राष्ट्रीय कॉरपोरेशन और बहु राष्ट्रीय कॉरपोरेशन द्वारा चालित G के विरुद्ध हाल ही में आयोजित एशिया सोशल फोरम के दौरान महिला अधिकार संगठन तथा सोशल एक्शन ग्रुप्स ने सर्वाधिक ऊंची आवाज उठाई थी।

वर्ल्ड सोशल फोरम के जरिये महिलाएं न्याय संगत, चिरस्थायी एवं जिम्मेदार कारोबार के लिए उन हजारों महिलाओं तक पहुँचने की कोशिश कर रही हैं जो कड़ा परिश्रम कर रहे गरीबों के सरोकारों या मामलों के लिए आवाज उठा रही हैं। उन्होंने यह भी मांग की है कि सभी कोशिशें सिविल सोसाइटी ग्रुप्स, गैर सरकारी संगठनों तथा सरकारों द्वारा की जानी चाहिए जिससे कि उनके बजट का महत्वपूर्ण भाग स्वास्थ्य, शिक्षा एवं रोजगार कार्यक्रमों की तरफ किया जा सके (वूमेनस ग्लोबल सेंटर फॉर ह्यूमेनिटी)।

## 17.4.3 वैश्विक तथा स्थानीय स्तर की पैरवी (या पक्ष समर्थन) के महत्वपूर्ण मुद्दे

क) खाद्य सुरक्षा एवं भोजन के अधिकार को सुदृढ़ करना : स्थिरीकरण कार्यक्रमों द्वारा सृजित कुपोषण एवं भूखमरी से मृत्यु को रोकने के लिए ऊपर से नीचे एवं नीचे से ऊपर प्रयासों का परिणाम, खाद्य सुरक्षा प्रतिबद्धताओं से राज्य का हट जाने का हुआ।

ख) सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों को राष्ट्रीय नेटवर्क, पीपल्स हेल्थ एसम्बली के जरिए रेखांकित किया जाना चाहिए। राष्ट्र राज्यों को लोक स्वास्थ्य पर बजटीय आवंटन के लिए जीडीपी (सकल घरेलु उत्पादन) के 5% के यू.एस. अधिदेश का पालन करना चहिए।

ग) अश्वेत तथा गरीब महिलाओं के लिए असुरक्षित गर्भ निरोधकों को कूड़े में फेंकने को न कहो।

घ) दक्षिण एशिया तथा चीन में स्त्री लिंगी भ्रूण के लिंग चयनात्मक गर्भपात पर प्रतिबंध आदेश।

ङ.) महिलाओं की शिक्षा के लिए राजकीय सहायता न केवल प्राथमिक स्तर के लिए परंतु माध्यमिक एवं उच्च स्कूल स्तर पर भी हो। फोरम फॉर चाइल्ड केयर (बाल देखरेख हेतु फोरम) ने मांग की है कि स्कूल का एक कमरा क्रेच बना देना चाहिए ताकि वो लड़कियाँ, जिन्हें अपने छोटे भाई–बहनों की देखभाल करनी पड़ती है वो

भी स्कूल में आ सकें। लड़कियों के लिए ज्यादा बजटीय आवंटन तथा ज्यादा वास्तविक निधियन हो।

च) निःशुल्क कानूनी सहायता तथा लोक अदालतें :

न्याय एवं शान्ति आयोग जो सामुदायिक संगठनों का नेटवर्क है और मुम्बई में कार्य करता है, गरीब महिलाओं को विवाह संबंधी विवादों, तलाक, भरण–पोषण, बच्चों की अभिरक्षा, निर्वाह धन, सम्पत्ति, माता–पिता या वैवाहिक घरों में रहने के अधिकार पर निःशुल्क कानूनी सहायता प्रदान करता है।

छ) आवासन अधिकार सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। एनजीओस ने मांग की है कि सभी गृह निर्माण समितियों में तथा राजकीय सहायता प्राप्त आवास स्कीमों में 10% घरों का आरक्षण स्त्री प्रधान परिवारों के लिए किया जाना चाहिए।

ज) स्वच्छता, सार्वजनिक शौचालय : शहरी स्वच्छता के मुद्दों पर राज्य एवं नगरपालिका का निधियन से ज्यादा बजटीय प्रावधान के सम्बन्ध में विचार करने की अत्यन्त आवश्यकता है।

झ) अर्थव्यवस्था के जीविका निर्वाह क्षेत्र में ऋणों, बुनियादी ढांचे, कृषि के लिए भंडारण एवं यातायात एवं राजकीय आर्थिक सहायता एवं सहायक कीमत, पशु पालन, डेरी विकास, बागवानी, फूलोत्पादन के संबधं में महिलाओं के लिए सुरक्षा जाल।

ण) वातावरणीय मुद्दे : क्योंकि प्राकृतिक संसाधन मानव जाति की सांझी धरोहर है उसे वास्तविक एवं भावी पीढ़ियों के उपयोग के लिए परिरक्षित किया जाना चाहिए, और इस परिप्रेक्ष्य के साथ कि प्रत्येक मानव की अपनी आवश्यकता अनुसार जल, वायु, ऊर्जा इत्यादि तक पहुँच है। इन संसाधनों के वाणिज्यिकीकरण तथा निजीकरण को रोक देना चाहिए। जैविक विविधता (पेड़ पौधें, जीव–जंतु, वन, पारिस्थितिकीय व्यवस्थाएं) को परिरक्षित किया जाना चाहिए और देशी महिलाओं के सामूहिक विवेक को पहचानना चाहिए, उसका सम्मान और उसे महत्व देना चाहिए।

ट) व्यावसायिक स्वास्थ्य : महिला सफाई कार्यकर्ता तथा पुनःचक्रित कर्ता अत्यन्त जोखिमपूर्ण परिस्थितियों में कार्य करते हैं। उन्हें मुखौटे, दस्ताने, गम–बूट्स तथा निःषुल्क एवं गुणवत्तापूर्ण चिकित्सा प्रदान की जानी चाहिए।

ठ) झूलाधार : राज्य, नियोक्ता तथा मजदूर संघों को समुदाय में तथा कार्य स्थल के समीप कामकाजी माँओं के बच्चों के लिए दिवसीय देखरेख केंद्रों की ज्यादा संख्या प्रदान करनी चाहिए।

ड) श्रम मानदंड़ों का क्रियान्वयन : वैश्वीकरण के परिणामस्वरूप श्रम मानदंड़ों के क्षय का पूरी शक्ति के साथ मुकाबला करना चाहिए। राष्ट्र राज्यों को मजदूरों को बेहतर मजदूरी तथा बेहतर कार्य–स्थितियाँ प्रदान करने के लिए प्रतिस्पर्धा करने दो।

ढ़) बिक्री के लिए बेकार वस्तु के रूप में स्त्रियों की देह के वस्तुकरण, अश्लील साहित्य/चित्र और मीडिया में महिलाओं की अश्ष्लील चित्रण के विरुद्ध वैश्विक संहिता : मीडिया में महिलाओं के शालीन चित्रण के लिए सार्वत्रिक मानदंड तैयार किये जाने चाहिए।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

त) समुदाय उन्मुखी मीडिया : सोशल एक्शन ग्रुप्स (समाज कार्य समूह) को मेनस्ट्रीम मीडिया के साथ घनिष्ट रूप से परस्पर क्रिया करनी चाहिए और महिलाओं के गरिमामय जीवन के अधिकार को महत्व देने के लिए अपना वैकल्पिक मीडिया भी सृजित करना चाहिए।

वैश्वीकरण का मानवीय चेहरा है यह सुनिश्चित करने के लिए मजबूत प्रयत्न करने चाहिए। यह सिर्फ वैश्विक एकता और विश्व भर में परिश्रम कर रही महिलाओं के बहिनचारे के जरिए ही हो सकता है। हमें वैश्विक रूप से सोचना होगा और स्थानीय रूप से कार्यवाई करनी होगी ताकि तमाम निर्णय करने वाले निकाय स्वीकार करें कि उत्तरजीवित रहने के महिलाओं के अधिकार मानवीय अधिकार हैं।

## 17-4-4 oSf'od 'kklu ds fy, fu.kZ;u

वितरणात्मक न्याय के जरिये जेंडर समता सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों की एक विशेष उपलब्धि रही है। हम वैश्वीकरण के मानवीय चेहरे को सिर्फ तभी देख सकते हैं जब हम जीवन की गुणवत्ता में उत्तर–दक्षिण अंतर को कम कर सकें। संपूर्ण विश्व में महिला निर्णयन कर्ताओं को सामूहिक रूप से प्रयास करना चाहिए और यह देखना चाहिए कि विकास तथा आर्थिक समृद्धता के संसाधन और फल देशों के बीच, देशों के अंदर और समस्त मानवों के बीच न्यायपूर्ण ढंग से वितरित किए जाते हैं और इस तरह से गरीबी को समाप्त करते हैं। ये भोजन एवं पोषण (Nutrition) आश्रय स्थल, स्वास्थ्य सेवाओं, सुरक्षित परिवहन, सूचना का अधिकार, शिक्षा, न्याय, फुरसत के समय में सांस्कृतिक रूप की समृद्ध गतिविधियों तक पहुँच को सुनिश्चित करेंगे। इस अत्यन्त महत्पूर्ण कार्य के साथ निबटने के लिए, हमें शासन में सहभागी लोकतंत्र के उच्च स्तर विकसित करने पड़ेंगे ताकि हम विश्व के सभी भागों में लोगों के जीवन और उनकी स्वतंत्रताओं को सुधार सकें।

### cksèk iz'u 1

uksV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. वैश्वीकरण की प्रक्रिया को स्पष्ट करें और उसके प्रभाव का विश्लेषण करें।

...........................................................................................................

...........................................................................................................

...........................................................................................................

...........................................................................................................

2. खाद्य सुरक्षा की व्याख्या करें।

...........................................................................................................

...........................................................................................................

...........................................................................................................

...........................................................................................................

## 17.5 जल प्रतिमान : मुद्दे तथा विवाद

आज, संपूर्ण विश्व में विकास वार्ता की कार्यसूची के शिखर पर जल है। आज मानव जाति को जल के साथ जिस समस्या का सामना करना पड़ता है वह यह है कि या तो जल अनियंत्रणीय रूप से प्रचुर है या गंभीर रूप से दुर्लभ। तथापि, जल की प्रचुर मात्रा होने की स्थिति वर्ष में मुश्किल से कुछ ही महीनों के लिए होती है। अन्यथा, यह जल संकट है जिसकी भारत बाकी सारे वर्ष के लिए शिकायत करता है। भारत, जहाँ विश्व की जनसंख्या का 16% है और भूभाग का 2.45% है, के पास केवल 4% जल संसाधन हैं (रामासामी आर. अय्यर, 2001)। अब, कम से कम एक दशक से, विभिन्न उद्देश्यों जैसे जलपान, सिंचाई और औद्योगिक उपयोग के लिए जल की प्रतिस्पर्धात्मक मांग है।

पिछले 60 विषम वर्षों के दौरान, भारत ने सिंचाई, घरेलु उपयोग और कृषि इतर, गतिविधियों के लिए जल संसाधनों को काम में लगाने के लिए बहुत बड़ी राशि का निवेश किया है। सार्वजनिक क्षेत्र ने जल संसाधन विकास में लगभग 1000/– बिलियन रुपयों का निवेश किया है और यह सूचना दी गई है कि वर्ष 1954 से ग्रामीण जल आपूर्ति पर बहुत बड़ी राशि यानि कि 32000 करोड़ रुपये खर्च किए गए हैं (लेन्नार्ट नाइलसन 2002)। भारत सरकार तथा विभिन्न राज्य सरकारों के द्वारा विभिन्न छोटे ढांचों (matrices) में बहुत सी जल योजनाएं द्विमुखी एवं बहुमुखी क्रम विन्यासों के अंतगर्त क्रियान्वित की गई हैं। जल संसाधन संरक्षण, सिंचाई के बुनियादी ढांचे के विकास में बड़ी मात्रा में निवेश, और पेयजल आपूर्ति स्रोतों तथा व्यवस्थाओं का चिरस्थायित्व लाने के लिए काफी निवेश के बावजूद शुद्ध परिणाम 'विभिन्न आवश्यकताओं के लिए अपर्याप्त जल आपूर्ति' का हुआ है।

भारत में शीघ्र ही घटित होने वाले जल संकट का श्रेय निम्नलिखित को दिया जा रहा है : (i) जल उपयोग तथा संचालन के चालू पैटर्न के अंतर्गत जल की दुर्लभता के मूल्य तथा उगाहे मूल्य के बीच बढ़ता हुआ अंतर; (ii) राज्य द्वारा जल संसाधनों का कमजोर शासन तथा कुशासन; और (iii) जल की सुस्पष्ट सम्पत्ति शासन पद्धति अथवा स्वामित्व की अनुपस्थिति। पारम्परिक रूप से, जल को प्रकृति से उपलब्ध निशुल्क वस्तु समझा जाता है। जल के अर्जन (या उपलब्धि), वितरण और उपयोग से संबंधित मौजूदा सांस्थानिक, कानूनी तथा शासन की व्यवस्थाओं ने इस प्रत्यक्ष धारणा को बदलने में सहायता नहीं की है। अब यह अवस्था आ गई है जहाँ उस कारण से जल या किसी भी प्राकृतिक संसाधन पर राज्य के सर्वसत्ताधारी अधिकार पर विवाद किया जाता है, इस अधिकार को ग्रहण करने की सरकार की भूमिका आपत्तिजनक बन गई है और पण्यधारियों के बीच सर्वसम्मति से इसकी ठंड दिल से व्याख्या की जानी चाहिए (एन.ए.ए.एस., 2005)।

## 17.6 वैश्वीकरण और कृषि

1990 के दशक में, डब्ल्यूकृटी.ओ. के समझौते के अंतर्गत उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ की गई थी। उदाहरण के लिए, भारत में महत्वपूर्ण आर्थिक संरचनात्मक परिवर्तन के दौरान, वर्ष 1994–95 में कृषि पर समझौता (AOA) लागू हुआ। कृषिगत संवृद्धि की प्रक्रिया को त्वरित करने के लिए, सांस्थानिक तथा बुनियादी ढांचे के विकास के आधार पर आधुनिक प्रौद्योगिकी का शीघ्र एवं व्यापक अंगीकरण सरकारी नीति का नया मंत्र था। त्वरित प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, पूंजीगत अंतर्वाह और फसलों के लिए निश्चित बाजार के लिए निजी क्षेत्र की प्रतिभागिता को संविदा खेती तथा

भूमि को पट्टे पर देने की व्यवस्थाओं के जरिये बढ़ावा दिया जा रहा है आशा की जाती है कि प्रस्तावित सुधारों से निजी निवेश, संरचनात्मक परिवर्तन और कृषिक कारोबार की क्षमता वृद्धि के लिए वातावरण में सुधार होगा। भारत प्रतिबंधों को समाप्त कर रहा है तथा निर्यातों पर जोर रहा है और ज्यादा उदार शासन व्यवस्था की ओर बढ़ रहा है।

## 17-6-1 df"k ij le>krk

1991 की नव आर्थिक नीति ने विनिमय दर, कारोबार तथा विदेशी निवेश नीतियों में बाह्य क्षेत्र के सुधार तथा औद्योगिक नीति, कीमत एवं वितरण नियंत्रण के क्षेत्रों में आंतरिक सुधार दोनों पर ही जोर दिया और वित्तीय एवं सार्वजनिक क्षेत्रों में राजकोषीय पुनःरचना, पर जोर दिया है। इसके अतिरिक्त, वर्ष 1995 में विश्व व्यापार संगठन के प्रति भारत की प्रतिबद्धता एवं सदस्यता इस बात का स्पष्ट संकेत था कि भारत वैश्वीकरण से लाभ उठाने तथा अपनी आर्थिक संवृद्धि को त्वरित करने की चुनौती का सामने करने का इरादा रखता है। जनवरी 1, 1995 को डब्ल्यू.टी.ओ. की स्थापना तथा बहुमुखी व्यापार विषय के अंतर्गत पहली बार कृषि के समावेशन के साथ कृषि के लिए बाह्य वातावरण में परिवर्तन आया। इन घटनाओं के घटित होने तथा कृषि पर समझौते के साथ यह अपरिहार्य हो गया कि भारत के पास कृषि समेत अपनी अर्थव्यवस्था का वैश्विकीकरण करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं है। कृषि के उदारीकरण से किसानों तथा ग्रामीण समुदाय को लाभ ए.ओ.ए. के तीन स्तम्भों द्वारा निर्धारित होते : (क) तुलनात्मक रूप से प्रतियोगी बाजारों के बीच अंतर्क्रिया, (ख) घरेलु कृषि में बाजार–मित्रवत सुधार, और (ग) विकसित देशों में आर्थिक सहायता।

## 17-6-2 gky gh d uhfrxr i;kl

ए.ओ.ए. (कृषि पर समझोते) के आधार पर, भारत ने कृषि के संबंध में निम्नलिखित नीतिगत प्रयास किए हैं :

i) भारतीय खाद्य निगम में सुधार;

ii) मुख्तारी का विकेन्द्रीयकरण;

ii) निजी कारोबार पर प्रतिबंधों में ढील;

iv) निजी बाजारों की स्थापना पर जोर;

v) संविदात्मक खेती;

vi) कई वस्तुओं में, वायद कारोबारी (forward trading) की अनुमति;

vii) कृषि संबंधी शोध एवं विस्तार में सार्वजनिक–निजी साझेदारी पर जोर;

viii) सांझेदारी दृष्टिकोण के जरिये मूल्यवर्द्धित श्रृंखलाओं को बढ़ावा देना;

ix) सार्वजनिक क्षेत्र में निवेशों को प्रवृत्ति को उल्टी दिशा देना; और

x) सिंचाई परियोजनाओं/जल संभरण पर जोर।

नव आर्थिक सुधारों के साथ या बाद में चालू किये गए नीतिगत उपायों में निर्यात संवर्द्धन विषयक स्कीमें जैसे कि 1991 में निर्यात एवं आयात स्क्रिप का प्रावधान (Exim), 1992 में निर्यात उन्मुखी इकाइयों के लिए नकद मार्जिनस की समाप्ति, 1996–97 में निर्यात प्रतिष्ठानों को कर में रियायत प्रदान करना, 2000 में विशेष आर्थिक अंचल (SEZs) स्थापित करना, और 1992–93 में विनिमय दर से संबंधित रुपये की आंषिक

परिवर्तन योग्यता और 1993–94 में कारोबार के खाते में पूर्ण परिवर्तनीयता उल्लेखनीय हैं। परन्तु निर्यातों एवं आयातों पर लाईसेंसिंग प्रक्रिया के जरिये मात्रात्मक प्रतिबंधों को हटाने का और आयातों पर प्रषुल्क दरों में कमी करने का काम एक्सिम नीतियों और उनके संशोधनों में चरणों में किया गया था।

### 17-6-3 df"k ij fo'o O;kikj lxBu (WTO) le>kr dk iHkko

भारतीय कृषि पर इन समझौते के संभावित प्रभाव विभिन्न स्रोतों (www.dsharma.org) से सूचित किए गए वो निम्नवत हो सकते हैं :

i) भारत के कृषिक निर्यातों के आकार, संघटन, प्रतिस्पर्धात्मकता और दिशा पर प्रभाव;

ii) भारतीय कृषि की फसलों के पैटर्न एवं उत्पादकता पर प्रभाव, देश की खाद्य सुरक्षा की स्थिति, आगतों (Inputs) की लागत और उनके उपयोग दरों का प्रभावित होना संभावित है।

iii) निर्यात–उन्मुखी उत्पादन की ओर परिवर्तन कुछ वातावरण संबंधी समस्याएं पैदा कर सकता है;

iv) कृषि संबंधी वस्तुओं की घरेलु कीमतें बदल सकती हैं; और

v) कारोबार संबंधित बौद्धिक संपत्ति अधिकारों के मुद्‌दों कृषि के लिए काफी फलितार्थ हो सकते हैं, विशेष रूप से बीजों के निर्यात एवं आयात, कीटनाशक लागत इत्यादि पर।

### 17-6-4 gkxdkx dh e=h Lrjh; lHkk

भारतीय कृषि नीति, अपनी कृषि को, डब्ल्यू.टी.ओ. की धाराओं तथा वैश्विक नीतिक वातावरण के साथ संचालित करने में अभी भी दुविधाग्रस्त है क्योंकि विकसित देशों का कृषि क्षेत्र आर्थिक सहायता (सब्सिडीस) द्वारा अत्याधिक संरक्षित है। हाँगकाँग में आयोजित 13–17 दिसम्बर 2005 को विश्व व्यापार संगठन की मंत्री स्तरीय सभा में विकसित देशों ने सब्सिडीस को 2013 तक समाप्त करने की सम्मति दी। इस समझौते ने लाखों भारतीय किसानों को कोई सुरक्षा या लाभ बिल्कुल नहीं प्रदान किया है। उन्नत देशों द्वारा 2013 तक निर्यात सब्सिडीस को कम करने की प्रतिबद्धता कोई उपलब्धि नहीं थी क्योंकि वह कृषि क्षेत्र द्वारा प्राप्त किया जाने वाला छोटा अंश है। आने वाले दिनों में, ज्यादा दबाव तथा व्यापार बिगाड़ने वाली तरकीबों की अपेक्षा की जा सकती है जो किसानों तथा भारतीय कृषि पर प्रतिकूल प्रभाव डालेंगी। प्रस्तावित विशेष उत्पाद तथा विशेष सुरक्षा क्रियाविधि (या यांत्रिकी) भारत को सहायता नहीं पहुँचाएगी, क्योंकि उसने कृषि प्रषुल्क में आगे और कटौती के लिए पहले से ही स्वीकृति दे दी है।

## 17-7 [kk| lj{kk

भोजन सर्वाधिक मूलभूत मानवाधिकार है – इस प्राप्त करना का दान नहीं समझना चाहिए परंतु इसे राज्य के दायित्व के रूप में देखा जाना (जैकसन 2002)। भारत के संविधान के और साथ ही मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा के अनुसार देखें तो खाद्य सुरक्षा अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय नीति नियोजक खाद्य सुरक्षा को राष्ट्रीय प्राथमिकता मान कर चलते हैं। देश में खाद्यानों का कुल उत्पादन, जो वर्ष 1950–51 में मात्र 50 मि. टन था, आठ गुना से भी अधिक बढ़ गया है और नवीनतम अनुमानों के अनुसार 212 मिलियन टन के स्तर को पार कर जाएगा। इसी समयावधि के दौरान,

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

प्रति व्यक्ति खाद्यान उपलब्धता प्रतिदिन लगभग 395 ग्राम से बढ़कर करीब 500 ग्राम हो गई है, जब कि जनसंख्या में अविराम वृद्धि हो रही है। यह देखते हुए कि वर्तमान दृश्यपट के अंतर्गत खाद्य की नियमित/सामान्य वार्षिक मांग केवल 195 और 200 मि. टन के बीच है और वास्तविक मांग इससे भी कम है, देश खाद्यान्नों में न सिर्फ आत्मनिर्भर प्रतीत होता है बल्कि देश में सीमान्त रूप से प्रतीत होता है।

## 17-7-1 [kk| lqj{kk lqfuf'pr djuk

तमिलनाडु में पांच जिलों के कई गाँवों में की गई फोकस ग्रुप चर्चा बताती है कि तमिलनाडु में एक सामान्य वर्ष में एक निर्धन ग्रामीण परिवार सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) पर वर्ष में से लगभग 90–120 दिनों के लिए निर्भर करता है, वस्तु रूप में प्राप्त मजदूरी (सामान्यत्या वर्षा क्षेत्रों में धान और शुष्क क्षेत्रों में चोलम या रागी) 75–90 दिनों के लिये खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करती है, और 'अनौपचारिक बाजार' (स्थानीय निजी, व्यापारी जो आवश्यक वस्तुओं में लेन–देन करते हैं) वर्ष में बाकी 120–150 दिनों के लिए अनाज प्रदान करते हैं।

तमिलनाडू में भूखमरी से मृत्यु न होने का एक मुख्य कारण होने का श्रय सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) दिया जा सकता है, इसके बावजूद कि PDS भ्रष्ट प्रथाओं के लिए प्रसिद्ध है। मंदी के मौसम में और कभी–कभी अनुत्पादनकारी फसल होने पर ऐसा ज्यादा होता है। खाद्य वस्तुओं की भौतिक रूप से उपलब्ध कराने के सम्बन्ध में पोष्टिकता का मूल्य कुछ भी हो सकता है, परंतु तथ्य यही है कि 'राज्य में गरीब लोगों' की खाद्य संबंधी आवश्यकताओं का 25–40 प्रतिशत ही PDS पूरा करता है। अतः गाँवों और शहरी मलिन बस्तियों में अत्यन्त गरीब लोगों की आमदनी के अनुसार दे सकने योग्य कीमतों पर धान, गेहूँ, चीनी और मिट्टी के तेल का एक स्थायी एवं स्थिर स्रोत पी.डी.एस. है। अतः, ग्रामीण तथा शहरी गरीबों के लिए अनिवार्य खाद्य वस्तुओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने की एक आवश्यक योजना पी.डी.एस. है। शिकायतों के बावजूद, अधिकांश गरीब लोग अभी भी परिवार की कम से कम दस दिनों (महीने में) की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पी.डी.एस. पर निर्भर करते हैं।

भू स्वामी वर्ग और कामगार दोनों के लिए अनिवार्य वस्तुओं की आपूर्ति का एक मुख्य स्रोत PDS है। (PDS) को छोड़ कर, भूस्वामी वर्ग तथा कर्मकार वर्ग की खाद्य सुरक्षा प्रभावपूर्ण ढंग से सुनिश्चित करने वाले अन्य स्रोत गूढ़ रूप से भिन्न हैं। 'भूस्वामी वर्ग' के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने वाले अन्य स्रोत हैं : (i) अपनी भूमि से हुई धान की फसल, और (ii) कृषि उत्पादों को बेचने से प्राप्त नकद आमदनी। नकद आमदनी से वे लोग जरूरत की अनिवार्य वस्तुओं को (अ) उचित कीमत दुकानों (राशन के आधार पर), और (ब) बाकी अनौपचारिक खुले बाजारों धान में व्यापार करने वाले बीणकों से प्राप्त करते हैं।

कामगार वर्ग के लिए जो स्रोत खाद्य सुरक्षा प्रभावी ढंग से सुनिश्चित करते हैं मुख्यतः दो है : (i) मजदूरी के रूप में अर्जित नकद मजदूरी; और (ii) वस्तु रूप में प्राप्त मजदूरी। तमिलनाडु के कई जिलों में वस्तु रूप में मजदूरी देने की प्रथा व्यापक रूप से प्रचलित है विशेष रूप से उन किसानों के द्वारा जो धान की फसल लेते हैं। एक औसत कामगार को एक पूरे दिन के काम के बदले में लगभग 10 के.जी. धान मिलता है। वस्तु (धान) के रूप में मजदूरी महत्वपूर्ण समझी जाती है क्योंकि एक फसल के काल में एक औसत परिवार धान के 4–5 बोरे कमा लेता है, जो खाद्य सुरक्षा का दूसरा स्रोत है – पहला पी.डी.एस. है। गाँव वालों का व्यावसाय कोई भी हो सकता है, धान की फसल काटने के समय के दौरान, बहुत से ग्रामीण परिवारों में धान की कटाई के लिए जाने की प्रथा

है विशेष रूप से धान के रूप में मजदूरी कमाने के लिए क्योंकि धान वर्ष में 2–3 महीनों के लिए पूरे परिवार के जीवन का भरण–पोषण करता है।

## 17-7-2 lqèkkj ds mik; rFkk lqèkkj ds mik;ksa ds fy, ckgjh iz;kl

सरकारी उपाय जैसे की एफ.सी.आई. कार्यों को अधिकांशत्या राज्य सरकारों को स्थानांतरित करना, अनिवार्य वस्तु अधिनियम का इस आधार पर उन्मूलन कि वे कारोबार को बिगाड़ रहा है, जहाँ निजी थोक विक्रेता पी.डी.एस. के स्थान पर मुख्य भूमिका अदा करेंगे वहाँ फुड स्टाम्प प्रोग्राम बनाने प्रारम्भ करने का प्रस्ताव और, खाद्य सहायता को सार्वभौमिक के बजाय लक्ष्यित कार्यक्रम का रूप में निरंतर जिक्र करना ये सब उपाय वैश्वीकरण के आलोचकों को यह कहने देते हैं कि ये सब हम पर विश्व व्यापार संगठन तथा विश्व बैंक द्वारा थोपे गए हैं। खतरे का दूसरा संकेत यह दिया जाता है कि कृषि पर समझौते की वार्ताओं के जरिये डब्ल्यू.टी.ओ. भारत में गरीबों की खाद्य सुरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न करते हैं, और कि यह भारतीय खाद्य निगम को बंद कराने का प्रयास कर रहे हैं। वो यह भी कहते हैं कि विश्व बैंक और अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठन पी.डी.एस. को धीरे–धीरे समाप्त करने की सलाह देते हैं क्योंकि सरकार को प्रत्येक वर्ष खाद्य सब्सिडी का बड़ा बिल देना पड़ता है।

इस तथ्य के बावजूद कि भारत ने विकासशील देशों में गरीबों की खाद्य सुरक्षा की रक्षा कर पाने के लिए है। डब्ल्यू.टी.ओ. के साथ खाद्य सुरक्षा बाक्स की आवश्यकता की पहल की यह बात उठाई गई। डब्ल्यू.टी.ओ. से जो वक्तव्य आते हैं वो भी इंगित करते हैं कि जब कृषि, खाद्य सुरक्षा तथा गरीबी उन्मूलन के मुद्दे उठते हैं तो भारत सिर्फ रक्षात्मक हित में कार्यवाई करता है। जिस प्रकार समझौते की बातचीत होती है, भारत कृषि तथा खाद्य सुरक्षा को व्यापार समझौतों द्वारा प्रभावित होने से रक्षा करने के लिए सतर्क लगता है। खाद्य सुरक्षा बाक्स की मांग है कि गरीबी उन्मूलन, ग्रामीण विकास और कृषि के विविधीकरण के लिए उपायो को कटौतियों से छूट मिलनी चाहिए। एफ.सी.आई. और पी.डी.एस. के साथ समस्याएं सुविदित हैं। वो उच्च प्रशासन लागते, अनचाही परिवहन लागतें, भंडारण हानि, चोरी, इत्यादि की है। इन स्थितियों को भारत घरेलु स्तर पर सुधारना एवं नवीयन करना चाहिए। जिस प्रकार से एफ.सी.आई. प्रचालन करते है और पी.डी.एस. कार्य करता है उसमें काफी सुधार की आवश्यकता है।

जहाँ तक विश्व व्यापार संगठन का संबंध है, खाद्य सब्सिडी एवं गरीबी के बारे में अन्य प्रावधान जिसका जिक्र किया हो वो खाद्य सुरक्षा पर स्पेशल एवं डिफरेंशल ट्रीटमेंट (SRD) जैसे वैध प्रावधान है जो गरीबों की खाद्य संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आर्थिक सहायता प्राप्त या दरों पर खाद्य नियमित रूप से सुरक्षा प्रदान करते हैं। फिर भी, AOA के प्रावधानों पर अभी भी बातचीत चल रही है और यह केवल कुछ ही सीमा तक प्रतिकूल भूमिका अदा करता है। खाद्य असुरक्षा को जो पूर्वानुमेय बनाता है वो व्यापार उन्मुखी संस्कृति है कि कृषि पर समझौता या तो केन्द्र या राज्य के स्तर पर सरकार की प्रायोजकता या प्रतिभूमि के आधार पर होता है।

खाद्यान्न की फसलों की उपेक्षा करने की और वाणिज्यिक फसलों को बढ़ावा देने की सामान्य प्रवृति खतरनाक संकेत है। यह खाद्यान्नों की असुरक्षा की उभरती समस्या का संकेत देता है। सिंचाई के बुनियादी ढांचे जल, पिंडों की उपेक्षा, प्रबंधन प्रथाओं की अनुपस्थिति और आगत (इनपुट) की बढ़ती हुई लागतें कृषिकारों को कृषि में युवा पीढ़ी को न लगाने की प्रवृति विकसित करने देती है। बहुत से स्थानों में निर्वाह खेती के जरिये खाद्य सुरक्षा के बजाय नकद आय पाने की प्रवृति तेजी पकड़ रही है। यह कि नकद से खाद्य वस्तुएं खरीदी जा सकती है और खाद्यान्नों को उगाने की कोशिश व्यर्थ जा सकती है सब यह आम विचार स्थानों में फैल रहा है।

इससे भारत को छः वर्ष बाद फिर से गेहूँ के आयात के लिये बाध्य होना पड़ सकता है या पहले से ही बाध्य हो गया है। सिंचाई का बुनियादी ढांचे का निर्माण करने, न्यूनतम सपोर्ट या संबल कीमत सुनिश्चित करने इत्यादि में घरेलु तैयारी की जरूरत है ताकि खाद्यान्न उत्पादन में आत्म निर्भरता बनाए रख सकें और इस देश की जनता के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित कर सकें।

## 17.8 सारांश

इस इकाई में हमने वैश्वीकरण की प्रक्रिया के प्रारम्भ होने के बारे में और महिलाओं, गरीब और शहरी लोगों पर उसके क्या प्रभाव होते हैं के बारे में जाना। इसने समाजों के बीच बृहद अंतर उत्पन्न कर दिये हैं। इसके साथ ही इसने शहरी मध्यम वर्ग के लोगों की जीवन शैली पर सकारात्मक प्रभाव डाला है।

## 17.9 शब्दावली

**वैश्वीकरण** : वैश्वीकरण का अर्थ है आर्थिक लेने देनों का प्रसार और रानजीतिक सीमाओं से परे राष्ट्र राज्यों में आर्थिक गतिविधियों का संगठन। यह न सिर्फ बाजार अर्थव्यवस्था, परंतु राजनीतिक लोकतंत्र से भी संबंधित मामला है। वैश्वीकरण कुषलता सुनिश्चित करने के लिए सीमा तथा परिसीमाओं को समाप्त करने की पैरवी करता है।

**खाद्य सुरक्षा** : मनुष्य का सर्वाधिक मूलभूत अधिकार भोजन है। इसे दान नहीं परंतु राज्य का दायित्व समझना चाहिए। भारत के संविधान तथा मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनुसार खाद्य सुरक्षा अति महत्वपूर्ण है।

## 17.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. वैश्वीकरण का प्राथमिक रूप से अर्थ आर्थिक लेनेदेनों का प्रसार और राष्ट्र राज्यों के राजनीतिक सीमाओं के परे आर्थिक गतिविधियों का संगठन है। अतः, यह सिर्फ बाजार अर्थव्यवस्था से ही नहीं परंतु राजनीति लोकतंत्र से भी संबंधित मामला है। वैश्वीकरण सीमा एवं परिसीमाओं को समाप्त करने की पैरवी करता है ताकि कुषलता सुनिश्चित की जा सके। निजीकरण, उदारीकरण तथा वैश्वीकरण की प्रक्रिया विश्व के नए खिलाड़ियों को अर्थव्यवस्था के केंद्रीय मंच पर ले आई है। वैश्वीकरण की अवधारणा – जिसे डब्ल्यू.टी.ओ. तथा उसके सहायक संगठनों द्वारा बढ़ावा दिया जा रहा है – मिश्रित वरदान कहा जाता है। कुछ कहते हैं कि यह वरदान है और दूसरे कहते हैं कि यह श्राप है। यह वरदान है क्योंकि निजी वित्त को सार्वजनिक क्षेत्र में लाता है, कुशलता एवं उत्पादन को सुधारता है, उपभोक्ताओं के लिए अच्छी किस्म के उत्पादों को निम्नतम संभावित कीमतों पर पाना सूकर बनाता है, नये रोजगार अवसरों को सृजित करता है जो उच्चतर आय तथा जीवन जीने के बेहतर स्तर की ओर अग्रसर करते हैं। यह श्राप है क्योंकि गरीब देशों में जनसंख्या का बड़ा अनुपात वैश्वीकरण की प्रक्रिया द्वारा हाशिये पर रह गया है।

2. भोजन सर्वाधिक मूलभूत मानवाधिकार है – इसे उपलब्ध कराना दान नहीं समझना चाहिए परंतु राज्य का दायित्व समझना चाहिए। भारत के संविधान तथा मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा के अनुसार, खाद्य सुरक्षा अति महत्वपूर्ण है। देश में खाद्यान्नों का कुल उत्पादन वर्ष 1950–51 में मात्र 50 मिलियन टन था, आठ गुना से भी ज्यादा बढ़ गया है और 212 मिलियन टन की सीमा को पार कर सकता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 17.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. ऐन मज, ''मैथड्स फॉर पॉलिसी रिसर्च'', नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशनस, 1984
2. बिपलव दास गुप्ता, ''ग्लोबलाइजेशन : इंडिया'स एडजस्टमेंट एक्सपीरियंस'', नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशनस, 2005
3. बिज़नेस लाइन, 'तमिलनाडु प्लेन्स टू मूव आई.टी. इन टू स्मॉल सिटीस एंड टाऊन्स, जुलाई 29, 2006
4. दीपक नायर (सं.), गवर्निंग ग्लोबलाइजेशन : इश्यूस एण्ड इंस्टीट्यूशन्स, नई दिल्ली : ओ यू पी, 2002
5. तमिलनाडु सरकार, ह्यूमेन डेवलपमेंट रिपोर्ट, 2001
6. जगदीष भगवती, 'इन डिफेंस ऑफ ग्लोबलाइजेशन, नई दिल्ली, ओ.यू.पी, 2004
7. जोसेफ ई. स्टिगलिट्स, 'ग्लोबलाइजजेशन एंड इट्स कॉन्टेंस, नई दिल्ली, पेनगुइन बुक्स, 2002
8. जोसेफ इ. स्टिगलिट्स, 'मेकिंग ग्लोबलाइजेशन वर्क', नई दिल्ली, पेनगुइन बुक्स, 2006
9. कृष्ण कांत (भारत के उप–राष्ट्रपति, उद्घाटन भाषण), 'इंपैक्ट ऑफ लिबरलाइजेशन एंड ग्लोबलाइजेशन ऑन रुरल लाइवलीहुड्स : प्रोसोडिंगस ऑफ ए नेशनल सेमीनार', एन.आई.आर.डी. : हैदराबाद, 2003
10. ओ.इ.सी.डी., 'मैज़रिंग ग्लोबलाइजेशन : ओ.इ.सी.डी. हैंडबुक ऑन इकोनोमिक ग्लोबलाइजजेशन इंडिकेटरस, ओ.इ.स.डी., 2005
11. पालानीथुराए, जी. 'टूवर्ड्स डिसेंट्रलाइजेशन ऑफ पॉवर, गांधीग्राम : राजीव गांधी चेयर फॉर पंचायती राज स्ट्डीज, 2001
12. रामा कृश्णन. टी., प्रोमोटिंग टायर-II सिटीस फॉर आई.टी. ग्रोथ, दी हिन्दू, 19 नवम्बर, 2006

## 17.12 बोध प्रश्न (मनन एवं अभ्यास हेतु)

1. ग्रामीण भारत में वैश्वीकरण के प्रभावों का विश्लेषण कीजिए।
2. सामाजिक न्याय पर वैश्वीकरण के नकारात्मक प्रभाव की विवेचना कीजिए।

# bdkbZ 18 tsaMj] lhekUrhdj.k rFkk otZu

## bdkbZ dh :ijs[kk

18.1 प्रस्तावना
18.2 उद्देश्य
18.3 सामाजिक अपवर्जन (या बहिश्करण) की अवधारणा की परिभाषा
18.4 'सामाजिक बहिष्करण' समस्यात्मक (संदेहास्पद): बहु एवं अतिव्यापन का नुक्सान
18.5 सामाजिक वर्जन की क्रियाविधियाँ
18.6 सामाजिक रूप से बहिष्कृत/अपवर्जित समूह एवं श्रेणियाँ
18.7 सामाजिक अपवर्जन तथा सहस्राब्दि विकास लक्ष्य (एम.डी.जीस) : कुछ आनुभविक परिणाम
    18.7.1 गरीबी के तरीके पर सामाजिक अपवर्जन का प्रभाव
    18.7.2 स्वास्थ्य संबंधी परिणामों पर सामाजिक अपवर्जन का प्रभाव
    18.7.3 शिक्षा संबंधी परिणामों पर सामाजिक अपवर्जन का प्रभाव
18.8 सामाजिक अपवर्जन के प्रति प्रतिक्रिया करना
18.9 सारांश
18.10 शब्दावली
18.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
18.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें
18.13 बोध प्रश्न (मनन एवं अभ्यास हेतु)

## 18-1 izLrkouk

'सामाजिक अपवर्जन' की अवधारणा का तुलनात्मक रूप से हाल ही में उदगम हुआ है। यूरोप में बढ़ती हुई बेरोज़गारी तथा आय असमानताओं की प्रतिक्रिया में इसे महत्व दिया जाने लगा है। बेरोजगारी तथा आय में असमानता 20वीं शताब्दी के अंतिम दशकों की मुख्य विशेषता रही हैं, इस काल के दौरान काफी आर्थिक एवं सामाजिक अव्यवस्था थी क्योंकि विभिन्न देशों ने अपने श्रम बाजारों के लिए, कल्याण राज्यों और नागरिकता के बारे में प्रचलित विचारों के लिए वैश्वीकरण की चुनौतियों के साथ निबटने की चेष्टा की हम सामाजिक अपवर्जन' पर यूरोपियन फाऊंडेशन द्वारा पेश की गई परिभाषा जो 'पूर्ण सहभागिता' के दूसरे सिरे के स्पैक्ट्रम को प्रदर्शित करने के लिए दी गई है, की दृष्टि से विचार कर सकते हैं।

यह इकाई इस बात के लिए तर्क प्रस्तुत करती है कि विकास नीति के लिए सामाजिक अपवर्जन परिप्रेक्ष्य का प्राथमिक मूल्यवर्धन नवीन समस्या के 'नामकरण' में इतना नहीं है, जैसा कि उत्तरी सामाजिक नीतिक अध्ययनों में किया गया प्रतीत होता है, परंतु उन अलामों (या नुकसानों) के भिन्न रूपों के देखने का समेकित ढंग प्रस्तुत करने में स्थित

है, जिनका विकास अध्ययन साहित्य में पृथक रूप से विचार किया जाने लगा है। विशेष रूप से, यह समाज में दूसरों से कुछ 'पृथक होने' 'अंदर आने से रोक दिए जाने' (तालाबंद कर देने) या 'पीछे रह जाने' के रूप में समाज के कुछ समूहों तथा वर्गों का अनुभव निरूपित करता है, इस तरह से गरीबी विश्लेषण के मौजूदा ढांचे निरूपित करने में असफल रहे हैं। फलस्वरूप, इसके पास इन विद्यमान ढांचों द्वारा प्रस्तुत किए गए विश्लेषण से परे ऐसा विश्लेषण पेश करने की अंतर्दृष्टियाँ हैं। यह गरीबी की अवधारणा, जो वंचन के संपूर्ण स्तरों पर ध्यान केन्द्रित करती है, और असमानता की अवधारणा, जो वितरणात्मक मुद्दों के साथ सरोकार रखती है के बीच सम्बन्ध भी बनाने देता है। सामाजिक अपवर्जन गरीबों के वंचन के वितरण में असमानताओं को रेखांकित करने में सहायता करता है।

इस इकाई के तीन भाग हैं : सामाजिक अपवर्जन का संप्रत्ययीकरण और गरीबी, स्वास्थ्य तथा शिक्षा से संबंधित मुख्य एम.डी.जीस (सहस्राब्दि विकास लक्ष्य) के लिए उसकी प्रासंगिकता का आनुभविक अन्वेषण और गरीबी घटाने की रणनीतियों को ज्यादा अंतर्वेषी समाज निर्मित करने और सारांश की चुनौती के साथ जोड़ने के नीतिगत फलितार्थ।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 18-2 mn~ns';

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सक्षम होंगे :

- सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा को परिभाषित करने में';
- सामाजिक अपवर्जन के संदर्भ में सामाजिक विकास के मुद्दों का विश्लेषण करने में; और
- सामाजिक समेकन (या अंतर्वेशन) के जरिये एम.डी.जीस में प्राप्त उपलब्धियों को स्पष्ट करने में।

## 18-3 lkekftd viotZu ¼;k cfg"dj.k½ dh voèkkj.kk dh ifjHkk"kk

''(सामाजिक अपवर्जन) एक प्रक्रिया है जिसके जरिये व्यक्ति या समूह समाज जिसमें वे रहते हैं में पूर्ण अथवा आंषिक सहभागिता से अलग कर दिए जाते हैं।'' वर्ष 1994 में आयोजित सामाजिक शिखर सम्मेलन से, विकासशील देश के संदर्भ में गरीबी, असमानता और सामाजिक न्याय के सरोकारों के लिए इस अवधारणा की लाभप्रदत्ता पर ज्यादा से ज्यादा ध्यान दिया गया है। सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा से परिचित संस्थाओं में शामिल हैं – अंतरराष्ट्रीय श्रम अध्ययन संस्थान, एशियन डेवलेपमेंट बैंक, (ऐशियाई विकार बैंक), इंटर–अमेरिकन विकास बैंक और विश्व बैंक।

फिर भी, विकासशील देशों के भिन्न, एवं ज्यादा विभेदित, संदर्भ की अंतरणीयता तत्काल स्पष्ट नहीं थी। इस अवधारणा जो कि सामान्य समृद्धता की विशेष स्थिति के संदर्भों में गरीबी की दृढ़ता का वर्णन करने के लिए निर्मित की गई की उन संदर्भों जहाँ अल्पसंख्यकों का अधिकांश या काफी भाग गरीब था के प्रति प्रासंगिकता के बारे में प्रश्न चिह्न को इस बारे में भी चिन्ता थी कि सामाजिक समस्याओं के दीर्घकालीन, स्थानीय रूप से विकसित दृष्टिकोणों को मात्र पुनः नाम देने के लिए अवधारणा को बिना सोचे समझे बाहर से ले लिया जाएगा।

परिणामस्वरूप, इससे पहले कि सामाजिक अपवर्जन के वर्द्धित मूल्य की परिभाषा को विकास नीति के शब्दकोष में समविष्ट किया जाए उसे प्रदर्शित करना पड़ेगा। यह देखते हुए कि गरीबी का विशेषता वर्णन (चरित्र–चित्रण) पिछले आय–आधारित दृष्टिकोणों से उसकी बहुआयामपरकता की वृहदतर पहचान की ओर काफी आगे बढ़ गया है, यह गरीबी की समझ में और क्या जोड़ेगा? किस प्रकार से यह असमानता के विश्लेषण में योगदान देगा? असमानता को अब आर्थिक संवृद्धि को गरीबी ह्रास में तबदीली करने में ज्यादा से ज्यादा महत्वपूर्ण कारक माना जाने लगा है। और यदि गरीबी ह्रास की कार्यसूची मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ सरोकार रखती है, और असमानता की कार्य सूची मूलभूत आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए साधनों के वितरण के साथ सरोकार रखती है, तो क्या सामाजिक न्याय के लिए सरोकार सुनिश्चित करने के लिए काफी नहीं हैं?

## 18-4 ^lkekftd viotZu* leL;ktud ¼lansgkLin½ % cgq ,oa vfrO;kiu uqdlku

'सामाजिक अपवर्जन' के संप्रत्ययीकरण के लिए लाभप्रद प्रारम्भिक बिंदु उन सब भिन्न तरीकों पर विचार करना है जिस तरीके से अभावग्रस्त किसी समाज में व्यक्तियों और समूहों के अवसरों तथा जीवन के मौकों को सीमित करने के लिए कार्य करती है। आर्थिक सिद्धांतों ने आमतौर पर व्यक्ति को या व्यक्तिगत परिवार को विश्लेषण की अपनी इकाई के रूप में लेते हुए, मुख्यतः हानि के संसाधन–आधारित प्रतिमानों पर फोकस किया है। उदाहरण के लिए, इस दृष्टिकोण ने विकास अध्ययनों के अंतर्गत गरीबी के पिछले संप्रत्ययीकरणों को प्रभावित किया था जिसने (अध्ययनों) इसे आय अथवा व्यय की कमी के साथ समीकृत किया है। अब भी, जब गरीबी को आय, परिसम्पत्तियों, शिक्षा, स्वास्थ्य, गरिमा तथा अधिकार को समाविष्ट किए हुए, बहु–आयामी परिघटना ज्यादा से ज्यादा माना जाने लगा है, फिर भी उसे सामान्य रूप से आर्थिक संबंध में ही समझा जाता है। ऐसा माना जाता है कि इस प्रतिमान के अंदर गरीबों को समाज के अंदर संसाधन आवंटन तथा सांस्थानिक क्रमविन्यास को निर्धारित करने में कोई अधिकार नहीं है या थोड़ा अधिकार है क्योंकि वे गरीब है; उन्हें विरले ही गरीब के रूप में देखा गया है क्योंकि संसाधन के आवंटनों तथा सामाजिक क्रमविन्यास निर्धारित करने में उन्हें बहुत कम या कोई अधिकार नहीं है।

जैसा कि स्टीवार्ट ने बताया है कि इसने असमानता के ऊर्ध्वाकार प्रारूप/मॉडल को जन्म दिया है जो व्यक्तियों या परिवारों को उनकी आय या परिसम्पत्तियों के अनुसार श्रेणीगत करता है और इस संपूर्ण क्रमीकरण में व्याप्त असमानता का माप करता है। गिनी गुणांक असमानता के माप के लिए व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है, मुख्यतः आय वितरण के संबंध में, परंतु वैयक्तिक शिक्षा अथवा स्वास्थ्य प्रभावों के वितरण का माप करने में प्रयोग किया जाता है।

इसके दूसरी ओर, समाज विज्ञानियों ने पहचान–आधारित रूप की हानि पर अधिक ध्यान दिया है, यह हानि वो है जो समूहों और समाज में लोगों के वर्गों का, इस बात के आधार पर कि वे कौन हैं; या बजाय, उन्हें क्या समझा जाता है, उनका सांस्कृतिक अवमूल्यन प्रकट करती है। यहाँ पहचान, लोगों के बिल्कुल अलग और बहुत निकटता से संबंधित समूहों से संबंधित हो सकती है, जो अपनी अलग सांस्कृतिक प्रथाओं और रहन सहन के समान तरीके से किए जाते हैं। जाति, नृजातीयता और धर्म ऐसे समूह पहचानों के उदाहरण हैं। दूसरी सभावना है कि असंबद्ध या अनाबद्ध वर्ग से के लोगों संबंधित हो सकते हैं जो एकल सांझी विशेषता (यानि जेंडर, अपंगता या एच.आई.वी.

पोजीटिव स्थिति) रखते हैं। ऐसे वर्गों के सदस्यों के बीच बहुत कम सांझा हो सकता है सिवाय उनके साथ किए जाने वाले भेदभाव के।

सांस्कृतिक अवमूल्यन की प्रक्रिया समाज के प्रभुत्वशाली वर्गों द्वारा धारणाओं, मूल्यों, अभिवृत्तियों और व्ययहार जो व्यक्ति को छोटा, कलंकित, रुढ़िबद्ध, अदृश्य और भेदभाव करते हैं के द्वारा इन वर्गों या समूहों के सदस्यों की निर्मित जरिये घटित होती है। यह प्रक्रियाएं प्रभावपूर्ण होती हैं क्योंकि वे उन वार्ताओं पर आधारित होती हैं जिनकी समाज में वैधता होती है (जैसे कि धर्म या 'परम्परा') या जो अपने आशंकाओं ('अन्य की' या 'अज्ञात' की) बात करती हैं। इन प्रक्रियाओं का उन लोगों जिन्हें इस प्रकार से परिभाषित या सीमांकित किया जाता है, के स्वपन और सामाजिक पहचान के बोध पर गहन प्रभाव पड़ सकते हैं, एजेंसी (माध्यम की) के लिए उनकी क्षमता पर और जिन शर्तों पर उन्हें इस एजेन्सी को इस्तेमाल करने की अनुमति होती है। उस पर तथा अवसरों की गम्यता के लिए समाज के अंदर भिन्न समूहों और वर्गों की क्षमता को अलग–अलग करती है।

अतः दोनों प्रतिमान हानि की काफी भिन्न समझ पर फोकस करते हैं : एक संसाधनों (तुम्हारे पास क्या है) के अभाव से संबंधित है और दूसरा पहचान आधारित अन्तर (तुम क्या हो) से संबंधित है। सांस्कृतिक अवमूल्यन (योग्य गरीब) का सामना किए बगैर गरीब होना संभावित है ठीक वैसे ही जैसे कि गरीब न होने पर भी भेदभाव का शिकार होना संभावित है (अधिकांश स्त्रियाँ अनिवार्य रूप से गरीब न होने के बावजूद जेंडर–आधारित भेदभाव का सामना करती हैं)। 'सामाजिक अपवर्जन' परिप्रेक्ष्य, हानि या नुकसान के इन भिन्न अनुभवों के बीच अतिव्यप्ति की ओर ध्यान खींचता है, दूसरे शब्दों में, उन व्यक्तियों और समूहों के अनुभवों की ओर ध्यान खींचता है जो, अपनी गरीबी के अतिरिक्त, अपनी पहचान के कारण भेदभाव का सामना करते हैं, जो उनके समाज की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक परिचालन में बराबर के आधार पर सहभागिता करने की उनकी क्षमता को कम करता है।

सामाजिक अपवर्जन का एक और आयाम है जो आर्थिक वंचन और सामाजिक भेदभाव के बीच अंतःक्रिया द्वारा पूरा अनुभव नहीं जा सकता है, जो कि स्थानिक है (आप जहाँ हैं)। स्थानिक हानि अवस्थान की दूरी और एकांतता में स्थित हो सकती है जो कि उसके निवासियों के लिए ज्यादा व्यापक सामाजिक–आर्थिक प्रक्रियाओं में प्रतिभागिता करना भौतिक रूप से कठिन बना देती है या यह शहरी वातावरण और हिंसा, आपराधिता, नशीले पदार्थों पर आश्रितता और गंदगी की 'उपसंस्कृतियाँ' की पृथकता के जरिए कार्य कर सकती है।यह उप संस्कृतियाँ प्रायः क्षेत्रीय रूप से अपवर्जित या बिल्कुल अलग पड़ोस/इलाकों को चित्रांकित करती हैं।

अपवर्जन का स्थानिक आयाम उसके रिसोर्स तथा पहचान आयामों से पूर्णत्या पृथक नहीं है क्योंकि आमतौर पर सांस्कृतिक रूप से निम्न कोटि और आर्थिक रूप से दरिद्र समूह ही होते हैं जो भौतिक रूप से वंचित स्थानों पर निवास करते हैं। परिणामस्वरूप, कुछ संदर्भों में, वंचन तथा भेदभाव के प्रतिच्छेदन (मिलन बिंदु) पर आधारित सामाजिक अपवर्जन के द्वि–आयामी मॉडल के जरिये सामाजिक अपवर्जन के कारणों तथा परिणामों को अनुभव करना संभावित हो सकता है। दूसरों में, हमें तीन–आयामी मॉडल की जरूरत हो सकती है क्योंकि अवस्थान, आर्थिक या सांस्कृतिक हानियों से जुड़े प्रभावों को छोड़कर, अलग स्वतंत्र प्रभाव डालता है।

सामाजिक अपवर्जन के इस दृष्टिकोण का विश्लेषणात्मक 'मूल्य वर्द्धन' यह है कि समूह पहचान, सांस्कृतिक अवमूल्यन तथा सामाजिक भेदभाव पर साहित्य, जिसे आर्थिक वंचन के विश्लेषण में पर प्रयुक्त किया जाएगा, से ये अंतर्दृष्टियाँ प्राप्त करने में सहायता कर

सकता है। अतः हम पाते हैं कि कई संदर्भों में, नितांत या लम्बे समय से गरीब, बाकी गरीबों के 'बिल्कुल समान' नहीं है, सिर्फ ज्यादा गरीब या ज्यादा लम्बे समय से गरीब, परंतु वे अपनी पहचान के 'वे कौन हैं' पहलुओं द्वारा अतिरिक्त हानिकर स्थिति में होते हैं जो उन्हें बाकी गरीबों से बिल्कुल अलग करती है। यह इस बात को समझने में भी सहायता करती है कि गरीबों के कुछ वर्ग, अपने श्रम समेत सुविधानुसार उपयोगीर्थ अपने संसाधनों को अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की संतुष्टि में तबदील करना क्यों दूसरों से ज्यादा कठिन पाते हैं। यह 'रुपांतरण समस्या' जब कि कभी–कभी वैयक्तिक क्षमता में भिन्नताएं प्रगट कर सकती है, जब यह समाज में अलग–अलग वर्गों द्वारा क्रमबद्ध रूप से अनुभव की जाती है, और जब यह समूह सामाजिक सोपान क्रम में सुस्पष्ट रूप से अभाव ग्रस्त स्थिति में रहते हैं, जो यह सामाजिक रूप से उनकी अपवर्जित प्रस्थिति या दर्जे का परिणाम हो सकता है।

**ckèk iz'u 1**

ukV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।
ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. सामाजिक अपवर्जन को परिभाषित कीजिए।

..............................................................................................................
..............................................................................................................
..............................................................................................................
..............................................................................................................

2 अपने क्षेत्र में गरीब महिलाओं की पहचान करें और उनके साथ अंतःक्रिया करें। उन्हें जिन असुविधाओं का सामना करना पड़ रहा है उनकी और उसके आयामों की सूची बनाइये। ज्ञात करें कि उन्हें किस प्रकार के अपवर्जन (या पृथकता) का सामना करना पड़ रहा है?

..............................................................................................................
..............................................................................................................
..............................................................................................................
..............................................................................................................

## 18-5 lkekftd otZu dh fØ;kfofèk;k

इसलिए सामाजिक अपवर्जन के स्पष्टीकरण को दूसरों के प्रति कुछ व्यक्तियों की सनक भरी या कृपा दृष्टि (या अधिमान्यता) या अपसामान्य व्यवहार में बदला नहीं जा सकता है। इसे असमानता के सांस्थानिक रूप में देखा जाना चाहिए यानि कि अपनी जनसंख्या के सभी वर्गों को आर्थिक संसाधन एवं सामाजिक मान्यता ये जो सब लोगों को समाज के सामूहिक जीवन में पूर्ण रूप से प्रतिभागिता करने के लिए आवश्यक होती है। प्रदान करने में समाज की विफलता अतः सामाजिक अपवर्जन का विश्लेषण सांस्थानिक नियमों, संबंधों एवं प्रक्रियाओं से सरोकार रखता है जिनके जरिये संसाधनों का वितरण किया जाता है और समाज में मूल्य निर्दिष्ट किया जाता है, विशेष रूप से उन क्रियाविधियों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है जिनके द्वारा 'गम्यता' एवं मान्यता प्रदान

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

की जाती है या उस से वंचित रखा जाता है। इस खंड में हम कुछ ऐसे तरीकों पर विचार करेंगे जिन तरीकों से यह कार्य करते हैं।

आर्थिक सिद्धांत गम्यता तथा अपवर्जन को समझने के एक तरीके के रूप में 'खुले' तथा बन्द समूहों के बीच महत्वपूर्ण अंतर को बताता है। बन्द समूह (जैसे कि राजनीतिक दल, सामाजिक आंदोलन) वे हैं जो अपने उद्देश्यों को अपनी सदस्यता को विस्तरित करके पूरा करते हैं क्योंकि वे जिन सुविधाओं के लिए चेष्टा करते हैं उनमें सदस्यता में वृद्धि के साथ वृद्धि होती है और यह वृद्धि नये सदस्यों की भर्ती की तुलना में अधिक पड़ती है। इसके दूसरी ओर खुले समूह (मजदूर संघ, कार्टेल, व्यावसायिक संघ) अपने उद्देश्यों को कुछ स्वीकृत नियमों के समुच्चय या समूह एवं के आधार पर अपनी सदस्यता को प्रतिबंधित करके प्राप्त करते हैं। उदाहरण के लिए, 'वितरणात्मक गठबंधन पर ऑलसेन का कार्य साधनों के रूप में प्रतिबंधित सदस्यता के उपयोग की ओर ध्यान खींचता है जिसके द्वारा कुछ समूह एकसाथ, अपने बीच प्रतिस्पर्धा को प्रतिबंधित करने और साथ ही गैर सदस्यों को लाभों से बाहर रखने के समझौते से उत्पन्न होने वाले भाड़े पर अधिकार जमाने की चेष्टा करते है 'क्लब्स' पर बुचानन का कार्य बताता है कि ऐसी अपवर्जी युक्तियाँ किसी भलाई के साथ कार्य कर सकती हैं। भलाई की उपयोगिता सदस्यों के बीच गैर–प्रतिद्वंद्वी उपयोग को सदस्यता पर प्रतिबंध के साथ उस बिन्दु पर संयोजित करने पर निर्भर करता है जहाँ भलाई तक वर्द्धित गम्यता मौजूद सदस्यता के लिए उसकी उपयोगिता की कम कर देगी।

समाज में मूल्यवान वस्तुओं तक गम्यता सीमित करने के लिए, सदस्यता नियमों का उपयोग, समाज में लाभ एवं अलाभ का वितरण निर्धारित करने में स्पष्ट रूप से महत्वपूर्ण क्रियाविधि हो सकता है। तथापि, आर्थिक सिद्धांत ऐसे समूह गठन का सामान्य रूप से वैयक्तिकवादी तथा स्वैच्छावादी स्पष्टीकरण प्रदान करते हैं। वो समूह की उन असमानताओं को संबोधित नहीं करते हैं जो कि व्यक्तियों के जानकार लागत–लाभ कलन द्वारा अनिवार्य तौर पर नहीं परंतु ऐसी शक्तियों द्वारा सृजित होती हैं जो उनके नियंत्रण से परे है। इसके दूसरी ओर, संरचनावादी दृष्टिकोण उन प्रक्रियाओं की सर्वांगी प्रकृति को रेखांकित करते हैं जो लोगों को समूहों, श्रेणियों और नेटवर्कों में वर्गीकृत करती हैं, कुछ को दूसरों की लागत पर विशेषाधिकार सम्पन्न करती हैं। जब कि ऐसे वर्गीकरण उन लोगों जो अब विशेषाधिकार प्राप्त कर बैठे हैं के भौतिक हितों को बढ़ावा दे सकते हैं, सामाजिक विश्लेषण इन वर्गीकरणों की रूपरेखा तैयार करने और उनका वैधीकरण करने और समयोपरि उन्हें पुनः प्रकाशित करने में मदद करने के लिए सामाजिक पहचान, 'हमें' और 'उन्हें' के सांझे अवबोधन की शक्ति की ओर ध्यान खींचता है। निस्संदेह, ऐसे सामाजिक संबधों पर आधारित पहचान आर्थिक हित के सरोकारों को लांघ सकती है।

'दिए हुए' और 'चुनिन्दा' समूहों के बीच फॉल्बर का भेद, समापन की प्रक्रियाओं के ज्यादा संरचनावादी विश्लेषण को समेकित करने के लिए बन्द तथा खुले समूहों के बीच भेद को खंडित करने का एक तरीका है। जबकि चयनित स्पष्ट रूप से वो हैं जिसमें व्यक्ति अपनी मर्जी से शामिल होते हैं और जिसे वे अपनी मर्जी से छोड़ भी सकते हैं, वे समूह सब समान रूप से बंद नहीं है। उदाहरण के लिए, नागरिक समाज का संबद्धमूलक जीवन सामान्य रूप से 'चयनित' प्रकार की सदस्यता से बना है, जैसे संघों के ठोस उदाहरण– जैसे कि ऑक्सफैम, स्वनियोजित महिला संघ, स्वतंत्र मजदूर संघ अंतरराष्ट्रीय का परिसंघ, दी फ्रीमैसन्स और दी क्लू क्लाक्स क्लान – यह दर्शाने के लिए काफी है कि वे इस बात में काफी भिन्न–भिन्न है कि वे कितना खुला है और किस के प्रति।

इसकी दूसरी ओर, 'दिए हुए' समूह, और अतिरिक्त विशेषता कि उनमें सम्मिलित होना कम आसान है और उन्हें छोड़ना कम आसान है के साथ परिभाषा से खुले समूह है। कुछ समूह पहचानों तथा सदस्यताओं का सामाजिक रूप से आरोपित स्वरूप, जो उन्हें 'प्रदत्त' तथा अपरिवर्तनीय की शक्ल दिये जाने पर, हमें स्मरण कराता है कि व्यक्तिगत चुनाव पर समूह—आधारित प्रतिबंध है और कि ऐसे सभी प्रतिबंध आर्थिक प्रकृति के नहीं हैं। लोग हमेषा यह चयन करने की स्थिति में नहीं होते हैं कि वे कौन हैं, वो कहाँ से हैं और वे किस प्रकार से देखे या समझे जाना चाहते हैं, और इसके लिए जिम्मेदार कारणों का इस बात से कोई सरोकार नहीं होता कि उनकी अपनी सम्पत्ति क्या है या वे क्या कमाते हैं।

तथापि, इसके साथ ही, यह ध्यान में रखना चाहिए कि 'चयनित' तथा 'दिए हुए' या प्रदत्त के बीच परिसीमाएं हमेषा स्पष्ट नहीं होती हैं न ही वे हमेषा अनिवार्य तौर पर स्थायी होती हैं। 'दी हुई' प्रजातीय पहचान जो समाज द्वारा कलंकित है शायद समयोपरि उस प्रजातीय समूह के सदस्यों द्वारा स्वीकार कर ली जाए और गर्व के स्रोत के रूप में रूपांतरित हो जाए। सामाजिक अपवर्जन के 'अनुमान संबंधी' या संशयात्मक रूप भी हैं जो वैयक्तिक सदस्य की, उसके जीवनावधि के दौरान, वास्तविक या अनुभूत स्थिति में परिवर्तनों के कारण उत्पन्न होते हैं।

बाक्स 18.1 : सामाजिक अपवर्जन के अनुमान संबंधी रूपों के उदाहरण

> जैसा कि हैरिस व्हाइट ने भारत में बेसहारा लोगों के समूह के अपने अध्ययन में संकेत किया है कि नशे, बीमारी या अपंगता के फलस्वरूप देह के परिवर्तन प्रायः परिवार या समुदाय संबंधी नेटवर्कों से व्यक्ति के अपवर्जन के कारण का काम करते हैं जैसे कि समावेशन के कुछ मानकों – 'शुद्ध स्वच्छ प्रथाएं' स्वस्थ्य अवस्था, सामान्य कामुकता एवं अनुकूल व्यवहार का, उल्लंघन करता है।

सामाजिक अपवर्जन के संशयात्मक रूप संकट के समय में भी उत्पन्न होते हैं। जब परिवार अधिक गरीबी में गिरने लगते हैं सांस्कृतिक नियम और वर्गीकरण व्यवस्था यह निर्धारित करने के लिए सक्रिय हो जाते हैं कि किसे उसकी सबंल या सपोर्ट व्यवस्था से निकाला जाएगा। कुछ श्रेणी के सदस्य— स्त्रियाँ, व्यस्क, बहुत छोटे, अपंग, आर्थिक गतिविधियों जिन्हें कि वे कर सकते हैं, सीमा एवं रूपों में, सामाजिक रूप से लागू किए गए प्रतिबंधों का सामना करते हैं, और अपने को अन्य ज्यादा सुविधा प्राप्त सदस्यों पर वृहदतर कोटि में आश्रित बना देते हैं। जब पारिवारिक अर्थव्यवस्था दुर्बल होने लगती है तो इन वर्गों का सामाजिक अपवर्जित वर्ग बन जाना ज्यादा संभावित होता है। इसके अतिरिक्त, अपने खुद के लिए व्यवस्था करने की उनकी योग्यता पर प्रतिबंधों के कारण, जिन व्यक्तियों उनके लिए व्यवस्था करनी थी उनकी मृत्यु, अभित्यजन और परित्याग के कारण हानि, सामाजिक अपवर्जन की क्रियाविधि का कार्य कर सकती है।

सामाजिक अपवर्जन के संशयात्मक रूपों की मौजूदगी बताती है कि पहचान तथा अपवर्जन के बीच संबंध व्यक्ति के जीवनावधि के दौरान अनिवार्यतः परिभाषित नहीं होता है परंतु विशेष घटनाओं के परिणाम स्वरूप पैदा हो सकता है। 'परिवर्तनशील' तथा 'अपरिवर्तनशील' पहचानों के बीच अश्वनी सैथी द्वारा बताया अंतर हमें स्मरण कराता है कि पहचान के कुछ रूपों को दूसरों की तुलना में तजना ज्यादा मुश्किल होता है। सामाजिक अपवर्जन के 'परिवर्तनशील' रूप अस्थाई परिघटना से संबंधित होते हैं जैसे कि पराए वातावरण में सीमित समया व्यतीत करने वाले प्रवासियों को सामना करना पड़ता है, या तुलनात्मक आसानी से रुपांतरित की जा सकने वाली पहचाने उदाहरण के लिए, धर्म परिवर्तन के जरिये या औपचारिक नागरिकता प्राप्त करके। इसके विपरीत,

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

'अपरिवर्तनशील' पहचान, उन पहचानों और संबंधों से संबंध रखती है जो लम्बी समयावधि में विकसित हुई हैं, करीब–करीब आदिम प्रकृति के प्रतीत होते हैं और अपने को आसानी से परिवर्तित नहीं होने देती है। यह पहचान सामाजिक अपवर्जन के स्थायी रूपों के साथ जुड़ने की प्रवृति रखती है, जो व्यक्ति की जीवनावधि या कई पीढ़ियों तक चिरस्थाई बनी रहती है।

व्यक्ति, समूह की सदस्यता जिस आसानी से ग्रहण कर सकने या छोड़ सकने में सक्षम होते हैं, समूह पहचान (स्टीवार्ड) के कुछ रूपों की यह 'परिवर्तनशीलता' अपने सदस्यों के लिए समूह सदस्यता के अनुभव निर्धारित करने में महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। विशेष रूप से, अवमूल्यित समूह प्रास्थिति से बाहर निकल जाने या सामाजिक सीढ़ी से ऊपर चढ़ने की संभाविता यह निर्धारित करने में सहायता करेगी। कि समाज में भिन्न समूह समाज में अपने सांस्थानिक व्यवस्थाओं के न्याय में सामूहिक विश्वास और उसके भविष्य में सामूहिक उत्तरादायित्व के साथ नागरिक की भांति किस सीमा तक सोचते है और क्रिया करते है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

अतः, संक्षेप में, सामाजिक अपवर्जन का जिस प्रकार इस इकाई में प्रत्ययीकरण किया गया है वह, वो व्यक्ति जो अंदर हैं और वो व्यक्ति जो 'बाहर' हैं के बीच अंतर करने वाले द्विआधारी मॉडल के आवश्यक नहीं बनाता है, परंतु इसके बजाय असुविधाजनक शर्तों का संकेत करता है जिन पर, सामाजिक रूप से अपवर्जित समूह एवं वर्ग अपने समाज के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यकारिता में प्रतिभागिता करते हैं। ऐसी अभाव ग्रस्तता विभिन्न एवं असंख्य तरीकों में और जीवन के सभी क्षेत्रों में प्रकट होती है। उदाहरण के लिए यह निम्नलिखित के जरिये कार्य कर सकती है।

- शोषण के उच्च स्तर, ताकि सामाजिक रूप से अपवर्जित समूह, सर्वाधिक रूक्ष कार्य स्थितियों में बद्दतर प्रदत्त मजदूरी के कामों में और अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के सर्वाधिक असुरिक्षत हाशियों में कार्य करते हुए पाए जाएंगे।

- असममित दाता – मुवक्किल का संबंध जिसमें अपवर्जित समूहों के सदस्य समाज के ज्यादा शक्तिशाली वर्गों से संरक्षण एवं सुरक्षा के बदले में अपने श्रम, निष्ठा और स्वतंत्रता का लेनदेन करते हैं।

- सामाजिक रूप से मान्य प्रकार की जीविका गम्य करने में अपवर्जित समूहों के समक्ष अवरोधों की स्थिति में आपराधिक, गैर–कानूनी या कलंकित क्रियाएं करना।

- चरम रूपों की अभावग्रस्तता के बीच 'विनाशक सहक्रियाओं' के द्वारा उत्पन्न अपवर्जन के कठोर रूप। भारतीय संदर्भ में निराश्रितता के हेरिस––व्हाइट के विश्लेषण ने पाया कि, गरीबी तथा परिसम्पत्तिविहीनता के साथ–साथ निराश्रित या अभावग्रस्त व्यक्तियों को 'कलंकित' पहचानों (मानसिक रूप से बीमार, कुष्ठ रोग या एड्स से ग्रस्त, भिन्न नशीले पदार्थों के व्यसनी, अनाथ एवं दुर्व्यवहार से पीड़ित बच्चे, परित्यक्त व्यस्क तथा अपंग) द्वारा, समुदाय में उनके स्थान के खतरनाकपन द्वारा (बहुत से आश्रयहीन थे और सड़क किनारे रहते थे) और निम्न प्रकृति की जीविकोपार्जन की उनकी गतिविधियों जो या दूसरों के द्वारा चरम स्तर का शोषण आवश्यक बनाती है (जैसे कि बंधुआ श्रम में), चरम स्तर के स्व शोषण (देह का लेन देन, जैसे कि यौन कार्य में, शरीर के अंगों की बिक्री), या अनिश्चित रूपों के दान, (भीख मांगने को सामान्यत्या निराश्रितता के साथ जोड़ा जाता है)।

## 18-6 lkekftd :Ik l cfg"dr@vioftr leg ,o Jf.k;k

विश्व के भिन्न भागों से सामाजिक अपवर्जन के कुछ उदाहरण उनके भिन्न रूपों जो वो ग्रहण कर लेते हैं उन्हें और सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों एवं वर्गों के बीच अंतर को प्रदर्षित करने का कार्य करेंगे। नृजातीयता, जाति और प्रजाति (नस्ल), विकास साहित्य में समूह–आधारित अपवर्जन के सर्वाधिक आनुभविक रूप से प्रलेखित उदाहरण हैं, हालांकि संदर्भ अनुसार उनका महत्व अनुसार भिन्न–भिन्न है। धर्म भी विभेदीकरण की महत्वपूर्ण धुरी है और विशेष संदर्भों में या विशेष समयों पर अपवर्जी विशेषता ग्रहरण कर लेता है। यहूदी समाज के साथ भेदभाव का यूरोपियन इतिहास है जो कि यूरोप के कई देशों के यहूदी समुदायों के घेटाईकरण में सुस्पष्ट है और आज जहरीली शक्ति बनकर रह गया है। भारतीय संदर्भ में जब कि धार्मिक अल्प संख्यकों के सभी सदस्य गरीब नहीं है, परंतु जो गरीब हैं उन्हें आर्थिक वंचन तथा सामाजिक भेदभाव से जुड़ी बहुमुखी अभावग्रस्तताओं के साथ जूझना पड़ता है।

भारतीय जाति व्यवस्था, पिछले खंड में चित्रांकित सामाजिक अपवर्जन के मॉडल का उदाहरण कई ढंगों में प्रस्तुत करती है। भिन्न जाति समूहों के बीच मतभेद/विभाजन समयोपरि ज्यादा से ज्यादा सृदृढ़ता के साथ संस्थापित और बंद अधिश्रेणियों में उद्विकसित हुए जो कि सजातीय विवाह, व्यावसायिक प्रतिबंध, सीमित समाजिक अंतःक्रिया और पृथक–पृथक आवासीय पैटर्नों पर आधारित है। जबकि भिन्न क्षेत्रों में जाति के वास्तविक संरुपणों में, और जिस कठोरता या सख्ती के साथ जाति के नियमों का पालन किया जाता था उसमें काफी भिन्नता है, प्रत्येक स्थानीय, जाति अधिक्रमण में निम्नतम स्थिति 'अस्पृश्य' व्यक्ति या दलितों की होती है। ऐतिहासिक रूप से भूमि के स्वामित्व और मुख्य उत्पादक परिसम्पत्तियों से अपवर्जित दलित सामाजिक तंत्र में, विभिन्न प्रकार के श्रम एवं सेवाओं जो प्रदूषित समझी जाती थी के प्रदायकों के रूप में समेकित कर लिए गए हैं। इन्हीं जातियों के सदस्यों को मल तथा मृत पशुओं की लाशों को हटाने का कार्य करना पड़ता था। झाड़ू लगाने, चमड़े के काम, कूड़ा–करकट बीनने और बलात् वेश्यावृत्ति के काम तथा वो सब काम जो बाकी समाज के द्वारा निम्न समझे जाते हैं उनमें दलितों का प्राबल्य बना हुआ।

समूह पहचान का अन्य रूप नृजातीयता है जिसने सम्पूर्ण विश्व में सामाजिक अपवर्जन के आधार के रूप में काम किया है। 'देशी' नृजातीय अल्पसंख्यक प्रायः कठिन या दूरस्थ भौगोलिक क्षेत्रों में अवस्थित होते हैं, जिसने उनकी जीवन–शैली को परिरक्षित होने दिया या बड़े युगों रुपांतरण के जरिए उपेक्षित होने दिया हैं। उदाहरण के लिए एशियाई संदर्भ में, जॉर्गनसेन ने बताया है कि पर्वतीय मालाएं जो अफगानिस्तान से लेकर टोंकिन्स की खाड़ी तक फैली हैं उन देशी समुदायों के लिए आश्रय स्थल रही, जिन्होंने विभिन्न कारणों से, घाटियों एवं समतल मैदानों में प्रभुत्वशाली बहुसंख्यकों की तुलना में सीमान्त स्थान पर अधिकार जमाया।

वियनतनाम में, नृजातीय अल्पसंख्यक जनसंख्या का लगभग 10% हैं। वे लोग अधिकांशतः दूरस्थ, सामान्यत् देश के उत्तरी एवं केंद्रीय क्षेत्रों के उच्च भूमि एवं पर्वतीय क्षेत्रों में केंद्रित है जहॉ सेवाओं की गम्यता बहुत कम है और बुनियादी ढांचा बहुत छोटा है। बहुतों की जीवन शैली यायावर या अर्द्ध–यायावर हैं। उदाहरण के लिए, मोंग एवं डाओ मूलतः दक्षिणी चीन से हैं (जहॉ दूसरा समूह मिआओ के नाम से जाना जाता है)। वे लोग ऊंचे स्थानों पर स्विडन (Sweden) खेती किया करते हैं और आज भी वहीं कर रहे हैं, अक्सर अपने खेतों तक पहुँचने के लिए हफ्ता भर पैदल चलते हैं, जो राष्ट्रीय सीमाओं के पार भी स्थित हो सकते हैं। वर्षा निम्न है, भूमि अनुपजाऊ है और कृषि के लिए जल गम्यता अत्याधिक अनियमित है।

भारतीय संदर्भ में जबकि नृजातीय समूह हर हालत में समरूप है, वे लोग बाकी समाज से पृथक हैं या थे, न केवल विश्व के बारे में अपने अलग दृष्टिकोण और जीवन शैली के कारण अलग हैं/थे, परंतु उनके भौतिक आवासस्थान या उनकी यायावर जीवन शैली के कारण भी वे लोग बाकी समाज से दूर या अलग है या थे। सामान्यत्या वे लोग सीमित संख्या के भौगोलिक क्षेत्रों में केंद्रित होते हैं, बजाय देशभर में फैले हुए होने के, जैसे कि अनुसूचित जाति के लोग। अनुसूचित जाति समूहों की तुलना में उनके पास कुछ भूमि हो सकती है परंतु उनकी भूमि सामान्यत्या दुष्कर एवं अनुत्पादक क्षेत्र में होती है और इसलिए बहुतों के जीवित रहने के लिए मजदूरी पर कार्य की चेष्टा करनी पड़ती है।

लेटिन अमेरिकन संदर्भ में, सामाजिक अपवर्जन मोटे तौर पर क्षेत्र में प्रजातीय एवं नृजातीय परंपरा का अनुपालन करता है। यह स्पेनियों एवं पुर्तगालियों द्वारा क्षेत्र के उपनिवेशीकरण, उसकी देशीय जनसंख्या के दमन और उसकी खानों तथा बागानों में काम करने के लिए अफ्रीका से गुलामों के आयात के साथ घनिष्ट रूप से संबंधित है। इस क्षेत्र में जनसंख्या के महत्वपूर्ण अनुपात 'सामाजिक रूप से अपवर्जित' समूह हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, देशीय लोग लेटिन अमेरिका की जनसंख्या का लगभग एक दसवां हिस्सा है, परंतु गाउतमेला एवं कुछ एंडिअन् देशों में वे लोग जनसंख्या का आधा या ज्यादा भाग है। अफ्रीकी (या एफ्रो) वंशज कुल मिलाकर जनसंख्या का शायद 30% हैं, परंतु वे उत्तरी–पूर्वी ब्राजील के राज्यों में बहुतायन में रहते हैं। अपवर्जन का शक्तिशाली स्थानिक आयाम है। बूसो एवं अन्य द्वारा अध्ययन से पता चला है कि 45% से ज्यादा देशीय एफ्रो वंशज, बहुत कम सुविधाओं एवं संचार सेवाओं के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं, परंतु कुछ देशों में संख्या 80% से भी ज्यादा बढ़ गया। देशीय समूहों का भौतिक रूप से दूरस्थ एवं दुश्कर वातावरणों में भरण–पोषण हेतु खेती करना संभावित है, जबकि एफ्रो–वंशजों का मजदूरी हेतु श्रम कार्य करना ज्यादा संभावित है।

सब–सहारा अफ्रीका में, जहाँ भिन्न नृजातीय समूह स्वैच्छिक रूप से, और प्रायः असमान रूप से, औपनिवेशिक राज्यों के क्षेत्रों में और तदन्तर स्वतंत्र राष्ट्रीय व्यवस्थाओं में इकट्ठे हो गए थे, नृजातीयता तथा सामाजिक अपवर्जन के बीच साहचर्य को संरचनात्मक बहुवाद अत्याधिक प्रतिस्पर्धात्मक और इस कारण सर्वाधिक अस्थिर बना देता है, जिस कारण भिन्न नृजातीय समूह इतिहास के भिन्न कालों में प्रभुत्व का प्रयोग करते रहे हैं। नृजातीय विभाजनों के अपवर्जनकारी फलितार्थ सर्वाधिक स्थाई एवं महत्वपूर्ण हैं जहाँ इसने प्रजातीय स्तरीकरण का रूप ले लिया यानि कि अफ्रीका के उन भागों में जहाँ औपनिवेशिक शासक स्थानीय जनसंख्या को विस्थापित बेदखल करके न केवल बड़ी संख्या में बस गए थे, परंतु आज भी अर्थव्यवस्था में उनकी महत्वपूर्ण विद्यमानता है। उत्तर प्रजाति–पार्थक्य या रंगभेद की नीति सरकारी रूप से स्वीकृत पृथकता एवं पृथक विकास, के इतिहास के फलस्वरूप विश्व में सर्वाधिक असमान समाज में से एक बना हुआ है। इसने सामाजिक–आर्थिक असमानताओं को सुव्यक्त रूप से प्रजातीय परम्पराओं के साथ–साथ आमूल चूल रूप से पुनर्बलित कर दिया था।

अफ्रीका के संदर्भ में, नृजातीयता आधारित अपवर्जन के अन्य उदाहरणों के धार्मिक आयाम भी हो सकते हैं। और विग एवं अन्य (2001) ने सूडान के कुछ भागों में 'दास प्रथा' के ऐसे रूपों की मौजूदगी का संकेत किया है जहाँ नेशनल इस्लामिक फ्रंट के सिपाही गुलामों, प्रायः बच्चे, को बेचते थे, जो उत्तर में मुसलमानों अरब को बेचने के लिए दक्षिण के जीवत्वारोपी या जीववादी एवं इसाई (अफ्रीकी) गाँवों से पकड़े जाते थे मोरिटेनिया में, बेर्बर जनजातियाँ हमला करके टुकुलोर, फुलानी एवं वोलोफ नृजातीय समूहों से गुलाम पकड़ा करती हैं। यहाँ भी प्रजातीय आयाम है परंतु इस मामले में, या

दास बनाने वाले तथा दास दोनों मुसलमान हैं। वुडबर्न के अनुसार, भरण–पोषण के ढंगों में भिन्नताएं प्रायः नृजातीय भिन्नताओं के साथ मिलती जुलती हैं और अपवर्जन की धुरियों के रूप में प्रचालन कर सकती हैं। भरण–पोषण के तीन व्यापक ढंग उपद्वीप की विशेषताएं हैं : कृषि, यायावर चारागाहिता और यायावर आखेट एवं संग्रह। इनमें से प्रत्येक समूह जबकि दूसरों के साथ नकारात्मक मूल्य जोड़ सकता है, उनका कहना है कि दूसरों के द्वारा कलंक तथा उनके समाज में दूसरों के द्वारा आखेट एवं संग्रहवृत्ति को लगाए लांछन एवं थोपी नकारात्मक रुढ़ियों की उग्रता उन्हें सामाजिक अधिक्रम में सबसे नीचे के स्थान में अवस्थित करती हैं, चाहे वे लोग अब अपना जीविकोपार्जन दूसरे साधनों, मुख्यतः कृषि श्रम के जरिए करते हैं। अधिकांश देशों में जहाँ वे पाए जाते हैं ऐसे समूह अल्पसंख्यक वर्ग में होते हैं परंतु जेयर, कोंगो, नाम्बिया और बोट्सवाना के कुछ भागों में ज्यादा बड़ा केंद्रीकरण हैं। समुदाय के अन्य वर्गों द्वारा उन्हें जंगली पशुओं की तरह से 'झाड़ियों' में रहने वाले, उन्हें बजाय 'सभ्य' (घरेलु पशुओं से मांस, दूध, अनाज, बीयर) खाना खाने के बजाय पशुओं का मांस जो कि दूसरों के द्वारा नहीं खाया जाता है खाने वाला, समझा जाता है। वे लोग प्रायः ऐसी भूमिकाएं अदा करते हैं जो उन लोगों जो उनके विरुद्ध भेदभाव करते हैं निगाह में उनके निम्न प्रास्थिति को पुष्टि करती है : मृत को दफनाना या उनके लिए सर्कमसाइज़रस (सुन्नत कर्त्ता) का कार्य करना जिनके लिए प्रदूषित काम है।

अपवर्जन के सुस्पष्ट रूप उन लोगों के विशिष्ट गुणों के इर्द गिर्द घूमते हैं जिनके पास भेदभाव को छोड़कर आपस में साझा बहुत कम हो सकता है। यह भी भिन्न संदर्भों में स्पष्ट रूप से भिन्न होंगे, परन्तु अपवर्जित वर्गों से सम्बन्धित साहित्य में जेंडर, आयु, प्रवसन, बीमारी, अपंगता और कलंकित व्यवसाय बारंबार प्रकट होते हैं। सब–सहारा अफ्रीका में, प्रथागत नियम के अंतर्गत जहाँ भू–गम्यता एवं अन्य अहम संसाधनों की गम्यता समूहों की सदस्यता पर निर्भर करती है और यह समूह सांझे वंश, सांझे आवास गृह या दोनों के कुछ संयोजन द्वारा सीमांकित होते हैं, भिन्न वर्गों के सदस्यों के भिन्न और कतारों में – दावों के समूह होते हैं। प्राथमिक दावेदार, सामान्यत्या विवाहित पुरुष गृह प्रधान होते हैं जिनकी प्रत्यक्ष गम्यता होती है जबकि महिलाओं और अविवाहित पुरुषों को प्रधान के जरिये गौण गम्यता मिलती है। अजनबियों जो उस कालोनी के नहीं हैं, को भू–गम्यता, के वही अधिकार नहीं प्राप्त हैं जो कि अन्दर रहने वाले को हैं, परंतु ऐसे तरीके हैं जिनके जरिये वे लोग कुछ गम्यता प्राप्त कर सकते हैं।

तथापि, अफ्रीका के बहुत से भागों में भूमि की कमी हो जाने से, 'भूमिहीन' जनसंख्या स्पष्ट दिखाई पड़ने लगी है, जिसमें सामान्यतौर पर, रिश्तेदारों के समूहों से गौण दावेदार, महिलाएं, युवा अविवाहित पुरुष एवं 'बाहरी' लोग होते हैं। भूमि पर जीविकोपार्जन के विकल्पों के प्रतिबंधित हो जाने से, लोगों को कृषिइतर अर्थव्यवस्था में व्यापारी तथा मजदूरी पर श्रमिकों के रूप में काम खोजना पड़ा, अक्सर अन्य क्षेत्रों या सीमा पार के क्षेत्रों में प्रवसन करना पड़ता है। इन श्रमजीवी समूहों के बिखरे अध्ययन बताते हैं कि सब–सहारा अफ्रीका में उम्र, जेंडर और प्रवासी दर्जा, शायद विभेदीकरण और अपवर्जन की धुरियों के रूप में उभर रहा है।

रोगग्रस्तता और अपंगता सामजिक अपवर्जन के सुनिश्चित रूपों के अन्य उदाहरण पेश करते हैं। विशेष रूप से कोढ़ का, चरम रूप के सामाजिक अपवर्जन के लिए समानार्थक के रूप में करीब–करीब कल्पित दर्जा रहा। घाना से एक गरीब सूचनादाता, जिसका गरीबों के साथ विश्व बैंक के मशविरा के एक भाग के रूप में साक्षात्कार किया गया था, ने बताया कि 'न तो कोढ़ न ही गरीबी कोढ़ी को मारती है बल्कि अकेलापन मारता है'। विश्व के अनेक भागों में, कोढ़, प्रभावित व्यक्तियों का उनके परिवारों एवं समुदायों

द्वारा बहिष्कृत होने और गरीबी एवं अनाश्रितता में उनकी अवनति से जुड़ा है। ज्यादा हाल ही में, एड्स कलंक संबंधित सामाजिक अपवर्जन के नवीन अवतार के रूप में उभरा है। जैसा कि वर्ष 2001 में प्रजातिवाद विरुद्ध विश्व सम्मेलन के संपूर्ण सत्र में पिऑट ने गौर किया कि : एचआईवी कलंक शर्म एवं भय के शक्तिशाली संयोजन से उभरा है. .. 'एड्स के साथ जी रहे लोगों के लिए दोषारोपण या दुर्व्यवहार के साथ एड्स के प्रति प्रतिक्रिया का प्रयास महामारी को छिपाने के लिए विवश करता है, और इस तरह से एचआईवी के फैलने के लिए आदर्श स्थितियाँ उत्पन्न होती हैं'। वास्तव में, एड्स द्वारा जगाए कलंक – संबंधित भेदभाव और कोढ़ से जुड़े कलंक के बीच शक्तिशाली समानताएं हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

जेंडर भी विश्व के कई भागों में चरम सीमा की गरीबी के आयाम के रूप में उभर रहा है। एशिया के ग्रामीण क्षेत्रों में और ज्यादा से ज्यादा अफ्रीका के सर्वाधिक गरीब 15–20% परिवारों की विशेषताओं का विश्लेषण कई अध्ययनों में प्रलेखित किया गया है। प्रेषक बताता है कि ऐसे परिवारों में पुरुषों की तुलना में प्रौढ़ महिलाओं का अनुपात अधिक हो सकता है और कि इनमें से बहुत सी महिलाएं कई वर्षों के लिए प्रौढ़ पुरुष की आय तक कोई पहुंच होना असंभावित होता है क्योंकि वो तलाक शुदा, विधवा या परित्यक्ता है और वो ऐसे पुरुषों के साथ रहती हैं जो अस्वस्थ, अपंग हैं या अन्य कारणवश आय उपार्जित करने या भेजने में अक्षम हैं। इन परिवारों की स्त्रियाँ कम या बिल्कुल पढ़ी–लिखी नहीं होती है, बहुतों के बच्चे उनके जीवन में बहुत जल्दी पैदा हो गए होते हैं और शिशु मृत्यु दर की उच्च दरें दर्ज की जाती है।

### ckèk i'u 1

ukV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. अपने क्षेत्र में बंद, खुले और संवृत और चयनित समूह की पहचान कीजिए और उनके साथ अंतःक्रिया कीजिए। उनके समूह संगठनों के लिए आधार के साथ समूहों को सूचीबद्ध कीजिए।

............................................................................................................

............................................................................................................

............................................................................................................

2. कृपया अपने क्षेत्र में भिन्न समुदायों में जाइए और अनुमानित या संशयात्मक रूपों के सामाजिक अपवर्जन की प्रथा का अवलोकन कीजिए।

............................................................................................................

............................................................................................................

............................................................................................................

3. अपने क्षेत्र से उदाहरण लेकर परिवर्तनशील एवं अपरिवर्तनशील अस्तित्वों/पहचानों को परिभाषित करें।

............................................................................................................

............................................................................................................

............................................................................................................

4. खंड 18.6 में, लेखक सामाजिक अपवर्जन के भिन्न समूहों एवं वर्गों के बारे में बात करते हैं। अपने क्षेत्र में स्थित किसी ऐसे समूह की पहचान करें और संक्षेप में स्पष्ट करें कि किस प्रकार सदस्य सामाजिक रूप से अपवर्जित हैं?

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

## 18-7 lkekftd viotu rFkk lglkfCn fodkl y{; ¼,e-Mh-thl½ % dN vuHkkfod ifj.kke

हमने पहले ही इकाई–1 में सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों का अध्ययन कर लिया है। अब हम विकास नीति के लिए सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा की प्रासंगिकता और किस प्रकार यह सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों के साथ अंतःसंबंधित ज्ञात करेंगे। विकास नीति के विश्लेषण के लिए सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा का मूल्यवर्द्धन प्रदर्शित करने का एक तरीका सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों की उपलब्धि के लिए उसकी प्रासंगिकता का परीक्षण करना है। इनमें, गरीबी को कम करने तथा मूलभूत मानव क्षमताओं को बढ़ावा देने के लिए स्थूल, समयबद्ध प्रतिबद्धताएं समाविष्ट हैं। विश्व के अधिकांश देशों द्वारा इन क्षमताओं को लेकर सहमति दे दी गई है और यह उन देशों जो इन लक्ष्यों पूरे नहीं कर पाएं हैं, कि मध्यकालिक गरीबी घटाओ रणनीतियों को प्रभावित कर सकती है। इस खंड में, हम इस बात की जांच करेंगे कि गरीबी, स्वास्थ्य और शैक्षिक परिणामों में असमानताओं – एमडीजी 8 के लक्ष्य 6 का फोकस – को समझने में सामाजिक अपवर्जन का परिप्रेक्ष्य किस सीमा तक योगदान कर सकता है। हम इस बात की जांच करेंगे कि इन लक्ष्यों की उपलब्धि में कमियाँ को गरीबी के विश्लेषण में आमतौर पर शामिल किए जाने वाले आर्थिक चरों के संबंध में किस सीमा तक स्पष्ट किया सकता हैं और किस सीमा तक वे समूह पहचान के पहलुओं को भी प्रकट करती हैं। और जहाँ साहित्य से संभव होगा, हम यह भी जांच करेंगे कि किस सीमा तक यह कमियाँ उपलब्ध संसाधनों में समूह असमानताओं का उत्पाद हैं और जहाँ वे उन समस्याओं को भी प्रकट करती हैं जिनका समूह को इन संसाधनों को अमूल्य उपलब्धियों में तबदील करने में सामना करना पड़ता है।

### 18-7-1 lkekftd viotu dk xjhch d vkiru ij iHkko

भारत में 2000 के राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे के आंकड़े बताते हैं कि अनुसूचित जाति ग्रामीण जनसंख्या का 20% है और इनमें से 38% गरीब हैं और जबकि अनुसूचित जनजाति ग्रामीण जनसंख्या का 11% है और इनमें से 48% गरीब हैं। नगरीय क्षेत्रों में, यह आंकड़े अनुसूचित जाति समूहों के लिए क्रमषः 14% और 37% के और अनुसूचित जनजाति समूहों के लिए क्रमशः 3% एवं 35% थे। इसके अतिरिक्त, वही आंकड़ा समुच्चय का उपयोग करते हुए अनुमान बताते हैं कि अल्पसंख्यकों (मुख्यतः मुस्लिम) के लिए गरीबी लगभग 30% थी और गैर–वंचित समूहों के लिए 16%। वर्ष 1993–94 और 2000 के बीच अनुसूचित जाति समूहों के बीच गरीबी में कुछ गिरावट आई, परंतु अनुसूचित जनजाति समूहों में बहुत कम। उत्तर प्रदेश (यू.पी.) और बिहार के लीविंग स्टैंडर्डस् मैज़रमेंट स्ट्डी जीवन के स्तर मापन अध्ययन (LSMS), 1998 से राजकीय स्तर का डेटा उपयोग करने पर, लुकास ने अनुमान लगाया है कि जनसंख्या गरीबी रेखा से जितना नीचे है अनुसूचित जाति/जनजाति समूह गरीबी रेखा से 1.5 बार नीचे हो सकते हैं, 25% का अन्तराल।

यह तथ्य कि, अनुसूचित जातियाँ जो भारत के विभिनन राज्यों में फैली हैं के विपरीत, अनुसूचित जनजातियाँ कुछ राज्यों के कुछ भागों में केंद्रित हैं, इसका अर्थ है कि राष्ट्रीय तुलनाएं पथभ्रष्ट कर सकती हैं। ज्यादा ठीक–ठीक चित्र उन राज्यों जिनमें अनुसूचित जनजातियों का उच्च केन्द्रीयकरण है उन पर फोकस करने से मिलता है। एक ऐसा राज्य उड़ीसा है जहाँ अनुसूचित जनजातियों का प्रतिशत अखिल भारतीय स्तर पर जनसंख्या के 9% की तुलना में 24% था। अनुसूचित जातियों का प्रतिशत लगभग राष्ट्रीय संख्या के बराबर था। अनुसूचित जातियों के आंकड़े दर्शाते हैं कि वर्ष 2000 में, अनुसूचित जनजातियों के मध्य गरीबी का आपतन अखिल भारत के स्तर पर 44% था, परंतु उड़ीसा में यह 72% था।

IGNOU
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

बहुत से अध्ययन बताते हैं कि सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों की गरीबी को परिसम्पत्तियों तथा शिक्षा में समूह असमानताओं के द्वारा स्पष्ट नहीं किया जा सकता है। ग्रामीण भारत पर 2000 के एन.एस.एस. आंकड़े को ग्रामीण भारत पर ग्रामीण भारत पर उपयोग करते हुए, दुबे ने पाया कि, व्यष्टि एवं पाविरिक विविध विशेषताओं (जैसे कि शिक्षा, व्यावसाय, आयु एवं परिवार मुखिया का जेंडर) को स्थिर रखते हुए, अनुसूचित जनजाति समूहों का बाकियों की तुलना में 19% ज्यादा गरीब होना संभावित था जब कि अनुसूचित जाति समूहों का 10% ज्यादा गरीब संभावित होना था। 'अन्य पिछड़ी जातियाँ' 5% और मुस्लिम 3% ज्यादा संभावित रूप से गरीब थे। शहरी क्षेत्रों में मुस्लिम बृहद अभावग्रस्त की स्थिति में होने लगते हैं जहाँ आय वितरण के निचले 20% में लगभग 40% मुस्लिम पाए गए जब कि हिन्दुओं का प्रतिशत 22% पाया गया।

यू.पी. से वर्ष 1993–94 के आंकड़े का उपयोग करने पर, कोज़ल एवं पार्कर ने 2003 में पाया कि एस.सी./एस.टी. परिवारों और अन्य परिवारों के बीच प्रति व्यक्ति उपभोग में अन्तर का आधे अन्तर को परिसम्पत्तियों में अंतरों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है जब कि दूसरा आधा अंतर उन्हीं परिसम्पत्तियों के प्रतिफलों में अंतरों के कारण था। एस.सी/एस.टी. परिवार शिक्षा में भी निम्नतर प्रतिफलों का कष्ट भोगते हैं। वर्ष 2002 में गर्ग एवं अन्य ने अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और दूसरों की गरीबी दरों को वियोजित किया और पाया कि आधे अंतर का श्रेय समूह की विशेषताओं (शिक्षा, व्यावसाय, जनांकिकी, अवस्थान) में भिन्नताओं को दिया जा सकता है और बाकी आधे अंतर को गरीब होने की संभाविता पर इन विशेषताओं के पड़ने वाले प्रभाव द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

जेंडर तथा पारिवारिक आय गरीबी के बीच संबंध को प्रायः साहित्य में पुरुष की तुलना में स्त्री प्रधान परिवारों की गरीबी द्वारा महसूस किया जा सकता है। दक्षिण एशियाई क्षेत्र में, साामान्यत्या, स्त्री–प्रधान परिवारों को वृहद्तर गरीबी से संबंधित पाया गया, हैं। वर्ष 2003 में, गंगोपाध्याय एवं वधवा द्वारा विश्लेषण दर्शाता है कि शहरी क्षेत्रों में स्त्री प्रधान परिवार पुरुष प्रधान परिवारों से ज्यादा गरीब थे परंतु ग्रामीण क्षेत्रों में, केवल उन स्त्री प्रधानों का पाया वृहद्तर गरीबी के साथ जुड़ाव पाया गया जो विधवा अथवा तलाकशुदा थी। अध्ययनों से यह भी पता चला है कि स्त्री–प्रधान परिवार, विशेष रूप से वो जहाँ कोई प्रौढ़ पुरुष सदस्य नहीं था और वो परिवार जहाँ रोगग्रस्त एवं अपंग सदस्य थे उनका इस अवधि के दौरान गरीबी में होना सर्वाधिक संभावित था। वर्ष 2003 में पाकिस्तान में किए गए सहभागी गरीबी आकलन ने सूचित किया कि जिन परिवार की स्त्री प्रधान एवं तलाक शुदा स्त्री प्रधान, विशेष रूप से जिनके छोटे आश्रित सदस्य थे, सभी प्रांतों में उन्हें नियमित रूप से बहुत गरीब माना गया।

इसके अतिरिक्त, पाकिस्तान में जहाँ अल्पसंख्यक धर्म के लोग जनसंख्या का मात्र 4% हैं, हाल ही के अनुमान से पाया गया कि गरीबी का भार धार्मिक अल्पसंख्यक समुदायों

में 40% था जबकि मुस्लिम बहुसंख्यकों के बीच 25% था। यह देखते हुए कि गरीबी पंजाब में लगभग 32% से लेकर उत्तर–पश्चिम सीमावर्ती प्रांत में 39% तक भिन्न–भिन्न हैं, नृजातीयता भी अपवर्जन के कारक के रूप में भी कार्य कर सकती है। वियतनाम में, राष्ट्रीय स्तर के अनुमान इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि नृजातीय अल्पसंख्यक स्पष्ट रूप से बहुसंख्यकों की तुलना में ज्यादा गरीब समूह है (चीनियों के साथ–साथ 'किन' को सामान्यतः इकट्ठे बहुसंख्यक के रूप में वर्गीकृत किया जाता है)। लुकास के अनुमान दर्शाते हैं कि वर्ष 2002 में उनका राष्ट्रीय गरीबी रेखा से 2.4 बार नीचे होने की संभावना थी कि  जो बाकी जनसंख्या से 43% अंक की दर से उच्च था। उत्तरोत्तर एल. एस.एम.एस. (LSMS 1999, 1998 और 2002) से डेटा दर्शाता है कि किन एवं चीनियों के बीच गरीबी में 54% से 31% से 23% तक गिरावट आई और जबकि नृजातीय अल्पसंख्यकों के बीच यह 86% से 75% से 69% तक कम हुई। केंद्रीय तथा उत्तरी वियतनाम की उच्च भूमि पर गरीबी के स्तर ज्यादा उच्च हैं, इन स्थानों में अल्पसंख्यक समूह केन्द्रित हैं और साथ ही गरीबी अंतराल माप के संबंध में ज्यादा गहन हैं। अध्ययन यह भी दर्शाते हैं कि गरीबी के परिणाम स्पष्ट करने में भौतिक अवस्थिति नृजातीयता के साथ अंतःक्रिया करती है। स्विंकल एवं टर्क के अनुसार, उत्तरी उच्च भूमि के क्षेत्रों में नृजातीय अल्पसंख्यकों की गरीबी में गिरावट नृजातीय अल्पसंख्यकों से सम्बन्धित संपूर्ण प्रवृति के समवर्ती पाई गई। उसी क्षेत्र में रह रहे किन्ह लोगों की संख्या दस वर्षों के अंदर आधे से ज्यादा कम हो गई है, यह किन्ह जनसंख्या के लिए संम्पूर्ण दर से ज्यादा शीघ्र दर से कमी आई। वर्ष 2001 में वेन दे वॉले एवं गुनेवेर्देना के अध्ययन ने नृजातीयता तथा अवस्थान के बीच अंतःक्रिया की पुष्टि की है। उन्होंने 1992–93 VLSM के डेटा को 2254 नृजातीय बहुसंख्यक परिवारों (किन्ह एवं चीनी) और देश के उत्तरी भाग में 85 कम्यूनों में रह रहें 466 नृजातीय अल्पसंख्यक परिवारों पर उपयोग करते हुए, प्रति व्यक्ति पारिवारिक उपभोग पर कई अन्य व्याख्यात्मक चरों के साथ–साथ भौगोलिक अवस्थिति तथा नृजातीयता के प्रभाव की जांच की।

परिणाम बताते हैं कि नृजातीय समूहों के बीच उपभोग स्तरों में अंतर इस तथ्य को प्रकट करते हैं कि अल्पसंख्यक वर्ग के लोग कम उत्पादक क्षेत्रों में रहते थे जहाँ भौतिक भूभाग दुश्कर, बुनियादी ढांचा दुर्बल और बाजार अवसरों तथा कृषि इतर कार्य की गम्यता निम्न थी। तथापि, इसके अतिरिक्त, ऐसा प्रतीत होता है कि जहाँ परिवार रहते हुए पाये गये थे उसने प्रति व्यक्ति उपभोग पर अन्य विभिन्न व्याख्यात्मक चरों के प्रभाव पर भी असर डाला : दुर्बल बुनियादी ढांचे के साथ कम उत्पादक भूमि और फलस्वरूप से सभी समूहों के लिए विभिन्न पारिवारिक विशेषताओं कम प्रतिफल पर गुजर बसर करने से, नृजातीय अल्पसंख्यकों के लिए प्रभाव कहीं ज्यादा शक्तिशाली था।

नृजातीय अल्पसंख्यकों के प्रति प्रशासनिक पूर्वाग्रह का प्रमाण जॉर्गेनसेन के द्वारा वियतनाम के उत्तरी उच्च भू भाग क्षेत्रों में सरकारी कर्मचारियों तथा नृजातीय समुदायों के बीच अंतक्रियाओं के विश्लेषण से प्राप्त होता है। उन्होंने गैर किया कि वियतनामी सरकार जबकि सभी वर्गों की जनसंख्या के लिए कृषि संबंधी परिपाटियों को सुधारने के लिए प्रतिबद्ध है, उच्च भूभाग क्षेत्रों में अल्पसंख्यक समूहों को कृषि विस्तार सेवा जिस भाषा में प्रदान की जाती थी वियतनामी थी जो कि कुछ ही अल्पसंख्यक बोलते थे और ये अत्याधिक गूढ़ और जटिल थी, प्रशिक्षण का प्रसंग (प्रायः अप्रासंगिक) और उसके समय निर्धारण ने (प्रशिक्षण प्रदान करने एवं उसके वास्तविक उपयोग के बीच बड़ा अंतराल)  इन सभी समूहों के बीच उनके प्रयत्नों को दुर्बल बनाने का कार्य किया। इसके अतिरिक्त, बहुत से सरकारी अधिकारियों के रवैये की वजह से सेवाएं प्रदान करने में उनकी प्रभावपूर्णता में कोई योगदान करना असंभावित था। मुद्रित सामग्री का सर्वेक्षण, जेंडर, प्रजाति/नृजातीयता और लेटिन अमेरिकन संदर्भ में अभावग्रस्तता के बीच

अंतर्क्रिया का दूसरा प्रमाण प्रदान करता है। ओलिंटो ने पाया कि नगरीय ब्राज़ील में अष्वेत एवं भूरी (ब्राऊन) महिलाओं ने कम श्वेत महिलाओं की तुलना में कम विद्यालयी शिक्षा प्राप्त की थी, उनकी परिवारिक आय निम्न और आवास स्थितियाँ ज्यादा खराब थीं। ब्राजील में, छोटे बच्चों के साथ परिवारों की गरीब महिला प्रधानों में मध्य अफ्रीकी वंश की महिलाओं का अनानुपातिक प्रतिनिधित्व था। वर्ष 2001 में, दुरिया एवं अन्य ने पाया कि बोलिविया एवं गौतमाला में गैर–देशीय स्त्रियों की तुलना में देशीय स्त्रियों का अनौपचारिक व्यावसायों में कार्य करना तथा किसी भी स्तर की विद्यालयी शिक्षा में निम्न प्रतिफल पाना काफी ज्यादा संभावित होता था। उन्होंने 13 देशों का अध्ययन किया जिसमें से 9 देशों में, महिला–प्रधान परिवारों, विशेष रूप से वो जहाँ छोटे बच्चे थे, का निम्न संसाधन वर्गों में अत्याधिक प्रतिनिधित्व पाया गया था। सब सहारा अफ्रीका, जहाँ गरीबी व्यापक है, के संदर्भ में, गरीब व्यक्तियों तथा समूहों को, श्रम समेत अन्य संसाधनों में भिन्नताएं उपयोग योग्य उनके श्रम को खाद्य पदार्थ या आय में तबदील करने की उनकी क्षमता, गरीबों के बीच काफी विभेदीकरण या भेदभाव उत्पन्न करती है।

फिर भी, गरीबों के सामाजिक संयोजन पर विखंडित आंकड़ों का अभाव इस तथ्य को छिपा देता है कि गरीबी की निरंतरता को स्पष्ट करने में सामाजिक अपवर्जन किस सीमा तक भूमिका निभाता है, इसमें दक्षिण अफ्रीका तथा जिमबांबे के प्रजातीय रूप से स्तरित समाजों को छोड़ कर बात कहीं गई है। जबकि दक्षिण अफ्रीका में जब से प्रजाति–पार्थक्य या रंगभेद समाप्त हुआ है, वहाँ अंतःप्रजातीय असमानता में कमी का अनुभव किया गया, परंतु असमानता के समग्र माप में यह प्रकट नहीं होता है क्योंकि वहाँ इसके साथ–साथ अंतरा–प्रजातीय असमानता में वृद्धि हुई विशेष रूप से अश्वेत बहुतसंख्यकों में, यह बात कुषल एवं अकुषल कार्मिकों की मजदूरी के बीच बढ़ते हुए अंतर तथा बढ़ती हुई बेरोजगारी में प्रकट होती है। जब कि वर्ग अब प्रजाति के साथ जुड़ा नहीं रहा, प्रजाति तथा गरीबी के बीच संबंध लुप्त नहीं हुआ है। दक्षिण अफ्रीका में आर्थिक अधिक्रम के शीर्श पर 12% परिवार हैं जो कुल आय का 45% कमाते हैं और प्रमुखत्या श्वेत वर्ग के हैं। मध्य में ज्यादा से ज्यादा बहु प्रजातीय मध्यम वर्ग तथा अफ्रीकी नगरीय कामगार वर्ग के है। दक्षिण अफ्रीका में आर्थिक अधिक्रम के निचले स्तर पर वो परिवार हैं जिनकी मुख्य उपार्जित आय कृषि या घरेलु सेवा में अर्द्ध–कुशल या अकुशल श्रम से आती है और साथ ही वो परिवार भी है जिनका कोई भी सदस्य रोजगार में नहीं था या वे लोग उद्यमी गतिविधि से नगण्य आय पर निर्भर रहते थे। यह लोग सम्पूर्ण परिवारों का 41% बनाते थे परंतु कुल आय का केवल 10% ही कमाते थे। वे मुख्यतः अश्वेत वर्ग के थे।

जिम्बाबवे से अध्ययन बताते हैं कि उसके वाणिज्यिक कृषि क्षेत्र ने ऐतिहासिक रूप से निम्नतम मजदूरी, रहने की बद्दतर स्थितियाँ और रोजगार के कम से कम सुरक्षित रूप प्रदान किए हैं (साकेकोनिये, 2003)। कई दशकों के लिए, भारी संख्या में खेत मजदूर प्रवासी थे जो भोजामबीक, मलावी और जांबिया के पड़ोसी देशों से लाए जाते थे, देशीय जिंबाबवीन लोग कार्य के इस रूप के कार्य से बचते थे। फिर भी, 2005 तक, वे लोग श्रम बल का लगभग 75% हो गए थे, बाकी प्रतिशत में प्रवासी तथा उनके वंशज थे। शीघ्रगामी भू–सुधार ने उस काल के दौरान दो–तिहाई खेत मजदूरों को अपना काम खोने को प्रवृत्त कर दिया था और इसके साथ थोड़ी बहुत सुरक्षा जो उन्हें मिलती थी वह भी उन्हें खोनी पड़ी। नब्बे के पूरे दश क के दौरान खाद्य पदार्थों की तेजी से बढ़ती कीमतों ने मुद्रा स्फीति को बढ़ाया और इसके साथ 2001–2002 में विनाशक सूखे के कारण खाद्य असुरक्षा भी अत्याधिक बढ़ गई। अक्टूबर 2002 में, मेटबेलैंड दक्षिण में अनुमानित 18%, मैशनालैंड पश्चिम में 21%, मेनीकालैंड में 31% और मैशोनलैंड पूर्व में 39% दिन में केवल एक बार भोजन की व्यवस्था कर पाते थे (साकेकोनिये) जबकि फोकस ग्रुप चर्चाएं बताती है कि खेत मजदूरों में कुपोषण एवं भुखमरी का प्रसार हो रहा था।

इसके अतिरिक्त, सेकीकोनी ने बताया कि दशकपरि अधिकांश खेत मजदूरों के बीच चिरकालिक गरीबी का अवरोहण कुछ संवेदनशील या शीघ्र प्रभावित होने वाले वर्गों : प्रवासी, आकस्मिक महिला मजदूर और विशेष आयु के वर्ग – बच्चे, युवा एवं व्यस्क जनों के बीच बृहद्तर था। प्रवासियों में जिंबाबवे एवं पड़ोसी देशों के ज्यादा गरीब क्षेत्रों से, कभी–कभी एक या दो पीढ़ी पहले आने वाले शामिल हैं। अन्य देशों से आने वाले प्रवासी विशेष रूप से 'संवेदनशील' होते हैं क्योंकि संप्रदायिक क्षेत्रों में जरूरत के समय के लिए उनके पास घर नहीं होते हैं, उनके पैतृक घर जहां से उनके वंशज आए थे से संबंध कमजोर हैं या मौजूद नहीं है और बहुत से ऐसे क्षेत्रों से प्रवसन कर रहे थे जहाँ भूमि दुर्लभ या निम्न बन रही थी। प्रतिवेदन बताते हैं कि उन लोगों को अधिकारियों के द्वारा ऐसे दूरस्थ एवं हाशिये के स्थानों में भेज दिया गया जहाँ बुनियादी ढांचा बहुत कम था और सेवाएं उपलब्ध नहीं थी।

वंचित परिवारों में पल रहे बच्चे सर्वाधिक संभावित रूप से स्कूल बीच में ही छोड़ देते हैं और इस कारण अनिश्चित भविष्य का सामना करते हैं। गरीब परिवारों से युवा लोग भी ज्यादा से ज्यादा अपवर्जित समूह के रूप में उभर रहे हैं। सीमित शिक्षा एवं कौशलों तथा रोजगार या स्व–रोजगार के कम अवसरों के साथ बहुतों को ऐसे नमूने के व्यवहार का अनुसरण करते पाया गया जो कि उनके भविष्य को और भी ज्यादा क्षति पहुंचाएगा : अपराध, नशीले पदार्थों का सेवन, नशाखोरी, छोटी आयु में गर्भधारण और वेश्यावृति।

प्रौढ़ मजदूर, जिन्हें प्रारम्भ में कुछ सुरक्षा प्राप्त हो जाया करती थी क्योंकि जब उनके पास कोई काम नहीं होता था तो वे लोग उन खेतों पर रह सकते थे जिन पर उन्होंने काम किया था, अब इस विकल्प पर निर्भर नहीं कर सकते थे। किसी भी सामाजिक सुरक्षा जाल (मामूली पेंशन को छोड़ कर) की गैर–मौजूदगी उन्हें तत्कालिक भौतिक हानि तथा असुरक्षित भविष्य का सामना करने के छोड़ देती हैं।

अंततः, सेकीकोनी ने बताया कि मौसमी, आकस्मिक श्रम तथा कृषि मजदूरों के गरीब वर्गों का बहुत बड़ा भाग महिला मजदूर हैं। उन्हें प्रायः पुरुष पालनकर्ता की कमाई का पूरक समझा जाता है बजाय अपने ही अधिकार से कामगार समझने के। फिर भी, अलगाव, तलाक, विधवापन या एकल स्त्री होने के फलस्वरूप, राष्ट्रीय तौरपर तीन परिवारों में से एक में महिला मुखिया है। जैसा कि ग्रामीण जिंबाबवे में महिला श्रम के बारे में एडमस का विस्तृत अध्ययन दर्शाता है कि, वर्ष 1986–87 में भी, जब उसने अपना सर्वेक्षण किया दिहाड़ी के मजदूरों में महिलाओं की संख्या प्रबल थी विशेष रूप से निम्न निम्न मजदूरी प्रदत्त–आकस्मिक कृषि कार्य में। महिला प्रधान अनिवार्य तौर पर गरीबी का संबंधक नहीं है – बहुत सी महिला प्रधानों को प्रेषित धन मिलता था – परंतु वो परिवार, जिनकी आकस्मिक महिला मजदूर प्रधान थी, जनसंख्या में सबसे अधिक गरीब थे।

एडमस ने पाया कि पुरुष एवं महिला आकस्मिक मजदूरों की उजरती दरों या कार्यपरक मजदूरी में अंतर नहीं था, महिलाओं को पुरुषों से कम मजदूरी मिलती थी और उन्हें पुरुषों जिन्हें मासिक आधार पर मजदूरी जाती थी बजाय ज्याद संभावित रूप से दिहाड़ी पर मजदूरी दी जाती थी। उन्हें ज्यादा अल्पावधि के लिए रखा जाता था, कभी–कभी एक समय पर कुछ ही दिनों के लिए। बहुतों के पास संभालने के लिए बच्चे होते थे परंतु सहायता के लिए कोई पुरुष पालनकर्ता नहीं। उन्हें गुजर–बसर तथा बच्चों की स्कूल फीस के लिए मजदूरी दी जाती थी। महिला आकस्मिक कार्मिकों के बच्चों का अल्पवजन (अन्य महिलाओं के 23% की तुलना में 33%) होना ज्यादा संभावित होता था, कुछ क्षेत्रों जैसे कि मासविंगो जिले की साम्प्रदायिक भूमि, में अंतर अधिक थे, यहाँ 40% और 26% के बीच अंतर रहता था। संक्षेप में, उनके अध्ययन में सर्वाधिक गरीब वे

महिलाएं थी जिन्हें खतरनाक व्यक्तिगत परिस्थितियों का सामना करना पड़ा, जिनका कोई पुरुष सहारा न था और जिन्हें काम की खोज में प्रवासित होने के लिए अपने बच्चों को रिश्तेदार के पास छोड़ने के सिवाय कोई विशेष विकल्प प्राप्त न थे। नितांत नृजातीय विभाजन के कुछ मामले हैं, जो अफ्रीका के कुछ अन्य भागों में प्रायः प्रजातीय रूप ले लेते हैं, जैसा कि सूडान के मामले में। सूडान तथा मॉरीटेनिया दोनों में गरीबी के आकलनों में 'गुलामों' का गरीबी के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील समूह के रूप में जिक्र किया गया था। नृजातीय असमानताओं के अन्य कम प्रचारित रूपों के उदाहरण भी हैं जो कि सामाजिक अपवर्जन को जन्म देते हैं। नगरीय कैमरून में अंतरराष्ट्रीय श्रम अध्ययन संस्थान (ILS) कार्यक्रम के भाग के रूप में 102 परिवारों का अध्ययन किया गया था। इसने पाया कि 21% परिवारों को इस आधार पर गरीबों के वर्ग में रखा गया गया था क्योंकि वो दिन में दो बार से कम भोजन करते थे, हफ्ते में दो से कम बार मांस खाते थे और उनका अपनी जल आपूर्ति नहीं थी। परिवार के जीवनयापन स्तर के विभिन्न आयामों के साथ नृजातीयता को संबंधित पाया गया। बामिलेकों की तुलना में, बेटी एवं अन्य नृजातीय समूहों के सदस्य सामानयतः गरीब थे। परिवार के बेरोजगार मुखियाओं में अधिकांश बेटी समुदाय के थे ओर 50% बेटी परिवार मुखिया बेरोजगार थे ओर वे लोग आकस्मिक या अनियत कामगार थे।

अफ्रीकी संदर्भ में अन्य जगहों पर, सुनिश्चित रूप की अभावग्रस्तता पुराने रूप को पुनः उत्पन्न करते प्रतीत हुई और सामाजिक अपवर्जन के नवीन नमूनों को उत्पन्न कर रही है। अफ्रीका से आई.आई.एल.एस. अध्ययन ने इनमें से कुछ का उदाहरण प्रदान किया ह। उदाहरण के लिए नगरीय तंजानिया में निम्न आय परिवार के सदस्यों के सैम्पल में पाया गया कि अल्पसंख्यकों का काफी बड़ा भाग भिखारी था, कि सैम्पल में बाकियों की तुलना में भिखारी ज्यादातर आश्रयहीन थे और सैम्पल में बाकियों की तुलना में भिखारी व्यस्क भी थे और अधिकांश भिखारी (दो क्षेत्रों में जिनका साक्षात्कार किया गया उनमें से 60%–90% के बीच) कोढ़ से पीड़ित थे (कैजेग एवं टिबायजुका, 1996)। सैम्पल में महिलाओं की भारी तदाद एकल, तलाकशुदा या विधवा माएं थी जिनके पास पालने के लिए बच्चे थे। सम्पूर्ण सैम्पल में भौगोलिक रूप से दूरस्थ या अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों से आए नृजातीय समूहों का प्राधान्य था। इस अध्ययन ने यह भी गौर किया कि चारवाह तथा आखेट संग्रहकर्ता दोनों को भू तथा जल गम्यता से किस सीमा तक बेदखल कर दिया गया हैं जो कि उन्हें अपने जीवनयापन हेतु प्रभुत्वशाली कृषिक समूहों से चाहिए था। तथापि, सरकार के द्वारा इन समूहों के जीवन को बिताने अभ्रमणशील या स्थानबद्ध ढंग में तबदील करने की चेष्टाओं का, बाह्य आरोपित मूल्य एवं प्रथाएं समझ कर विरोध किया जा रहा था। गरीबी के काल में कई संदर्भों में अपंगता का जिक्र किया गया है। तंजानिया से डेटा बताता है कि अपंग सदस्य युक्त परिवारों में औसत उपभोग औसत के 60% से कम है और प्रति व्यक्ति गरीबी (Poverty head count) औसत से 20% अधिक पाई गई और संपूर्ण जनसंख्या की तुलना में अपंग व्यक्ति मुखिया के परिवारों में भूख ज्यादा अधिक उच्च थी, विशेष रूप से अश्वेत दक्षिणी अफ्रीकावासियों में।

एच.आई.वी. – एड्स का प्रसार दरिद्रीकरण की प्रक्रियाओं को सीमान्तीकरण की प्रक्रियाओं के साथ जोड़ता प्रतीत होता है। जांबिया में शोध के आधार पर, बेलिस ने बताया कि ग्रामीण परिवारों पर एड्स का प्रभाव किसी दूसरे के सामान 'प्राधात' (या झटका) नहीं है। यह युवा व्यस्कों के सर्वाधिक उत्पादक काल में उनके श्रम संसाधनों को समाप्त कर देता है, दाम्पत्य तथा माँ–से–बच्चे को स्थानांतरण का कुछ परिवारों पर संचयी प्रभाव पड़ता है जिस कारण से प्रभावित परिवारों का गुच्छीकरण (समूहीकरण) हो जाता है। एड्स से जुड़ा कलंक प्रभावित व्यक्तियों को अपनी स्थिति बताने अथवा व्यावसायिक रोग–निदान करवाने से रोकता है जिससे रोगी की देखभाल का भार

परिवार के सदस्यों पर पड़ता है। और यह, सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं में कटौती के साथ मिल कर, परिवार के देखभालकर्त्ताओं, सामान्यत्या महिलाओं पर असंबलनीय भार डालता है।

एड्स के प्रसार का एक परिणाम यह हुआ है कि ऐसे परिवारों की संख्या में वृद्धि होने लगी जिनके मुखिया अनाथ या वृद्ध माता–पितामह होते हैं, इस वर्ग को सहभागी आकलनों में सामाजिक रूप से संवेदनशील समूह के रूप में जाना गया है। मलावी से अध्ययन जब कि यह कल्पना करने के विरुद्ध चेतावनी देता है कि तमाम एड्स प्रभावित अनाथ अपवर्जनकारी प्रक्रियाओं से प्रभावित होंगे क्योंकि – विस्तरित परिवार तथा सामुदायिक संबल जो भूमिका अदा कर सकता है यह उसे अनदेखा करता है। इस अध्ययन ने यह भी गौर किया कि अनाथों की संख्या में बढ़ौतरी के कारण इस प्रकार के सहारे अत्याधिक तनाव में आ गए हैं।

तंजानिया के अध्ययन ने इन पारम्परिक अवलम्ब प्रणालियों, पर तनाव के प्रमाण प्रदान किए हैं जिसने यह ज्ञात करने में सहायता कि मवांजा नगर में जितने भी नुक्कड़ बच्चों का साक्षात्कार किया गया था उनमें से बहुत से अनाथ थे, और 'काफी संख्या' एड्स के फलस्वरूप। वहाँ भी जहाँ अनाथों की देखभाल की जिम्मेदारी रिश्तेदारों ने ले ली थी, उनके कारण परिवारिक बजट पर जो दबाव पड़ता था उस से अनाथों को बहुत कठिनाई झेलनी पड़ी। दुर्व्यवहार तथा अपषब्दों के प्रयोग के साथ–साथ, अधिकांश अनाथ बच्चों को स्कूल की पढ़ाई बीच में ही छुड़वा दी थी या उन्होंने पैसा कमाने के लिए छोड़ दी थी।

सेकीकोनीया ने देखा कि जिंबाबवे में गरीब ग्रामीण परिवारों में बच्चों के लिए एच.आई.वी.–एड्स के प्रसार के कठोर फलितार्थ हुए। नब्बे के दशक के मध्यकालीन अनुमान खेल मजदूरों की यौन रूप से सक्रिय जनसंख्या के बीच 25% व्याप्तता बताता है, जबकि अनियत एवं मौसमी कामागारों के बीच उच्च स्तर की व्याप्तता बताई है। इसका एक प्रभाव यह हुआ कि राष्ट्रीय अनाथ जनसंख्या बढ़कर कुल का (1 मिलियन) 8% हो गई है, स्थानीय स्तर का साक्ष्य बताता है कि इनमें से बहुत से खेत मजदूरों के बच्चे हैं। बच्चा मुखिया परिवारों की संख्या बढ़ रही है। एड्स प्रभावित अनाथों में से 65% स्कूल जाते हैं, और बाकियों ने स्कूल जाना छोड़ दिया है।

## 18.7.2 सामाजिक अपवर्जन का स्वास्थ्य संबंधी परिणामों पर प्रभाव

जैसा कि प्रत्याशा की जा सकती है, सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों की वृहदतर गरीबी स्वास्थ्य के ज्यादा निम्न स्तरों में तबदील हो जाती है, विशेष रूप से जब उनकी गरीबी के साथ दूरस्थता एवं बुनियादी ढांचे तथा सामाजिक सेवाओं के अभाव के स्थानिक नुकसान भी जुड़ी हों। तथापि, भारतीय संदर्भ से एक अनापेक्षित परिणाम सामाजिक अपवर्जित समूहों के बीच मृत्यु दरों में जेंडर असमानताओं से संबंधित है। कई अध्ययनों ने दर्शाया है कि समूचे भारत में एस.टी. समूहों के बीच जेंडर असमानताएं निम्न हैं और कुछ क्षेत्रों में, एस.सी. समूहों में भी निम्न है। इसका कुछ हाल ही में प्रमाण वर्ष 2000 में अग्निहोत्री के अध्ययन से प्राप्त हुआ है। उन्होंने 1981 और 1991 की जनगणना के जिला स्तर के डेटा का उपयोग किया है। उन्होंने बताया कि भारत के उत्तरी क्षेत्रों में उच्च तथा मध्यम वर्ग की जातियों के बीच 5;9 वर्ष की आयु समूहों में स्त्री–से–पुरुष अनुपात निम्न है, और कभी–कभी 'भयप्रदता' के साथ निम्न होता है। ज्यादा परिष्कृत विश्लेषण, जो पहले कभी नहीं किया गया था, का उपयोग करते हुए, उन्होंने पाया कि ज्यादा उच्च पुरुषवत लिंग अनुपात उत्तरी पश्चिम क्षेत्र में केंद्रित हैं। अनुपात भारत के उत्तरी पर्वतीय राज्यों और उसके दक्षिण–पूर्वी राज्यों में ज्यादा अनुकूल अनुपात दरें प्रचलित है (हिमाचल प्रदेश और मणिपुर)।

अनुसूचित जातियों के लिए इसी पैटर्न प्रकार से क्षेत्र द्वारा विभेदित है, उत्तरी भारत में अनुसूचित जातियों के बीच वृहदर जेंडर भेद के प्रमाण पाए गए। इसके विपरीत, अनुसूचित जनजातियों, जो भात में सर्वाधिक गरीब सामाजिक समूह हैं, के लिए यह अनुपात सर्वाधिक संतुलित थे। मूर्ति एवं अन्य ने पाया कि जिले में एस.टी. का अनुपात जितना ज्यादा होगा, उतना ही स्त्री–विरोधी पूर्वाग्रह कम होगा। फिर भी, एस.टीस. के लिए बाल उत्तरजीविता दरों में जेंडर असमानताएं अनुसूचित जनजातियों के लिए जब कि निम्न हो सकती हैं, वे लोग स्वास्थ्य परिणामों के अन्य पहलुओं के संबंध में नुकसान या उपेक्षा की स्थिति में होते हैं। भारत में मातृ मृत्यु दरें जनजातीय क्षेत्रों में उच्चतम हैं। शिशु एवं बाल मृत्यु दर प्रति 1000 जन्में शिशु पर लगभग 83 तथा 126.6 जबकि सामान्य जनसंख्या के लिए यह 62 और 83 हैं। जनजातियों के लगभग 80% बच्चों में रक्त अल्पता है, 50% का अल्प वजन है और केवल 26% ने ही सभी टीकें लगवाए हैं, एस.टीस. में 65% महिलाएं और सामान्य जनसंख्या में 48% रक्त अल्पता से ग्रस्त है, सामान्य जनसंख्या के लिए 28% की तुलना में 43% एस.टी. महिलाओं ने किसी प्रकार की प्रसव पूर्व जाँच नहीं कराई। सामान्य जनसंख्या में 40% और 37% की तुलना में केवल 17% एस.टी. मांओ ने संस्थागत प्रसव कराया और 15% ने डाक्टरी सहायता ली। अन्य अध्ययन बताते हैं कि 3 वर्ष या कम आयु के एस.सी. बच्चों में 54% का और एस.टी. समूहों में 56% बच्चों कर अल्प वजन था जब कि बाकी जनसंख्या में 44% बच्चों का अल्प वजन था सामान्य जनसंख्या में 54% बच्चों की तुलना में 47% एस.सी. बच्चों और 34% एस.टी. बच्चों ने खसरे का टीका लिया। एस.सी. और एस.टी. एवं सामान्य के लिए शिशु मृत्यु दर प्रति 1000 जीवित जन्मे बच्चे पर क्रमषः 83, 84 और 68 थी, जबकि बाल मृत्यु दर क्रमशः 83, 84 और 92.36% थी। एस.सी. समूहों में 36% जन्म, एस.टी. समूहों में 23% और बाकी जनसंख्या के लिए 47% जन्म डाक्टरी सहायता से हुए। उड़ीसा में, गैर–वंचित समूहों से 15% महिलाओं की तुलना मे 37% एस.सी. महिलाओं ने कोई प्रसव पूर्व जांच कारवाई थी। एस.टी. बच्चों के लिए टीकाकरण की दरें गैर–वंचित समूहों की तुलना में आधी थी जैसा कि उड़ीसा मानव विकास रिपोर्ट में चर्चा की बई जिसका वर्ष 2004 में हान द्वारा विश्लेषण किया गया।

बेटनकोर्ट एवं गलीसन ने वर्ष 2000 में राज्य द्वारा स्वास्थ्य एवं शैक्षिक व्यवस्था, के कुछ निर्धारकों की छानबीन करने के लिए बहुत से भिन्न स्रोतों से जिला स्तरीय आंकड़े का उपयोग किया जैसा कि जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति 10 व्यक्तियों पर राज्य द्वारा प्रदान किए गए डाक्टरों, नर्सों तथा अध्यापकों की संख्या से पता चलता है। उन्होंने जिला स्तर पर परिवर्तन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत धर्म तथा जाति से संबंधित पाया : जिले की जनसंख्या में ग्रामीण अनुसूचित जातियों तथा मुस्लिमों का प्रतिशत जितना अधिक है। उतना ही चिकित्सा एवं शैक्षिक सेवाओं की व्यवस्था कम पाई गई। भारत तथा अन्य ने गुणात्मक साक्ष्य प्रदान किया जो सामाजिक अपवर्जन तथा स्वास्थ्य परिणामों के बीच संबंध स्पष्ट करने में सहायता करता है। उन्होंने गौर किया कि ज्यादा गरीब मरीजों, विशेष रूप से महिलाओं के लिए सम्मान के अभाव के कारण, सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा प्रदायक जनसंख्या समूहों के बारे में शक्तिशाली रूढ़िबद्ध धारणाएं रखते हैं जो गर्भ निरोधक लक्ष्यों की अनौपलब्धि के लिए विशेष सामाजिक समूहों को जिम्मेदार ठहराने के लिए भड़काती है। गरीब तथा अच्छा निष्पादन करने वाले राज्य दोनों में सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में दलितों के विरुद्ध भेदभाव दर्ज किए गए थे। स्वास्थ्य कर्मियों, विशेष रूप से पैरा–मेडिकल एवं नर्सिंग स्टाफ द्वारा दलितों के साथ शारीरिक सम्पर्क से बचने की चेष्टा को वर्ष 1999 में हैल्थ वॉच ट्रस्ट द्वारा देखा गया था जबकि दलित परिवारों के घरों का दौरा करने की अनिच्छा, दलित बच्चों के अपूर्ण टीकाकरण के कुछ कवरेज को स्पष्ट करती है। स्वास्थ्य कर्मियों की ओर से वास्तविक तथा प्रत्याशित भेदमूलक व्यवहार और रवैया दलितों को सार्वजनिक तथा निजी स्वास्थ्य प्रदायकों के लिए प्रयोग

करने से रोकते हैं विशेष रूप से उन सेवाओं जो शारीरिक संपर्क से जुड़ी हैं, जैसे कि प्रसव।

बांग्लादेश में, जैसा कि चौधरी एवं अन्य द्वारा बताया गया, वर्ष 2002 में चटगाँव पहाड़ी क्षेत्र, जहाँ अधिकांश बांग्लादेशी जनजाति समूह रहते हैं 12 महीनों से कम उम्र के बच्चों में टीकाकरण कवरेज राष्ट्रीय औसत की तुलना में अत्याधिक निम्न है : 54% की तुलना में 22%। पहाड़ी क्षेत्रों के अंदर तो आगे और भेदभाव नृजातीयता के आधार पर होता है। बहुसंख्यक बंगाली 34% कवरेज बताते हैं। बाकियों में, कवरेज त्रिपुरा के लोगों के बीच 17% से लेकर, मर्मा एवं चकमा समूहों में 9% और म्रो समूह के बीच 8% तक भिन्न–भिन्न है। नेपाल में, लुकास के अनुमान बताते हैं कि दलित समूहों के बीच शिशु मृत्यु दर बाकी जनसंख्या के बीच जो है उस की तुलना में 1.4 बार ज्यादा है, यानि कि प्रति 1000 जन्में बच्चों पर अतिरिक्त 32 मौतें।

जेंडर असमानता तथा गरीबी के आयाम एड्स के प्रसार के पीछे कुछ प्रक्रियाओं में अंतर्ग्रन्थित हैं। बढ़ते हुए आर्थिक दबाव, जिसने महिलाओं को जीवन निर्वाह के लिए सैक्स को बेचने के लिए प्रवृत्त किया, जेंडर, ने कई अध्ययनों को गरीबी तथा सीरोपोज़िटिविटी के बीच जुड़ाव बताने के लिए किया। वर्ष 1991 में जिंबाबवे तथा दक्षिण अफ्रीका में बैसेट एवं म्होई तथा जॉकलस एवं अन्य द्वारा किए गए अध्ययन ने बताया कि महिलाओं द्वारा सेक्स बेचने का निर्णय सामान्यत्या आर्थिक आवश्यकता के प्रत्युत्तर में किया जाता था, जो कि स्वल्प वेतनों को पूरक या उसे प्रतिस्थापन करने का ढंग। जैसा कि डॉयल ने वर्ष 1995 में बताया कि जब कभी भी सैक्स आर्थिक विनिमय का भाग होगा, महिलाएं अपने आप को एस.टी.डी के रोग से बचाने में अवरुद्ध होंगी : वित्तीय निर्भरता जितनी अधिक होती है, उतना ही अधिक अवरोध होता है।

## 18.7.3 सामाजिक अपवर्जन का शिक्षा संबंधी परिणाम पर प्रभाव

अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा हाल ही में प्रकाशित सामग्री ने समस्त बच्चों का स्कूल भेजने की समस्या के बड़े आकार की ओर ध्यान खींचा और बताया कि दक्षिण एशिया मात्र संख्याओं और साथ ही जेंडर असमानता की कोटि के संबंध में सबसे बड़ी चुनौती को निरुपित करता है। विश्व के बच्चों की स्थिति पर यूनिसेफ की 1999 की रिपोर्ट के अनुसार : ''विकासशील विश्व में विद्यालयी आयु के 130 मि. से भी ज्यादा बच्चे मूलभूत शिक्षा की गम्यता बगैर बढ़े हो रहे हैं, जबकि अन्य मिलियन अन्य बच्चे उप–मानकीय अधिगम स्थितियों में कष्ट पाते हैं। लड़कियाँ इन श्रेणियों को अनानुपातिक रूप से भरती है, विकासशील विश्व में प्रत्येक तीन बच्चों में करीब दो का प्रतिनिधित्व लड़कियाँ करती है जो प्राथमिक शिक्षा नहीं पाती हैं। स्कूल से बाहर इन बच्चों का लगभग पचास प्रतिशत दक्षिण एशिया में था।

सबके लिए शिक्षा पर यूनेस्को की वर्ष 2000 की रिपोर्ट के अनुसार, सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य पर प्रगति के बावजूद, विश्व में लगभग 100 मिलियन से ज्यादा बच्चे अभी भी प्राथमिक शिक्षा की गम्यता से वंचित हैं...। स्कूल–से–बाहर 'लगभग सभी बच्चे विकासशील देशों में रहते हैं और उनमें से अधिकांश लड़कियाँ हैं'। जबकि सब–सहारा अफ्रीका ने वर्ष 1999 में न्यूनतम सकल नामांकन अनुपात दर्ज किए (81%), यह संभावित है कि सर्वाधिक बड़ी संख्या में स्कूल–से–बाहर बच्चों की सर्वाधिक बड़ी संख्या सतत एशिया में ही अवस्थित हो, विशेष रूप से दक्षिण एशिया में। इस नीति की विफलता का दूसरा पक्ष अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा प्रलेखित किया गया है जो बताता है कि विश्व भर में 5–14 वर्षों की आयु के बच्चों में एक–चौथाई बिलियन कामकाजी बच्चे हैं, इनमें से लगभग आधे पूर्ण–कालिक काम में लगे हुए हैं, जिनमें से 61% (153 मिलियन) एशिया मं पाए जाएंगे।

देश का ज्यादा विस्तृत विश्लेषण बताता है कि सामाजिक रूप से अपवर्जित समूह शैक्षिक कमियों के अनानुपातिक भाग के लिए जिम्मेदार बताते हैं और जेंडर आयाम की प्रासंगिकता की पुष्टि करता है। उदाहरण के लिए, यू.पी. और बिहार से 1998 का एल.एस.एम.एस. डेटा का प्रयोग करते हुए, लुकास ने अनुमान लगाया कि प्रासंगिक आयु समूहों में 1.7 गुना अनुसूचित जाति/जनजातियाँ (पुरुष लिंगी के लिए 1.9 और स्त्री लिंगी के लिए 1.6) संभावित रूप से प्राथमिक स्कूलों में नहीं जा रही होंगी, यानि कि 21 प्रतिशत बिंदुओं का अंतर (पुरुषों के लिए 20 और स्त्री लिंगी बच्चों के लिए 23)। वे बच्चे 1.7 गुना अशिक्षित होने की संभावना रखते हैं (पुरुष लिंगी के लिए 2.0 और स्त्री लिंगी के लिए 1.6), 24 प्रतिशत बिंदुओं का साक्षरता अंतराल (पुरुष लिंगी के लिए 18 और स्त्री लिंगी के लिए 30) बताता गया।

भारत में एन.एफ.एच.एस.डेटा (1998–99) का विश्लेषण करते हुए, वर्ष 2004 में नांबीसान ने गौर किया कि दलित परिवार समुदायों से स्कूल जाने वाले बच्चों के अनुपात में 1990 के दशक में काफी वृद्धि हुई है परंतु स्कूल न जाने वाले बच्चों की संख्या दलितों में सतत अधिक बनी रही : ज्यादा सामान्यत्या 16% की तुलना में 6–10 वर्ष के आयु समूह में 20% और ज्यादा सामान्यत्या 23% की तुलना में 11–14 वर्ष के आयु समूह में 29%। इसके अतिरिक्त, दलित बच्चों में से केवल 43% ने प्राथमिक शिक्षा पूरी की जबकि अन्य जातियों के बच्चों में से 58% ने और क्रमषः इसी आयु समूहों में अन्य जाति के बच्चों में से 63% की तुलना में दलित बच्चों में से 42% ने माध्यमिक शिक्षा पूर्ण की। 12–16 वर्ष की आयु के बच्चों की प्राथमिक स्कूल शिक्षा समापन की दरों के बारे में विश्व बैंक के अनुमान दलित बच्चों के लिए काफी विभिन्नता दर्शाते हैं : अन्य जातियों के लिए 100% की तुलना में केरल में 96% से उत्तर प्रदेश में 30% और पष्चिम बंगाल में केवल 19% तक। अतः शैक्षिक उपलब्धि में स्पष्ट जाति भेद है, परंतु राज्य वार काफी विभिन्नता है।

जैसा कि पहले देखा गया है, एस.टीस. के वृहद्तर भौगोलिक केन्द्रीयकरण का अर्थ है कि राष्ट्रीय स्तर के अनुमान उनकी उपेक्षा की सीमा का भ्रमित विचार प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, उड़ीसा में, जहाँ भारत की कुल अनुसूचित जनजाति जनसंख्या का उच्चतम केन्द्रीकरण है, वहाँ कुछ समृद्ध ग्रामीण तटीय क्षेत्रों में अन–वंचित (या गैर–वंचित) जनसंख्या का 27% निरक्षर था (और शहरी क्षेत्रों में 17%) परंतु दक्षिण क्षेत्रों में अनुसूचित जातियों की जनसंख्या का लगभग 82% निरक्षर था, जैसा कि 2004 में दे हान द्वारा उद्धृत किया गया था। एन.एफ.एच.एस–2 डेटा के अनुसार, जैसा कि 2001 में डे हान द्वारा विष्लेशित किया गया, महिला जनजाति जनसंख्या का 38%, अनुसूचित जाति की महिलाओं का 73% और अन्य पिछड़ी जाति की स्त्रियों का 56% और बाकी महिला जनसंख्या का 36% निरक्षर था।

उड़ीसा में, वर्ष 2000 में, प्राथमिक स्तर पर सभी बच्चों के लिए ड्रॉप–आऊट दर 42% थी (लड़कों और लड़कियों के लिए एक समान), एस.सी. के लिए 52% (लड़कियों के लिए काफी ज्यादा) और एस.टी. के लिए 63% थी, जैसा कि उड़ीसा मानव विकास रिपोर्ट में हवाला दिया गया है। उड़ीसा के एक सर्वाधिक गरीब जिला, कोरतपुर, जहाँ जनजातीय जनसंख्या का आधिक्य है, में 556 परिवारों के व्यष्टि स्तरीय सर्वेक्षण से पाया गया कि 6–14 वर्ष की आयु समूह में लड़कियों के बीच निरक्षरता की दरें तुलनात्मक रूप से लड़कों से ज्यादा थी : 18% की तुलना में 31%।

एस.टी. एवं एस.सी. बच्चों के निम्न शैक्षिक परिणामों के लिए विभिन्न कारक जिम्मेदार हैं। कारकों का एक समूह उनकी निर्धनता की चरम प्रकृति से संबंधित है। ग्रामीण क्षेत्रों में 'अन्य' समूहों के मात्र 30% की तुलना में अनुसूचित जाति श्रम बल का 64% और

अनुसूचित जनजाति श्रम बल का 50% कृषि मजदूरों का काम करते थे, जो अर्थव्यवस्था में सबसे निम्न प्रदत्त पेशा है। पहले दोनों समूह बंधुआ मजदूरों के बीच अनानुपातिक प्रतिनिधित्व भी करते हैंः सरकारी सर्वेक्षण डेटा के अनुसार, बंधुआ मजदूरों का 66% अनुसूचित जातियों से था और 18% अनुसूचित जनजातियों से था जैसा कि वर्ष 1995 में बर्रा ने बताया था। दास प्रथा विरोधी सोसाइटी (2000) द्वारा प्रकाषित रिपोर्ट के अनुसार, भारत के राजस्थान राज्य में लगभग 3 मिलियन खदान एवं खनन कर्मियों की भारी बहुसंख्या, अनुसूचित जाति एवं जनजाति समूहों से से हैं, जिनमें से कई ऋण बंधक या परतंत्रता में फंसे हुए थे।

इसमें संदेह नहीं है कि ऐसे समूह बाल मजदूरों तथा स्कूल–से–बाहर बच्चों के अनानुपातिक भाग के लिए जिम्मेदार होते हैं। वर्ष 1999 में, 1993–94 का एन.एस.एस. डेटा का उपयोग करके थोरेट ने पाया कि बाल मजदूरों का अनुपात अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समूहों के बीच बाकी जनसंख्या से 2/3 गुना अधिक था। वर्ष 1997 में डुरायसामी ने पाया कि राज्य की जनसंख्या में एस.सी./एस.टी. समूहों के उच्चतर स्तर ने बाल श्रम बल प्रतिभागिता दरों में काफी ज्यादा वृद्धि कर दी थी। क्योंकि ऋण बंधता सीमा–तीकृत जनजातीय परिवारों को पीढ़ियों तक फांस सकती है, स्कूल जाने की बच्चों की क्षमता पर इसके फलितार्थ गंभीर होते हैं। नायक ने भी वर्ष 2001 में पाया कि उड़ीसा में बोंडो परिवारों के बीच, वो बच्चे विशेष रूप से संवेदनशील होते हैं जिनके पिता की जब वे छोटे होते हैं मृत्यु हो जाती है, क्योंकि उन्हें अपने पिता के ऋणों को चूकाने की जिम्मेदारी लेनी पड़ती है।

बाल श्रम के जेंडर आयाम तथा शैक्षिक अपवर्जन, आंकड़े के संग्रह में प्रत्ययात्मक एवं पद्धतिमूलक सीमाओं द्वारा अस्पष्ट हो जाते हैं। इस सबने एक वर्ग को जन्म दिया है जिसे 'नो वेयर' बच्चों का नाम दिया है, अर्थात्, वो बच्चे जो न तो स्कूल में हैं (और इसलिए नामांकन डेटा से बाहर हैं) न ही काम पर जाते हैं (और इसलिए श्रम बल डेटा से बाहर हैं)। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार, 92 मिलियन ऐसे बच्चे थे। सूक्ष्म जांच पड़ताल ने बताया कि ये बच्चे प्रायः उत्पादक प्रकार के कामों में लगे होते थे जिसे औपचारिक डेटा संग्रह प्रयासों द्वारा 'आर्थिक गतिविधि' के रूप में नहीं गिना जाता था यानि कि ईंधन संग्रह, रैग–पिक्कर (कूड़ा करकट तलाशने वाले और दत्त एवं अप्रदत्त घरेलु काम) या फिर इन्हें सामाजिक रूप से कलंकित पेशों (वेष्यावृति, भिखारी, आवारा इत्यादि) में लगे होते हैं जिनको रिपोर्ट नहीं किया जाता है।

वर्ष 1997 में डुरायसामी द्वारा इन भूल–चूकों के संबंध में जेंडर संबंधी पूर्वाग्रह की और ध्यान खींचा गया। इन्होंने अनुमान लगाया कि स्कूल जाने वाली आयु वर्ग की लड़कियों में से आधी ऐसे ही कामों में लगी हुई थी और इसलिए कार्य एवं शैक्षिक सांख्यिकी से बाहर रह गई थी। व्यष्टि सतर के अध्ययन भी बताते हैं कि ऐसे बहुत से बच्चे हैं, प्रायः लड़कियां, जो वास्तव में न तो काम पर जाते हैं और न ही स्कूल में। जैसा कि वर्ष 1998 में भट्टी ने बताया था। लैंगिक अवैध व्यापार हेतु आदिवासी लड़कियों को भगा ले जाने की दर उच्च है, जबकि, नेपाल से वेश्वावृति के लिए लड़कियों में अवैध व्यापार पर एक अध्ययन दर्शाता है कि इनमें नृजातीय अलपसंख्यक समूहों की मौजूदगी उच्च है। परिवार स्तरीय अध्ययन, सामाजिक अपवर्जन से जुड़ी अभावग्रस्तता के अंतःपीढ़ीय प्रसार से संबंधित अन्य अंतदृष्टियाँ प्रदान की है। ग्रामीण परिवारों पर अखिल भारतीय डेटा का उपयोग करते हुए बरुआ ने स्कूल नामांकन के विभिन्न संभावित निर्धारकों, तथा एक बार नामांकित हो जाने के बाद स्कूल जाना जारी रखने की संभाविता की जांच की। अभिभावकों की साक्षरता, परिवार की आय, माता–पिता का पेशा, गाँव में स्कूल एवं अन्य सरकारी सुविधाओं की मौजूदगी इत्यादि के साथ जिन्होंने दोनों स्वतंत्र चरों का पूर्वानुमान लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की, इस अध्ययन ने पाया कि स्त्री लिंगी

बच्चों की तुलना में पुरूष लिंगी बच्चों का नामांकित होना तथा स्कूल की पढ़ाई जारी रखना ज्यादा संभावित था और कि अनुसूचित जाति, जनजाति एवं मुस्लिम परिवारों से बच्चों का स्कूल में नामांकित होना एवं पढ़ाई जारी रखना कम संभावित था।

ड्रेज़ एवं किंगडन ने वर्ष 2001 में बिहार, हिमाचल प्रदेश, मध्यप्रदेश, राजस्थान और यू. पी. से ग्रामीण परिवारों पर डेटा का विश्लेषण किया और पाया कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति समूहों, से बच्चों का स्कूल जाना कम संभावित है, तब भी तब परिवारिक सम्पदा, विद्यालयी शिक्षा की गुणवत्ता, माता–पिता की शिक्षा और प्रेरणाएं इनके पक्ष में थी। नगरीय यू.पी., वो राज्य है जहाँ औसत से ज्यादा प्रतिशत के बच्चे निजी स्कूलों तथा ऐसे स्कूलों जिनमें सरकारी सुविधाओं की व्यवस्था कम है में हैं, से डेटा पर आधारित किंगडन का 1996 में किया गया अध्ययन बताता है कि गरीब परिवारों के बच्चों की तुलना में ज्यादा धनी परिवारों के बच्चों का निजी स्कूलों में जाना अत्याधिक संभावित होता है, और ज्यादा सरकारी स्कूलों में जाना कम संभावित है। लड़कों का भी निजी स्कूलों में जाना ज्यादा संभावित है और सरकारी स्कूलों मं जाना कम संभावित है। अंततः, निम्न जाति के परिवारों के बच्चों का बाकी जनसंख्या के बच्चों की तुलना में, सरकारी एवं निजी स्कूलों दोनों में जाने की संभाविता निम्न होती है।

कलकत्ता के दो पड़ोसी मलिन बस्तियों से परिवारिक डेटा पर आधारित अध्ययन ने पाया कि मुस्लिम बच्चों का काम पर जाना ज्यादा संभावित है, विशेष रूप से यदि हिन्दू बच्चों की तुलना में हिन्दी बोलने वाले हैं (अर्थात्, पश्चिम बंगाल के बाहर से प्रवासी हैं, प्रायः बिहार से)। फिर भी, हिन्दुओं के बीच अन्य जातियों की तुलना में अनुसूचित जाति के बच्चों का काम पर जाना ज्यादा संभावित है। अन्य व्याख्यात्मक चरों– परिवारिक आय, परिसम्पत्तियाँ, माँ की शिक्षा और समिति (संगठन) की सदस्यता – के समेत जो कि बच्चों के स्कूल जाने की प्रायिकता, पर सकारात्मक प्रभाव डालते हैं, और महिला प्रधान और अनियत श्रम पर निर्भरता जिसका नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, को लेने के बावजूद भी, मुस्लिम एवं हिन्दी भाषी प्रवासी, अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए बाकी जनसंख्या की तुलना में काफी कम संभावित रहे और उन्हें काम पर भेजने के लिए ज्यादा संभावित रहे। तथापि, अनुसूचित जाति के परिवारों के बीच स्त्री मुखियापन के काफी ज्यादा प्रचलन के कारण विश्लेषण में स्त्री मुखियापन को कारक के रूप में लेने पर अनुसूचित जाति प्रभाव गायब हो गया।

कारकों जो एस.सी. बच्चों के बीच खराब शैक्षिक परिणामों की व्याख्या करने वाले कारकों के अपने पुनरावलोकन में नांबीसन ने कुछ ऐसे तरीकों की ओर संकेत किया जिनसे जाति पहचान की भूमिका अदा करती है। अध्यापक गण प्रमुखत्या उच्च जाति है और जाति संबंधों की वैधता के बारे में अपनी खुद की समझ कक्षा के अंदर लाते हैं। दलित बच्चों से ये प्रत्याशा की जाती है कि वो चपरासी का काम करेंगे और उन्हें निम्न काम दिए जाते हैं जैसे कि कक्षा कक्ष में झाडू लगाना एवं सफाई करना। जब बच्चे मुख्यतः अनुसूचित जाति, एवं अनुसूचित जनजाति समुदायों से थे तो अध्यापकों की अनुपस्थिति की उच्च दरें दर्ज की गई। पश्चिमी बंगाल में, अन्य स्कूलों की तुलना में इस प्रकार के स्कूलों में अध्यापिकी को अनुपस्थिति 75% पाई गई था। इस तरह के व्यवहार का प्रथम पीढ़ी के संभावित शिक्षुओं पर विशेष रूप से नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

सामाजिक अपवर्जन एवं बाल श्रम के बीच परस्पर क्रिया का प्रमाण एशिया के अन्य हिस्सों से मिला है। पाकिस्तान में भिक्षा मांगने पर रिपोर्ट ने बच्चों को विशेष रूप से संवेदनशील समूह से पाया। ऐसी सूचनाएं मिली हैं कि यौन अवैध व्यापार हेतु बच्चों का अपहरण कर लिया जाता है और यह भी माना गया कि छोटे लड़कों को कैमल बॉयस

के रूप में दबाई में बेचा जा रहा है। नशीले पदार्थों के सेवन आसक्ति के प्रति भी संवेदनशीलता थी। तथापि, जैसा कि रिपोर्ट बताती है, 'भीख मांगने के अधिकांश काम की जाति–आधारित प्रकृति .... का अर्थ है कि बच्चों के लिए उनके कार्य की दिशा अधिकतर पूर्व निर्धारित होती है और उनके विकल्प सीमित होते हैं। यह विशेष रूप से लड़कियों के लिए खतरनाक है, जो अपने आप को, हमेषा नहीं परंतु प्रायः अपने परिवारों के द्वारा आय की पूरकता हेतु यौन कार्यकर्ता के रूप में उपयोग किए जाते हुए पाएंगी।

इस अध्ययन (यूनेस्को, 2004) में समाविष्ट अन्य क्षेत्रों की तुलना में लेटिन अमेरिका में शिक्षा के उच्च स्तर हैं, शैक्षिक परिणामों में सामाजिक अपवर्जन सुस्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। यह लुकास के अनुमानों द्वारा प्रदर्शित होता है। उन्होंने गौर किया कि बोलिविया में जबकि स्कूल उपस्थिति की दरें बहुत उच्च थीं (अश्वेत महिलाओं के लिए प्राथमिक स्कूल में 93% उपस्थिति निम्न थी) 'अश्वेत' बच्चों के लिए प्राथमिक स्कूल में न उपस्थित होने की 1.4 गुना संभावित था, और श्वेत बच्चों में जितना अशिक्षित होना दुगना संभावित था ब्राजील में जहाँ उपस्थिति दरें उच्च थीं, अश्वेत बच्चों का प्राथमिक स्कूल में अनुपस्थित होना 1.7 गुना संभावित था और 5 गुना अशिक्षित होना संभावित था। पैराग्वे में, अष्वेत बच्चों के लिए प्राथमिक स्कूल से अनुपस्थित का संभावना 1.8 गुना थी। (1.5 पुरुष एंव 2.3 महिलाएं) और उपस्थिति की दरें 4 प्रतिशत बिन्दु की थी (पुरुष के लिए 3 और स्त्री लिए 5) 15–24 वर्ष के आयु समूह के बच्चों के लिए निरक्षरता की दरें 5 प्रतिशत अंकों के साथ 3.5 गुना उच्च थीं।

### ckèk iz'u 3

uksV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. गरीबी रेखा से नीचे की जनसंख्या का प्रतिशत जानने के लिए भारत सरकार द्वारा 1990 से 2010 तक बनाई गई रिपोर्ट ज्ञात कीजिए। इनमें से एक रिपोर्ट का चयन कीजिए और सूचीबद्ध करें कि मध्य प्रदेश, बिहार हरियाणा, पंजाब, तमिलनाडु, केरल, उड़ीसा, आसाम एवं गुजरात के राज्यों में गरीबी के जाल में फंसे एस.सी., एस.टी. एवं महिलाओं का प्रतिशत कितना है?

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

## 18-8 lkekftd viotZu ds izfr izfrfØ;k djuk

हमने सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा का उस एक तरीके की ओर ध्यान खींचने के लिए उपयोग किया है जिस तरीके से गरीबी असमानता के साथ जुड़ी है : गरीबों के कुछ वर्गों के बीच अभावग्रस्तता की केन्द्रक प्रकृति। गरीबी में कमी, मानवीय क्षमताओं में निवेश तथा सामाजिक न्याय की प्रौन्नति के साथ वर्तमान नीतिगत सरोकार पेश करने के लिए सामाजिक अपवर्जन द्वारा प्रस्तुत चुनौतियाँ बताती है कि विकास का सामान्य व्यवसायिक दृष्टिकोण विगत काल में पर्याप्त प्रमाणित नहीं हुआ और भविष्य में ऐसा करना असंभावित है। सामाजिक रूप से अपवर्जित समूह डेटा संग्रह के सामान्य रूप जो कि 'गरीब' को मात्र उनकी परिसम्पत्तियों तथा आय द्वारा परिभाषित करते हैं अदृश्य

कर दिए गए हैं। वियोजित आंकड़े की अनुपस्थिति ने सामाजिक अपवर्जन की समस्या को अदृश्य करने में सहायता की है। इस रिपोर्ट ने कुछ देशों से आंकड़े को अन्य की तुलना में कहीं ज्यादा उद्धृत किया है, इसलिए नहीं क्योंकि इन देशों में समस्या बद्दतर है बल्कि इसलिए कि डेटा उपलब्ध हो सकता है।

सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों का आर्थिक संवृद्धि की सामान्य प्रक्रियाओं से बाकी गरीबों की तुलना में लाभान्वित होना कम संभावित होता है क्योंकि न केवल उनके पास गरीबों के अन्य वर्गों की तुलना में विभिन्न प्रकार के संसाधन कम हैं, परंतु वो इन संसाधनों को आय में तबदील करना भी मुश्किल पाते हैं, इसका कारण भेदभाव है जिसका कि उन लोगों को श्रम एवं वस्तुओं के बाजार में सामना करना पड़ता है।

सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों को सामान्य रूप के सामाजिक प्रावधानीकरण की गम्यता से वंचित किया जा सकता है, चाहे यह निजी व्यवस्था या राज्य द्वारा प्रदान की जा रही है। बाजार में इन सेवाओं को खरीदने के लिए उनके पास आवश्यक साधनों का अभाव हो सकता है, जबकि यह उद्धृत उदाहरण दर्शाते हैं, व्यापक समाज में प्रचलित भेदभावपूर्ण रवैया सेवा व्यवस्था के लिए जिम्मेदार राजकीय अधिकारियों द्वारा प्रायः पुनः उत्पन्न किया जाता है।

अंततः, सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों का सामान्यतः ' गणतंत्र में सामान्य' मॉडलों भागीदारी करना कम संभावित है। विशेष रूप से, जहाँ वे अल्पसंख्यक वर्ग बनाते हैं, सत्ता के लिए प्रतिस्पर्धा कर रहे राजनीतिक दलों को उनके हित को ध्यान में लेने के लिए कोई प्रेरणा नहीं होती हैं क्योंकि वे लोग न तो पर्याप्त वोटों का प्रतिनिधित्व करते हैं न ही उनके पास पर्याप्त संगठनात्मक शक्ति होती है कि प्रभाव डाल सकें। न ही उनके पास राजनीतिक पद के लिए प्रतिस्पर्धा करने के लिए आवश्यक संसाधनों का होना संभावित होता है। उदाहरण के लिए, केवल 4.4% ब्राजीली कांग्रेस अफ्रीकी वंशावली की थी हालांकि यह समूह लगभग आधी ब्राजीली जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता था। पूरे लेटिन अमेरिका में सीनेट तथा कांग्रेसी सीटों का एक पांचवे से कम हिस्सा स्त्रियों के पास था।

इसलिए, सामाजिक अपवर्जन के प्रति नीतिगत प्रतिक्रियाओं को उन बहुविध एवं अति व्याप्त अभावग्रस्तता जिनका वो प्रतिनिधित्व करता है को संबोधित करना चाहिए। अभावग्रस्तता की बहुविधता को, अन्य बातों के साथ, सांस्कृतिक मानकों एवं मूल्य, जो अपवर्जित समूहों के विरुद्ध भेदभाव को मजबूत करते हैं, को संबोधित करने के लिए और ऐसी नीतियां बनाने के लिए ऐसी नीतियां बनाने के लिए, और बहुमुखी उपागम की आवश्यकता है जो उनकी गरीबी की दुराग्रही प्रकृति को संबोधित करेगी और न केवल राजनीतिक क्षेत्र में परंतु उनके जीवन को प्रभावित करने वाले सामूहिक निर्णयन की भिन्न समस्त प्रक्रियाओं में अपनी बात व्यक्त करने की उनकी क्षमता को मजबूत करेंगी, ये सामूहिक निर्णयन उनको जीवन को प्रभावित करेंगे। गरीबों में बीच सामाजिक रूप से अपवर्जित लोग दूसरों की तुलना में निम्न स्तरों की आय तथा क्षमताओं की व्यवस्थित रूप से जिस सीमा तक सूचना देते हैं उस सीमा तक उसके बेहतर अनुमान के लिए सांख्यिकी की उपलब्धता स्पष्ट रूप से अनिवार्य है। और जबकि ज्यादा विस्तृत गुणात्मक शोध उन क्रियाविधियों जिसके द्वारा अपवर्जन समयोपरि पुनः उत्पन्न होता है को अनावृत कर सकता है। राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय दोनों स्तरों पर डेटा संग्रह करने के लिए जिम्मेदार एजेंसियों को गरीबों के शायद अब तक से ज्यादा वियोजन की आवश्यकता हो सकती है।

सांस्कृतिक मानक तथा मूल्य जो अपवर्जित समूहों के विरुद्ध सतत भेदभाव की ओर प्रवृत्त करते हैं को शैक्षिक प्रणालियों, मीडिया लोक अभियानों के जरिए तथा ऐसा

कानूनी ढांचे स्थापित करके बदला जा सकता है जो भेदभावपूर्ण व्यवहार को हतोत्साति करें और अपवर्जित समूहों के नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों को मजबूत करें। शैक्षिक पाठ्यचर्या, वो भाषा जिसमें पढ़ाया जाताा है और जिस सीमा तक शिक्षक सामाजिक अपवर्जित समूह से लिए जाते हैं, या कम से कम उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण हैं, ये सब जिस सीमा तक शिक्षा सामाजिक अपवर्जन की पुनः उत्पत्ति को प्रौन्नत करती है या उसे चुनौती देती है उस सीमा का निर्धारण करने में सहायता करेगा। समाज के अंदर भिन्नता तथा विविधता के बारे में दैनिक बोध को आकार देने में मीडिया ज्यादा से ज्यादा शक्तिशाली भूमिका अदा करता है। और उसे उन तरीकों में शिक्षित करने, जागरूक करने तथा सत्कार करने में तैयार करने के लिए जुटाया जा सकता है जो उन कुछ अवरोधों को तोड़ेगें जो कि सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों को बाकी समाज से पृथक करते हैं।

कानूनी ढांचा यह सुनिश्चित करने में सहायता कर सकता है कि प्रजाति, नृजातीयता, अक्षमता, जेंडर या आयु के आधार पर भेदभाव समाज के अंदर अस्वीकार्य बन जाए। वो यह भी सुनिश्चित कर सकता है कि अपवर्जित समूहों की अधिक संवेदनशीलता के होने पर उनके भूमि, ऋण, रोजगार और लाभों के अधिकार सुरक्षित रहे। फिर भी, सामाजिक अपवर्जन का कानूनी दृष्टिकोण यह आवश्यक कर देता है कि उन व्यवस्थाओं पर ध्यान दिया जाए जिनके द्वारा लोग न्याय प्राप्त करते हैं। गरीबों तथा हाशिये के लोगों के लिए विधि के शासन को सुदृढ़ करने का अर्थ न्यायिक प्रणाली को उस स्तर पर मजबूत करना है जिस स्तर पर दिन प्रतिदिन न्याय किया जाता है। अब यह बताने के लिए पर्याप्त प्रमाण है कि वो संस्थाएं जो समाज में न्याय के प्रशासन का प्रतिनिधित्व करती हैं – पुलिस, न्यायालय, न्यायाधीश और वकील – ये सभी गरीबों तथा सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों के जीवन पर इस तरीके से अतिक्रमण करते हैं जो उनके जीवन एवं उनकी जीविकाओं को जोखिम में डालते हैं।

सामाजिक अपवर्जन से जुड़े बहु रूपी अभावग्रस्तताओं को संबोधित करने और गरीबी के अंतःपीढीगत प्रेशण जो कि हमेशा होता है को तोड़ने के लिए सामाजिक अपवर्जन को संबोधित करने वाली नीतियों को विशेष प्रावधानों को समेकित करना पड़ सकता है। ऐसे प्रावधान भौगोलिक या समूह लक्ष्यीकरण पर विशेष ध्यान देना आवश्यक कर सकते हैं। यह अपवर्जित समूहों के बच्चों को लक्ष्य करना आवश्यक कर सकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उन्हें जीवन के सीमित अवसरों का सामना करना पड़े जिनका माता–पिता ने सामना था। इसके लिए अपवर्जित समूहों के अंदर जेंडर असमानताओं को संबोधित करने की आवश्यकता हो सकती है ताकि अब तक हाषियाकृत संस्कृतियाँ आंतरिक असमानताओं को अनिवार्य तौर पर प्रौन्नत न करें जो कि ऐसी संस्कृतियों में साकार रूप ले सकती हैं।

सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों की संवेदनशीलता के विशेष रूपों को संबोधित करने के लिए सामाजिक संरक्षण नीतियों को बनाना आवश्यक बन सकता है। यह देखते हुए कि ऐसे समूहों के अधिकतर बहुसंख्यक अनौपचारिक अर्थव्यवस्था में सर्वाधिक शोषणीय रूपों के कामों में पाए जाते हैं, तो औपचारिक क्षेत्र के पूर्णकालिक कार्मिक को ध्यान में रख कर सामाजिक संरक्षण के जिन रूप की तैयारी की जाती है तो उनका उपयुक्त होना असंभावित है। यदि वो लोग जो सेवार्थीवर्गवाद के वैयक्तिक रूपों पर आश्रित है या अपनी उत्तरजीविकता के लिए अत्यन्त असुरक्षित प्रकार के रोजगार पर निर्भर करते हैं उन्हें यदि अपने अधिकारों के लिए संगठित होने के लिए क्षमता चाहिए तो किसी प्रकार की मूलभूत सुरक्षा अनिवार्य हो सकती है।

सामाजिक अपवर्जन को संबोधित करने के लिए उन लोगों के रवैयों को बदलना होगा जो नीतियाँ बनाने एवं लागू करने के लिए जिम्मेदार हैं, नीतिगत डिजाइन इस तरीके

से बनाए जाएं जो दुराग्रही गरीबी की स्थितियों में आने वाले परिवर्तनों की गति से मेल खाए, इस प्रावधानों का क्रियान्वयन यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक संसाधनों को अलग किया जाए और सबसे ज्यादा, ऐसी क्रियाविधियों सृजित किया जाए जो उन्हें जिनकी इन प्रयत्नों की सफलता में भागीदारी है उनको उनके नीतिगत डिजाइन में भागीदारी करने दें।

नीति तथा राजनीतिक प्रक्रियाओं में सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों की आवाज को मजबूत करने का अर्थ इन प्रक्रियाओं के ढंग को बदलने का हो सकता है। शासन की संरचनाओं का विकेन्द्रीयकरण इस परिवर्तन का अनिवार्य तत्व प्रतीत होगा। विकेन्द्रीयकरण किस प्रकार से किया जाता है, कौन सी शक्तियाँ तथा जिम्मेदारियाँ सौंपी जाती है संदर्भ अनुसार भिन्न हो सकती हैं परंतु राज्य की शक्ति को उन पात्रों की गम्यता के अंदर लाना जो शक्ति के ज्यादा दूरस्थ केन्द्रीकृत संरचनाओं को गम्य नहीं कर सकते हैं, सहभागिता एवं जवाबदेयता निर्मित करने के लिए आवश्यक पूर्वशर्त होनी चहिए।

इसक साथ ही साथ, यह देखते हुए कि बड़ी मात्रा में सामाजिक अपवर्जन स्थानीय स्तर के अधिक्रमों के जरिये पुनः उत्पन्न होता है, राज्य को बहुतों के द्वारा अभी भी एकमात्र संस्था के रूप में देखा जाता है जिसके पास न केवल बाजार के परंतु प्रथा एवं परंपरा के संबंधों को विसशक्तिकरणीय टालने अथवा नष्ट करने की क्षमता होती है, कितनी भी अपूर्ण चाहे। उस सीमा तक, केंद्रीय राज्य जो स्थानीय शक्ति संरचनाओं के साथ घनिष्ट रूप से उलझा नहीं है और उन्हें चुनौती देने में ज्यादा सक्षम हो सकती है, की भूमिका प्रासंगिक है।

अंततः, उन सिविल सोसाइयटी नेटवक्र्स जो सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों को संगठित करने में सहायता करते हैं और जो अन्य संगठनों जो को बढ़ावा देना अधिकारों एवं सामाजिक न्याय के लिए लड़ रहे हैं के साथ उनके मैत्री संबध निर्मित करते हैं वो आवाज उठाने की उनकी क्षमता को सुदृढ़ करने तथा उनके दावे नीति एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं द्वारा संबोधित किए गए हैं सुनिश्चित करने के लिए नीचे से ऊपर का तरीका प्रदान करते हैं। जैसा कि हमने इस इकाई में प्रदर्शित करने का प्रयास किया है, यह तो सामाजिक रूप से अपवर्जित समूहों का सीमान्तीकरण, है अपने समाज में निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को प्रभावित करने की लम्बे समय से उनकी अक्षमता है जो आंशिक रूप से यह स्पष्ट करती है कि वे लोग क्यों विस्तारित समयोपरि गरीब बने हुए हैं।

## 18-9 lkjk'k

इस पर गौर किया गया है कि सहस्राब्दि घोषणा समानता, स्वतंत्रता और अधिकारों के सिद्धांतों के प्रति कहीं ज्यादा प्रतिबद्धता व्यक्त करती है बजाय जो एम.डी.जीस में सुस्पष्ट होती है। द्विपक्षीय एजेंसियाँ यह सुनिश्चित करने के लिए बहुत कुछ कर सकती हैं कि घोषणा के सिद्धांत एम.डी.जीस की व्याख्या एवं क्रियान्वयन को प्रभावित करते हैं। वो यह भी सुनिश्चित कर सकेंगे कि ये सिद्धांत सरकार के साथ उनकी नीतिगत वार्ताओं में अंतःस्थापित हैं। अधिकांश सरकारों ने महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय संधियों एवं प्रसंविदाओं पर हस्ताक्षर कर दिए हैं जो उन्हें अपने नागरिकों के राजनीतिक तथा सिविल अधिकारों का सम्मान करने तथा अपने सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के प्रगतिशील एहसास के लिए प्रतिबद्ध करती हैं। ऐसा करने में उन्होंने इन अधिकारों का समर्थन करने का दायित्व स्वीकार किया है। गरीबी घटाने की रणनीतियाँ जो समाज के अपवर्जित वर्गों को सुव्यक्त रूप से संबोधित करती हैं जिससे उनके अपने दायित्वों को पूरा कर सकने का एक महत्वपूर्ण तरीका हैं। इस इकाई में, हमने विभिन्न विकास सूचकों पर सामाजिक अपवर्जन के नकारात्मक प्रभाव की चर्चा की है और यह

भी स्पष्ट किया है कि क्यों समावेशी एवं सदैव अनुरूप विकास के लिए सामाजिक समावेशन की अत्यधिक आवश्यकता है।

### ckèk iz'u 4

uksV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. क्या आप इस बात से अवगत हैं कि एन.जी.ओ. प्रथम भारत में शिक्षा पर स्टेटस रिपोर्ट प्रकाषित कर रहा है? अपने क्षेत्र के शिक्षा क्षेत्र में कार्य कर रही किसी एक एनजीओ में जाए और एसेर या ए.एस.ई.आर. (हिन्दी में अर्थ है प्रभाव) रिपोर्ट लेकर आए। कृपया अपने जिले में प्राथमिक शिक्षा पर एक पृष्ठ का नोट तैयार करें। और शिक्षा की प्रस्थिति या दर्जे का आकलन करने के लिए इस्तेमाल किए गए सूचकों की सूची भी बनाइए।

..........................................................................................................

..........................................................................................................

..........................................................................................................

## 18-10 'kCnkoyh

fxfu xq.kkad % गिनि गुणांक इटलीवासी सांख्यिकीविद एवं समाजशास्त्री कौरेडो गिनि द्वारा विकसित किया गया सांख्यिकीय बिखराब का माप है। गिनि गुणांक बंटन की असमानता का माप है, कुल समानता व्यक्त करने वाले शून्य का मान तथा एक उच्चिष्ठ असमानता का मान। इसे सामान्यतया आय या सम्पदा की असमानता का माप करने के लिए उपयोग किया जाता है।

fodsUnzh;dj.k % यह, निम्नतम प्रशासनिक इकाई जो लोगों के ज्यादा समीप है को कार्य, कार्यकर्त्ता और वित्त सौंपने की प्रक्रिया है।

,u-,l-,l- % राष्ट्रीय प्रतिदर्ष सर्वेक्षण राष्ट्र व्यापी सर्वेक्षण है जो सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय द्वारा विभिन्न सामाजिक–आर्थिक मुद्‌दों पर उत्तरोत्तसर दौर में किया जाता है। प्रत्येक दौर विशिष्ट काल में वर्तमान रूचि के विषयों को समाविष्ट करता है।

## 18-11 ckèk iz'uksa ds mÙkj

### Ckkèk iz'u 1

1. सामाजिक अपवर्तन एक प्रक्रिया है जिसके जरिए व्यक्ति या समूह पूर्णत्या या आंषिक रूप से समाज में जिसमें वो रहते हैं पूर्ण प्रतिभागिता से अपवर्जित कर दिए जाते हैं। वर्ष 1994 में सामाजिक शिखर सम्मेलन विकासशील देश संदर्भ में गरीबी, असमानता तथा सामाजिक न्याय के साथ सरोकारों के लिए इस अवधारणा की उपयोगिता पर ज्यादा से ज्यादा ध्यान दिया जाने लगा है। सामाजिक अपवर्जन की अवधारणा के साथ जो संस्थाएं सुपरिचित हैं – अंतरराष्ट्रीय श्रम अध्ययन संस्थान, ऐशियाई विकास बैंक, इंटर–अमेरिकन विकास बैंक और विश्व बैंक।

### Ckkèk i'u 2

1. सामाजिक अपवर्जन के परिवर्तनशील रूप अस्थाई परिघटना से संबंधित है जैसे कि वो स्थिति जिसका भिन्न वातावरण में सीमित समय व्यतीत करने वाले प्रवासियों को सामना करना पड़ता है या व्यक्तित्व या पहचान जो तुलनातमक आसानी से बदली जा सकती है, उदाहरण के लिए, धार्मिक परिवर्तन या औपचारिक नागरिकता अर्जित करना। इसके विपरीत, अपरिवर्तनशील पहचान उन अस्तित्वों या संबंधों से जुड़ी है जो विस्तरित समयावधि के दौरान उद्विकसित हुई है, बिल्कुल आदिम स्वरूप की लगती है और आसानी से बदलती नहीं है। यह सतत् रूप के सामाजिक अपवर्जन के साथ संबंधित होने लगती है, व्यक्ति के जीवन काल या कई पीढ़ियों तक चलती रहती हैं।

## 18-12 dN mi;kxh iLrd

1. एक्कर, जे. 1990, हिरार्कीस जॉब्स, बॉडीस : ए थ्योरी ऑफ जेंडरड ऑर्गनाइजेशन, जेंडर एंड सोसाइटी, खंड–2, सं. 4, पृ.139–158

2. बीएल, जे. एवं क्लर्ट, सी. 2000 : सोशल एक्सक्लूजन एंड ग्लोबलाइजेशन : इंप्लीकेशनस फॉर सोशल पॉलिसी एंड अर्बन गर्वनेंस, अफ्रीकन टेक्नीकल फैमिलीस – मैक्रो इकोनोमिक्स 2 के लिए तैयार किया गया पेपर, वाषिंगटन डीसी : दी वर्ल्ड बैंक

3. बूथ, डी., एवं अन्य, 1995 : 'कोपिंग विद कोस्ट रिकवरी : ए स्ट्डी ऑफ दी सोशल इम्पैक्ट एंड रिसपॉन्सिस टू कोस्ट रिकवरी इन बेसिक सर्विसिस (हैल्थ एंड एजुकेशन) इन पुअर कम्यूनिटीस इन जांबिया, वर्किंग पेपर नं.3, सीडा टास्क फोर्स ऑन पॉवर्टी रिडक्शन, स्टॉकहोल्म : सीडा

4. डी हैन, ए, एवं मैक्सवेल, एस, 1998 : एडिटॉरेल : पॉवर्टी एंड सोशल एक्सक्लूज़न इन नोर्थ एंड साउथ', आई.डी.एस. बुलेटिन, खंड 29, सं.। पृष्ठ 1–9

5. डेवरयुएक्स, एस. 1999 : 'मेकिंग लेस लास्ट लॉगर : इंफोर्मल सेफ्टी नेट्स इन मलावी', आई.डी.एस.डिसकशन पेपर न. 373, अक्टूबर, ब्राइटन : आइ डी एस।

6. फोल्ब्रे, एन. 1994 : 'हू पेस फॉर दी किड्स? जेंडर एंड दी स्ट्रक्चरस ऑफ कॉन्सट्रेंट', लंदन एवं न्यूयॉर्क : रुटलेज।

7. फ्रेज़र एन. 1989 : 'अनरुली प्रैक्टिसिस : पावर, डिकोर्स एंड जेंडर इन कनटम्पोरेरी सोशल थ्योरी', कैम्ब्रिज : पॉलिटी प्रैस।

8. फ्रेज़र, एन., 1997 : जस्टिस इंटररप्स : क्रिटीकल रिफलेक्शन्स ऑन दी 'पोस्ट–सोषलिस्ट कंडीशन', इंदर एंड न्यूयॉर्क : रुटलेज

9. गोरे, सी., 1993 'एनटाइटलमेंट रिलेशन्स एंड अनरुली सोशल प्रेक्टिसिस : ए कॉमेंट ऑन दी वर्क ऑफ अमर्त्य सेन', जर्नल ऑफ डेवलेपमेंट स्ट्डीस, खंड 29, नं. 3, पृ. 429–460।

10. गोरे, सी., 1994 : सोशल एक्सक्लूज़न एंड अफ्रीका साउथ ऑफ सहारा : ए रिव्यू ऑफ दी लिटरेचर', लेवर इंस्ट्रटयूशनस एंड डेवलेपमेंट प्रोग्राम डिकशन पेपर नं. 62, जेनेवा : इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट फॉर लेबर स्ट्डीस।

11. गोरे, सी., 1995 : माकेटटस, सिटीज़नषिप एंड सोशल एक्सक्लूज़न', जी. रॉज़रस,

सी.गोरे एवंज`. फिगेड्रेडो (संपादक) ‘सोशल एक्सक्लूज़न : रेह्टरिक, रिएलिटी, रिसपोसिस’, में हैं, सामाजिक विकास हेतु विश्व षिखर सम्मेलन में योगदान, जेनेवा, आई.आई.एल.एस.।

12. गोरे, सी. एवं फिगरे रेडो, जे.बी. 1997 : सोशल एक्सक्लूज़न एंड एंटी पॉवर्टी पॉलिसी : ए डिबेट, जेनेवा, आई.आई.एल.एस / यू.एन.डी.पी.।

13. हैरिस–व्हाइट, बी. 1995 : ‘इकोनोमिक रिस्ट्रक्चरिंग : स्टेट, मार्किट, क्लकिटव एंड हाऊस होल्ड एक्शन्स इन इंडिया,स सोशल सेक्टर’, दी यूरोपियन जरनल ऑफ डेवलेपमेंट रिसर्च, खंड 7, नं.1, पृ. 124 / 47।

14. आइ.आई.एल.एस., 1997 : ‘सोशल एक्सक्लूज़न एंड एंटी पॉवर्टी : ए डिबेट’, शोध श्रृंखला नं. 110, जेनेवा : इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट फॉर लेबर स्ट्डीस।

15. इंस्टीट्यूट ऑफ डेवलेपमेंट स्ट्डीस, 1998 : ‘पॉवर्टी एंड सोशल एक्सक्लूज़न इन नोर्थ साउथ’, आई.डी.एस. बुलेटिन, खंड 29, नं. 1, ब्राइटन : आई.डी.एस.।

16. जैकसन, सी., 1999 : ‘सोशल एक्सक्लूज़न एंड जेंडर : डज़्वन साइज़ फिट ऑल?’’ दी यूरोपियन जरनल ऑफ डेवलेपमेंट रिसर्च, खंड-**II**, पृश्ठ 125–146।

17. जोर्डन, बी. 1996 : ‘ए थ्योरी ऑफ पॉवर्टी एंड सोशल एक्सक्लूज़न’, कैम्ब्रिज : पॉलिटी प्रैस।

18. कबीर, एन., 1994 : रिवर्सड् रि एलिटीस : जेंडर डिसरकीस इन डेवलेपमेंट थॉट’, लंदन : वर्सो

19 लूकास, एच.एंड नूवागाबा, ए., 1999 : ‘हाऊस होल्ड कोपिंग स्ट्रेटाजिस इन रिसपोंस टू यूज़र चार्जेस फॉर सोशल सर्विसिस : ए केस स्ट्डी ऑन हैल्थ इन यूगांडा’, आई.डी.एस. वर्किंग पेपर, नं.86, ब्राइटन : इंस्टीट्यूट ऑफ डेवलेपमेंट स्ट्डीज।

20. ल्यूकस, एस. 1974 : ‘पॉवर : ए रैडिकल वाइस,’ लंदन : मैकमिलियन।

21. मैकिनतोश, एम. 1997 : ‘पब्लिक मैनेजमेंट फॉर सोशल इनक्लूज़न’, लोक प्रबंध पर सम्मेलन : अगली शताब्दी के लिए चुनौतियाँ, में प्रस्तुत किया गया पेपर, आई.डी.पी.एस., मैनचेस्टर, जून 30 जुलाई 2।

22. मामदानी, एम. 1996 : ‘सिटीज़न एंड एबजेक्टस : कानटेम्पोररी अफ्रीका एंड दीलिगेसी ऑफ लेट कोलोनियज़िज्म, कम्पाला : फाउंटेन पब्लिषर्स।

23. नायक, पी., 1994 : ‘इकोनोमिक डेवलेपमेंट एंड सोशल एक्सक्लूज़म इन इंडिया’, सोशल एक्सक्लूज़न एंड साऊथ एशिया में, श्रम संस्थाएं एवं विकास कार्यक्रम डी पी / 77 / 1994, जेनेवा।

24. नोर्थ, डी. 1990 : ‘इंस्टीट्यूशन्स, इंस्टीट्यूशनल चेंज एंड इकोनोमिक परफोर्मेंस’, कैम्ब्रिज : कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस।

25. प्रोब टीम, 1999, : ‘पब्लिक रिपोर्ट ऑन एजुकेशन इन इंडिया’, नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस।

26. पार्किन, एफ., 1979 :‘मार्किसज़्म एंड क्लास थ्योरी : ए बुर्जुआ क्रिटिक’, लंदन : तबिस्टॉक।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

27. रा, एस., 1996, : 'जेंडर डिफरेंषल्स इन दी सोशल इम्पैक्ट ऑफ लीप्रोसी', लीप्रोसी रिव्यू, खंड 67।

28. सिला, ई., 1998 : 'पीपल आर नोट दी सेम : लीप्रोसी एंड आइडेंटिटी इन ट्वंटीयथ सेंचुरी', माली, हनिमान।

29. सिलवर, एच., 1997 : 'पॉवर्टी, एक्स क्लूज़न एंड सिटिज़नषिप राइट्स', जे. फिगेरेडो एवं सी.गोर (सम्पादक), 'सोशल एक्सक्लूज़न एंड एंटी–पॉवर्टी : ए डिबेट, में जेनेवा : आई.आई.एल.एस.।

30. टाय जागे, एफ. एवं टिबेजुका, ए., 1996 : 'पॉवर्टी एंड सोशल एक्सक्लूज़न इन तंजानिया', इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ लेबर स्ट्डीस/यू.एन.डी.पी रिसर्च सरीज़ पेपर, नं. 109, जेनेवा : आई.आई.एल.एस./यू.एन.डी.पी.।

31. वासावी, ए. आर., 1999 : 'हारबिंजर स ऑफ रेन : लैंड एंड लाईफ इन साउथ इंडिया', नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रैस।

32. ब्लासोफ, कैरोल एवं अन्य, 1996 : 'डबल ज्योपार्डी : वूमेन एंड लीप्रोसी इन इंडिया', हू स्टैटिसटिक्स क्वार्टरली, खंड 49।

33. व्हाईट, एच., 1999 : 'अफ्रीका पॉवर्टी स्टेटस रिपोर्ट, 1999 ड्राफ्ट, ब्राइटन : आई.डी.एस.

34. वुड, जी. (आने वाला) : 'एडवर्स इनकोरपोरेशन : अनदर डार्क साइड ऑफ सोशल कैपिटल', युनिवर्सिटी ऑफ बाथ।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 18-13 ckèk iz'u ¼euu ,oa vH;kl gsrq½

1. आप गरीबी से क्या समझते हैं? गरीबी के बहुआयामी माप की व्याख्या कीजिए।

2. असमानता के विश्लेषण में सामाजिक अपवर्जन किस प्रकार योगदान देगा? इस इकाई में सामाजिक अपवर्जन के संबंध में किन क्षेत्रों की चर्चा की गई है? एन.एस.एस. तथा एन.एफ.एच.एस. डेटा की सहायता से स्वास्थ्य तथा शिक्षा के क्षेत्रों में असमानताओं को स्पष्ट कीजिए।

3. एम.डी.जीस प्राप्त करने में सामाजिक समावेशन किस प्रकार सहायक है?

# bdkbZ 19 l'kDrhdj.k rFkk fol'kfDrdj.k ds midj.k ds :i esa dkuwu

## bdkbZ dh :ijs[kk

19.1 प्रस्तावना

19.2 उद्देश्य

19.3 भारतीय संविधान द्वारा निर्धारित मानक

19.4 आपराधिक कानूनों के जरिए संरक्षण

19.5 श्रम कानूनों के जरिए सशक्तीकरण

19.6 वैवाहिक कानून

19.7 कानून एवं नीतियाँ जो महिलाओं के विसशक्तीकरण की ओर प्रवृत्त करते हैं

- 19.7.1 वैवाहिक कानून
- 19.7.2 सशस्त्र बल (विशेष शक्ति) अधिनियम (ए.एफ.एस.पी.ए.)
- 19.7.3 महाराष्ट्र में मद्यशाला नर्तकियों के विरुद्ध प्रतिबंध आदेश
- 19.7.4 महिलाओं के लिए रात्रि पारी का निषेध
- 19.7.5 जनसंख्या संबंधी नीतियाँ
- 19.7.6 समलिंगी आचरण का अपराधीकरण
- 19.7.7 भूमि तथा सम्पत्ति अधिकारों पर कानून तथा नीतियाँ

19.8 विसशक्तीकरणीय कानूनों तथा नीतियों के विरुद्ध सामाजिक एवं कानूनी प्रक्रियाएं

19.9 सारांश

19.10 शब्दावली

19.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

19.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

19.13 बोध प्रश्न (मनन एवं अभ्यास हेतु)

## 19-1 izLrkouk

कानून स्वीकार्य तथा अस्वीकार्य अधिनियमों के मानक एवं कसौटियाँ निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। कानून का महिलाओं के सशक्तीकरण तथा जेंडर संबंधी मुद्दों के साथ स्वाभाविक तौर पर घनिष्ट अंतःसंबंध है। आपको यह जान कर आश्चर्य होगा – हमारे पास कई ऐसे कानून थे जो जेंडर मुद्दों पर असर डालते थे। फिर भी, जेंडर भेदभाव कम या समाप्त नहीं हुआ है; न ही जेंडर आधारित हिंसा। तो फिर ऐसे कानूनों की प्रासंगिकता क्या है? ऐसे कानूनों द्वारा निर्धारित मानक चाहे पूर्ण रूप से क्रियान्वित नहीं किए गए और प्रायः उनका उल्लंघन किया गया परंतु मानक के रूप में कानून महत्वपूर्ण बने रहते हैं जिनके क्रियान्वन प्रवर्तन के लिए समूह द्वारा मांग की जा सकती है – व्यक्तिगत तौर पर या समूहों द्वारा। पहली बात, कानून मौजूद ही नहीं होता है मान लो यदि घरेलु हिंसा निषेध करने का, तो फिर महिलाएं अपने घरों में गरिमा एवं शांति के साथ रहने के अपने अधिकार का दावा किस प्रकार कर सकेगी?

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

व्यथित पक्षों को न्याय प्रदान करने के अलावा, कानून सामाजिक न्याय एवं समानता लाने के लिए महिला समेत, समाज के निर्बल, हाशियाकृत एवं संवेदनशील वर्गों की सुरक्षा करने की भी चेष्टा करता है।

## 19.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपको सक्षम होना चाहिए :

- जेंडर सशक्तीकरण के उपकरण के रूप में कानून की भूमिका स्पष्ट करने में;
- जो कानून लागू किए जाते हैं और जिन मुद्दों के साथ वे संबंध रखते हैं उन विभिन्न कानूनों और जेंडर तथा विकास के मुद्दों को संबोधित करने में उनके महत्व की चर्चा करने में;
- ऐसे कानूनों की प्रभावशीलता का आलोचनात्मक रूप से पुनरावलोकन करने में;
- उन तरीकों को प्रदर्शित करने में जिनसे कानून व्यक्तियों तथा समूहों का विसशक्तीकरण करने का भी प्रभाव डाल सकते हैं; और
- कानून के विसशक्तीकरण प्रभाव को निष्प्रभावी करने में उपयोग की जाने वाली रणनीतियों की पहचान करने में।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 19.3 भारतीय संविधान द्वारा निर्धारित मानक

भारतीय संविधान लिखित कानूनी, राजनीतिक तथा नैतिक दस्तावेज है। हमारे सभी मूलभूत अधिकार संविधान में लिखित हैं और उसके द्वारा गारंटीकृत हैं। भारतीय संविधान ने भारत में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधि होने के कारण, महिलाओं के अधिकारों से संबंधित कुछ मानकों को निर्धारित किया है। यह मानक तथा सिद्धांत, बाद में अन्य कानूनों के जरिए विस्तारित किए गए थे। संविधान में कथित कुछ महत्वपूर्ण मूल्यों के अंतर्गत न्याय (सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक), स्वतंत्रता (सोच, अभिव्यक्ति, विश्वास और पूजा की) और समानता (प्रास्थिति या दर्जे तथा अवसर की) समाविष्ट है। ये मूल्य तात्विक या सहज रूप से महिलाओं के सशक्तीकरण के साथ जुड़े हैं।

भारतीय संविधान में एक अध्याय मौलिक अधिकारों पर है, जो उन अधिकारों का चार्टर है जो अनिवार्य तौर पर व्यक्ति के जीवन एवं उसकी स्वतंत्रता को सरकार, राजकीय निकायों तथा एजेंसियों के मनमाने कृत्यों से सुरक्षा करते हैं। इसी प्रकार से राज्य के नीतिगत निर्देशक सिद्धांतों का अन्य अध्याया राज्य को शासन करने के लिए अपने सिद्धान्तों राज्य को दिशानिर्देश प्रदान करता है। मौलिक अधिकार तथा राजकीय नीति निर्देशक सिद्धांत दोनों मिल कर स्त्रियों के लिए सुरक्षात्मक कानूनों का आधार बनाते हैं। संविधान में स्त्रियों के अधिकारों पर प्रासंगिक प्रावधानों में निम्नलिखित शामिल हैं :

1) राज्य किसी भी व्यक्ति को विधि समक्ष समानता अथवा विधि की समतुल्य सुरक्षा से वंचित न करेगा (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 14)।
2) राज्य किसी भी नागरिक के विरुद्ध लिंग समेत किसी आधार पर भेदभाव नहीं करेगा; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15)।
3) राज्य आरक्षण तथा विशेष कानूनों के जरिये, स्त्रियों के पक्ष में, अभिपुष्टिकारात्मक कार्रवाई कर सकता है; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15(3))।
4) राज्य सार्वजनिक रोजगार के मामलों में लिंग व अन्य आधारों पर भेदभाव नहीं करेगा; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 16)।

5) स्त्रियाँ समेत सभी का जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा करने के लिए राज्य कर्तव्यबद्ध है; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21)।

6) राज्य मानवों में अवैध व्यापार करने से निशिद्ध है; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 23)।

7) राज्य को समान कार्य के लिए समान वेतन प्रदान करने निर्देश दिया गया है; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 39(ड))।

8) राज्य को कार्य तथा मातृ प्रसुविधा की न्यायपूर्ण तथा मानवीय स्थितियाँ सुनिश्चित करने के लिए प्रावधान करने का निर्देश है; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 42) और

9) प्रत्येक नागरिक का मौलिक कर्त्तव्य है कि वे ऐसी प्रथाओं का परित्याग करें जो स्त्रियों की गरिमा के लिए अपमानजनक है ; (भारतीय संविधान का अनुच्छेद 15 (अ) (इ))।

स्त्रियों की सुरक्षा से संबंधित संवैधानिक प्रावधान खाली शब्द नहीं है; उनका स्त्रियों की न्यायालयों के फैसलों, राजकीय नीतियों तथा कानून के अधिनियमन के जरिए स्त्रियों की सामाजिक, कानूनी तथा आर्थिक प्रस्थिति के पहलुओं पर, उनका सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए, समानता तथा अन–भेदभाव की गारंटी का परिणाम नियुक्तियों, पदोन्नतियों, कार्य समापन एवं कार्य स्थितियों में भेदभावपूर्ण प्रथाओं को गैर कानूनी घोषित करने का हुआ। इसी प्रकार से, स्त्रियों के द्वारा समान कार्य के लिए असमान वेतन को भी अवैधानिक मानकर समाप्त कर दिया गया है। स्त्रियों के सकारात्मक कृत्यों पर संवैधानिक प्रावधानों के अनुरूप, नगरपालिकाओं, शैक्षिक संस्थाओं, सार्वजनिक रोजगार तथा पंचायतों में स्त्रियों के लिए सीटों का आरक्षण किया गया है; महिला उद्यमियों को सुगम ऋण तथा कर रियायतें प्रदान की गई है, और महिलाओं की सुरक्षा हेतु विशेष कानून बनाए गए हैं – जैसे भारतीय दंड संहिता का खंड 498 ए (घरेलु हिंसा से संबंधित) और घरेलु हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम 2005।

जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी कार्यस्थल पर लैंगिक छेड़छाड़ के संदर्भों में प्रयुक्त की जाती थी, जहाँ इसे रोकने तथा निवारण हेतु सर्वोच्च न्यायालय ने दिशा निर्देश जारी किए हैं; प्रावधान ने भारतीय राज्य को क्विनाक्राइन तथा नोरप्लांट जैसी बन्ध्यीकरणीय औषधियों को निशेध करने के लिए दिशा निर्देषित किया जिसका स्त्रियों के स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता था, न्यायालयों ने राज्य को जीवन के अधिकार की गारंटी का उपयोग करते हुए जेल में महिला कैदियों की स्थिति को सुधारने के लिए निर्देश दिए हैं। समान कार्य के लिए समान वेतन से सम्बन्धित खंड ने समान पारितोशिक अधिनियम 1976 के अधिनियमन की ओर प्रवृत किया। कार्य की न्यायपूर्ण तथा मानवीय स्थितियों पर जोर देने ने कारखाना अधिनियम में प्रावधान करने और अन्य श्रम कानून बनाने की ओर प्रवृत किया और महिलाओं के लिए पृथक शौचालन और क्रेच की व्यवस्था और खतरनाक एवं कठिन कामों और रात्रि की पारी में महिलाओं को रोजगार देना निशेध विहित किया गया। राज्य द्वारा मातृ सहायता प्रदान करने के निर्देश का परिणाम मातृ प्रासुविधा अधिनियम 1961 के बनने का हुआ।

संवैधानिक प्रावधानों के अनुसार, भारत सरकार ने वर्ष 2001 को महिलाओं के सशक्तिकरण (स्वशक्ति) का वर्ष घोषित किया और उसी वर्ष में महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए राष्ट्रीय नीति बनाई।

### ckèk i'u 1

ukV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. महिलाओं से संबंधित तीन कृत्यों के नाम बताइए जिनसे राज्य को प्रावधानों के जरिए निषिद्ध किया गया है।

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

2. महिलाओं की सुरक्षा से संबंधित राज्य के कुछ कर्तव्य बताइए जो कि संविधान निर्देश देता है।

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

3. महिलाओं के पक्ष में कुछ संरक्षणात्मक कानूनों के नाम बताइए जो संवैधानिक प्रावधानों के अनुसरण में अधिनियमित किए गए हैं।

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

......................................................................................................

## 19-4 vkijkfèkd dkuuuk d tfj, lj{k.k

भारतीय दंड संहिता प्राथमिक कानून है जो विशिष्ट कृत्यों की अपराध के रूप में परिभाषित तथा उन्हें अपराध घोषित करता है और उसके लिए दंड की व्यवस्था करता है। महिलाओं के विरुद्ध हिंसा से संबंधित आई.पी.सी. (इंडियन पीनल कोड या भारतीय दंड संहिता) के अंतर्गत प्रावधान तालिका 19.1 में संक्षिप्त रूप में दिए गए हैं। भारतीय दंड संहिता के अतिरिक्त विशिष्ट मुद्दों पर आपराधिक कानून भी बनाए गए हैं। इनमें समाविष्ट हैं :

1. बाल विवाह निरोध अधिनियम, 1929;
2. अवैध व्यापार (निवारक) अधिनियम, 1956;
3. दहेज प्रतिशेध अधिनियम, 1961;
4. महिलाओं का अभद्र निरुपण अधिनियम, 1987;

5. सती निवारक अधिनियम, 1987; और

6. प्रसवपूर्ण नैदानिक तकनीकें (विनियमन तथा दुरुपयोग का निवारण) अधिनियम; 1996 I

rkfydk 19-1 ¼ Hkkjrh; naM lafgrk esa fuEufyf[kr ls lacaf/kr izko/kkuksa dk lkjka'k

| oxZ | vkbZ- ih- lh- [kaM | d`R; | naM ¼o"kksa esa½ |
|---|---|---|---|
|  | 294 | अभद्र कृत्य एवं गति | 3 महीना या जुर्माना या दोनों |
|  | 304डी | दहेज मृत्यु | 7 वर्षों से कम नहीं |
| गर्भपात | 312 | गर्भपात करवाना | 3–7 वर्ष |
| गर्भपात | 313 | बगैर सम्मति के गर्भपात करवाना | 10 वर्ष या जीवन पर्यन्त |
| गर्भपात | 314 | स्त्री की सम्मति के बगैर गर्भपात करने के समय मृत्यु | 10 वर्ष या जीवन पर्यन्त |
| गर्भपात | 315 | स्त्री की सम्मति के बगैर बच्चे को जीवित जन्म लेने से रोकने का कृत्य या जन्म के बाद मृत्यु का कारण बनना | 10 वर्ष |
|  | 354 | स्त्री की शालीनता भंग करने के प्रयोजन से उस पर प्रहार या आपरराधिक बल प्रयोग | 2 वर्ष या जुर्माना या दोनों |
| अपहरण | 363 | अपहरण करना | 7 वर्ष |
|  | 366 | विवाह हेतु विवश करने के लिए स्त्री का अपहरण, अवैध यौन संबध हेतु फुसलाना | 10 वर्ष |
|  | 366ए | 18 वर्ष की आयु से कम नाबालिक लड़की की दलाली करना | 10 वर्ष |
|  | 366बी | लड़की का आयातन | 10 वर्ष |
|  | 372–373 | वेष्यावृति हेतु नाबालिग लड़की की खरीद फरोख्त | 10 वर्ष व जुर्माना |
| लैंगिक प्रहार | 356 | स्त्री की शालीनता भंग करने के प्रयोजन से आपराधिक बल का उपयोग | 2 वर्ष |
|  | 375 व 376 | बलात्कार एवं बलात्कार के लिए दंड | 7 वर्षों से कम नहीं |
|  | 377 | अप्राकृतिक अपराध –इंद्रिय भोग | 10 वर्ष या जीवन भर |

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

| | | | |
|---|---|---|---|
| | 376, 511 के साथ पठित | बलात्कार का प्रयास | |
| | 506 | स्त्री की शालीनता का अपमान करने के प्रयोजन से बोले शब्द,<br>भाव–भंगिमा या कृत्य | 1 वर्ष या जुर्माना या दोनों |
| विवाह केभीतर अपराध | 493 | कानूननः विवाह के विश्वास के अंतर्गत स्त्री को धोखे से फुसला कर सहवास | 10 वर्ष |
| | 494 | द्वि–विवाह – पति या पत्नि के जीवन काल के दौरान फिर से विवाह करना | 7 वर्ष एवं जुर्माना |
| | 496 | अवैध या गैर कानूनी विवाह उत्सव में | 7 वर्ष |
| | 497 | परस्त्रीगमन | 5 वर्ष या जुर्माना या दोनों |
| | 498 | आपराधिक प्रयोजन के साथ स्त्री को रोकना या प्रलोभित करना | 2 वर्ष |
| स्त्री के प्रति क्रूरता | 304 बी | दहेज मृत्यु | 7 वर्ष या जीवन पर्यन्त |
| | 306 | आत्महत्या के लिए दुष्प्रेरित करना | 10 वर्ष एवं जुर्माना |
| | 498 ए | स्त्री के पति या पति के रिश्तेदार द्वारा स्त्री पर क्रूरता करना | 3 वर्ष एवं जुर्माना |

आपराधिक कानून से संबंधित स्त्री के अधिकारों पर सर्वोच्च न्यायालय ने बहुत से महत्वपूर्ण फैसले किए हैं। विशाल जीत बनाम भारत संघ के मामले में, बाल वेश्चावृति, देवदासी तथा जोगिन व्यापार गृह को निशेध एवं समाप्त करने के लिए तथा पीड़िताओं के पुनर्स्थापन के लिए न्यायलय ने तमाम राज्य सरकारों तथा संघ राज्य क्षेत्र को निर्देश जारी किए गए थे (ए.आई.आर. 1990 एस.सी. 1412)। दिल्ली घरेलु कामगार स्त्रियाँ फोरम बनाम भारत संघ मामले में, जो चलती हुई ट्रेन में सात सेना अफसरों द्वारा चार घरेलु कामगारों पर लैंगिक प्रहार से संबंधित है, सर्वोच्च न्यायालय ने पीड़िता की न्याय के लिए कानूनी प्रक्रिया की गम्यता को बढ़ाने के लिए बहुत से दिशानिर्देश निर्धारित किए थे (1994 (4) स्केल 608)। उपेन्द्र बैक्सी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने संरक्षणात्मक गृहों के अधिकारियों को यह आदेश दिया कि महिला संवासियों के प्रतिष्ठा के आधार के साथ टकराये बगैर उनके स्वास्थ्य की सुरक्षा करें (1983 2 एस.सी.सी. 308)। शीला बर्से बनाम महाराष्ट्र राज्य के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने स्वीकार किया कि संदिग्ध महिला अपराधियों को पुलिस थाने में पृथक कारावास में रखा जाना चाहिए और जहाँ संदिग्ध पुरुष अपराधियों को रखा जाता है वहाँ नहीं रखा जाना चाहिए (1987 एस.सी.सी. (G) 759)। रेखा खोलकर बनाम गोआ राज्य मामले में, बॉम्बे उच्च न्यायालय ने एक स्त्री को मुआवजा प्रदान किया, जिस पर पुरुष एवं महिला पुलिस दोनों द्वारा प्रहार किया गया था एवं यातना दी गई थी और

महिला संदिग्ध अपराधियों की पूछताछ के लिए निर्देश जारी किए (III (1995) सी.सी. आर. 470 (डीबी))।

### ckèk iz'u 2

ukV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।
ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के कुछ पहलुओं के नाम बताइए जिन पर भारतीय दंड संहिता के प्रावधान हैं।

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

2. न्यायालयों के कुछ फैसले बताइए जिन्होंने महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के मुद्दे को संबोधित किया है।

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

3. चिरस्थायी विकास का क्या अर्थ है? अपने शब्दों में स्पष्ट करें।

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

## 19-5 Je dkuuksa dk tfj, l'kDrhdj.k

श्रम कानून कार्य स्थल पर कामगारों के अधिकारों का संरक्षण करने तथा उसे बढ़ावा देने का लक्ष्य करते हैं। महिला के अधिकारों पर श्रम कानूनों के प्रावधानों ने कारखानों एवं अन्य कार्य स्थलों में महिलाओं की सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा योगक्षेम में सुधार लाने, न्यूनतम मजदूरी, समान काम के लिए समान वेतन, मातृ प्रासुविधाएं, बाल देखरेख सुविधाओं, कार्य स्थल पर पर्याप्त आराम सुविधा के प्रावधानों, कार्य स्थल पर भेदभाव तथा लैंगिक छेड़छाड़ की रोकथाम पर फोकस किया है। कार्य स्थल पर महिलाओं की सुरक्षा करने वाले श्रम कानूनों में समाविष्ट है :

1. समान पारितोषिक अधिनियम, 1976 – एक ही कार्य या एक जैसे कार्य के लिए पुरुष तथा महिला कामगारों को एक समान पारितोषिक की व्यवस्था करता है, और भर्ती एवं सेवा स्थितियों में अनुज्ञेय भेदभाव का निषेध करता है सिवाय वहाँ के जहाँ महिलाओं का रोजगार कानून द्वारा निषिद्ध है या प्रतिबंधित है।

2. मातृ प्रासुविधा अधिनियम, 1961 – मातृत्व की गरिमा तथा जेंडर संबंधी न्याय की सुरक्षा के लिए मातृ अवकाश तथा प्रासुविधा की व्यवस्था करता है।

3. कारखाना अधिनियम, 1948 – कार्यस्थल पर महिलाओं की सुरक्षा करने के लिए इस अधिनियम के कई प्रावधान हैं। जिसमें व्यावसायिक सुरक्षा, स्वच्छता एवं क्रेच सुविधा से संबंधित मुद्दों को लेकर भी प्रावधान है।

4. खदान अधिनियम, 1952 – यह महिलाओं को भूमिगत रोजगार देने को निषिद्ध करता है और भू पर नियुक्त महिलाओं को काम के प्रतिबंधित घंटों का प्रावधान करता है।

5. कामगारों के अधिकारों से संबंधित अन्य कानून, जो महिलाओं को भी लाभ पहुँचाते हैं – इनमें न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948, बंधुआ श्रम प्रणाली (उन्मूलन) अधिनियम, 1976, बागान श्रम अधिनियम, 1951, मजदूरी भुगतान अधिनियम 1936, औद्योगिक रोजगार (स्थायी आदेश) अधिनियम 1946, कर्मकार मुआवजा अधिनियम 1923, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948 और संविदा श्रम (निषेध एवं विनियमन) अधिनियम 1970 शामिल हैं।

THE PEOPLE'S UNIVERSITY

कार्यस्थलों पर महिलाओं की सुरक्षा तथा गरिमा से संबंधित महत्वपूर्ण मुद्दा कार्यस्थल पर यौन छेड़छाड़ है। यौन छेड़छाड़ स्त्रियों पर पुरुष शक्ति की अभिव्यक्ति है जो पितृसत्तात्मक संबंधों को बनाए रखती है। यह दिन–प्रतिदिन के जीवन में महिलाओं के विरुद्ध हिंसा, कार्यस्थल पर महिलाओं की दुर्बलता एवं संवेदनशीलता को निशाना बनाने एवं उसका शोषण करने का प्रायः विस्तारण ही होता है। राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा किए गए अध्ययन इंगित करते हैं कि भारत में लगभग 47% कामकाजी महिलाओं ने अपने कार्य के दौरान किसी न किसी प्रकार की यौन छेड़छाड़ का अनुभव किया है। वर्ष 1997 में विशाखा एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कामकाजी महिलाओं की यौन छेड़छाड़ पर महत्वपूर्ण फैसला सुनाया। इस फैसले में, न्यायालय ने बताया कि कामकाजी महिलाओं के साथ यौन छेड़छाड़ जेंडर समानता के अधिकारों के उल्लंघन के बराबर है। जिसके फलस्वरूप ये कोई व्यावसाय या पेशा करने के अधिकार के उल्लंघन के भी बराबर है। न्यायालय ने यौन छेड़छाड़ की परिभाषा निर्धारित की और साथ ही कार्यस्थल पर यौन छेड़छाड़ को रोकने तथा इसका हर्जाना देने के लिए और महिला कामगारों के लिए भेदभाव–मुक्त कार्यकारी वातावरण प्रदान करने के लिए नियोक्ताओं को दिशानिर्देश दिए किए। इस मुद्दे पर पृथक कानून का मसौदा तैयार किया जा रहा है।

यह स्मरण रहे कि श्रम कानूनों जो महिलाओं को सशक्त करने का लक्ष्य करते हैं कई प्रावधानों के बावजूद उनका वांछित प्रभाव नहीं होगा जब तक कि महिला कामगारों के प्रति नियोक्ताओं का रवैया ज्यादा अच्छा न हो जाए। क्योंकि वे महिलाएं गर्भवती हो जाती हैं और गर्भधारण से संबंधित मातृ अवकाश तथा अन्य हितलाभ की हकदार होती हैं, नियोक्तागण महिलाओं को कम्पनी के लिए परिसम्पति समझने के बजाय उन्हें भार के रूप में देखने लगते हैं। उदाहरण के लिए, 14 नवम्बर 2009 को, भारतीय वायु सेना के वायु स्टाफ के वाइस चीफ ने घोषणा की कि महिला पायलटों का प्रशिक्षण ''लागत–अप्रभावी'' है क्योंकि वे गर्भवती हो जाती है जिससे 10–12 महिनों की छुट्टी लेती है, और कि महिलाएं विवाह कर सकती है परंतु सेवा काल के लगभग 13–14 वर्षों तक बच्चे को जन्म नहीं दे सकती हैं – सरकार इस समय के दौरान पायलट पर किए गए निवेश का पैसा वसूल करती है। इस प्रकार की लैंगिकवादी मानसिकता जो महिला कामगारों को परिसम्पति समझने के बजाय वित्तीय भार समझते हैं अपवाद नहीं है परंतु

व्यवस्थित रूप से प्रचलित है, और उन कानूनों जो महिलाओं को सशक्त करते हैं के प्रभाव को निष्प्रभावित कर देती है।

### ckèk i:'u 4

ukV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. कुछ कानूनों के नाम बताइए जिनमें कार्यस्थल पर महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए विशिष्ट प्रावधान हैं।

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

2. कुछ कानूनों के नाम बताइए कुछ सामान्य कानूनों के नाम बताइए जो कार्य स्थल पर महिलाओं का भी हित लाभ करते हैं?

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

3. कार्य स्थल पर लैंगिक छेड़छाड़ के प्रति कानून की क्या प्रतिक्रिया रही?

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

4. कोई एक कारक का नाम बताइए जो कामकाजी महिलाओं के सशक्तीकरण करने वाले कानूनों के प्रभाव को निश्प्रभावित कर सकेगा।

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

..................................................................................................

## 19-6 oSokfgd dkuwu

वैवाहिक कानूनों के अंतर्गत कानूनों का समूह है जो पारिवारिक संबंधों और पति/पत्नि तथा बच्चों के अधिकारों को विवाह के दौरान तथा बाद में नियन्त्रित करते हैं। इसमें कई पहलु आते हैं जैसे विवाह करना, तलाक, भरण–पोषण, अभिरक्षण, उत्तराधिकार, दायाधिकार, अभिभावकता और दत्तक ग्रहण। विशेष विवाह अधिनियम जो सभी धार्मिक

भिन्न वैवाहिक कानून भिन्न धार्मिक समुदायों के सदस्यों को नियन्त्रित करते हैं सिवाय विशेष विवाह अधिनियम के जो सभी धार्मिक समुदायों के लिए सर्व सामान्य कानून है। भारत में आज वैवाहिक अधिनियम, धार्मिक ग्रंथों से लिए कानूनों, उन ग्रंथों के निर्वचन, प्रथाओं, परम्पराओं और ब्रिटिश कानून से निकाले अध्यादेशों तथा सिद्धांतों का विचित्र मिश्रण है। लगभग सभी कानून पितृसत्तात्मक प्रकृति के हैं और महिलाओं के विरुद्ध भेदभावपूर्ण प्रावधान रखते हैं, और परिवार तथा समाज में महिलाओं के लिए निम्न दर्जा विहित करते हैं, और महिलाओं की लैंगिकता को बारीकी से नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं। वैवाहिक कानूनों का क्रियान्वयन शहरों में परिवार न्यायालयों के जरिए होता है जहाँ कि वो निर्मित किए गए हैं, या फिर परिवार न्यायालयों की गैर–मौजूदगी में जिला न्यायालयों के द्वारा किया जाता है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पिछले कई दशकों से, भारत में महिलाओं के आंदोलनों ने, वैवाहिक कानूनों के भेदभावपूर्ण पहलुओं को निरस्त करने के लिए कानूनी सुधार की मांग करने पर फोकस किया है। यद्यपि इस प्रयत्न को काफी हद तक सफलता मिली, कुछ भेदभावपूर्ण प्रावधान अभी भी मौजूद हैं और स्त्रियों को विसशक्त करते हैं। खंड 19.7 में इसकी चर्चा की गई है।

वैवाहिक कानून महिलाओं के अधिकारों की रक्षा जिन मुख्य ढंगों से करते हैं वह तलाक, निर्वाह धन / भरण–पोषण, बच्चों की अभिरक्षा और गम्यता तथा उत्तराधिकार / दायाधिकार के अधिकार के जरिए होता है। उदाहरण के लिए, काषीनाथ साहू बनाम श्रीमती देवी एवं अन्य के मामले में न्यायालय ने कहा कि यह पति की जिम्मेदारी है कि वे सास–ससुर एवं उसके रिश्तेदारों की क्रूरता से अपनी पत्नी की सुरक्षा करे। बलबीर कौर बनाम धीर दास मामले में यह कहा गया था कि पति द्वारा पत्नि को चिकित्सीय उपचार से वंचित रखना क्रूरता के बराबर है, जिसके लिए पत्नि तलाक की चेष्टा कर सकती है। सर्वोच्च न्यायालय के अति महत्वपूर्ण फैसले में, यह कहा गया था कि दहेज की मांग करना क्रूरता के बराबर है, और ये स्त्री को तलाक की हकदार बनाती है। मुस्लिम वैवाहिक कानून के पहलुओं पर, एक अन्य अति महत्वपूर्ण फैसले में, केरल उचच न्यायालय ने कहा कि अपनी पत्नि का भरण–पोषण करने में पति की विफलता उसकी पत्नि को तलाक के लिए हकदार बनाती है। एक मामले में जहाँ पति ने दावे के साथ कहा कि वह अब नपुंसक नहीं रहा और न्यायालय से आदेश पाने की चेष्टा की कि वो उसकी पत्नि को इस उद्देश्य के लिए अपने आप को उसे समर्पित करने को बाध्य करे, न्यायालय ने ऐसा करने से इंकार कर दिया और उस स्त्री की गरिमा की रक्षा की। एक अन्य मामले में जहाँ पुरुष ने स्त्री से विवाह करने के अपने वायदे को तोड़ दिया, न्यायालय ने कहा कि वह हर्जाने का दावा कर सकती है। एक और मामले में जहाँ अ–निवासी भारतीय (NRI) पति ने अपनी भारतीय पत्नि का परित्याग कर दिया था, सर्वोच्च न्यायालय ने ऐसी स्थितियों में स्त्रियों के हितों की सुरक्षा करने के सुझाव दिए थे। एक मामले में न्यायालय द्वारा यह स्पष्ट किया गया था कि हिन्दु विवाह अधिनियम के अंतर्गत, पत्नि के लिए निर्धारित जीवन निर्वाह धन की राशि इतनी होनी चाहिए कि उसकी प्रस्थिति तथा जीवन शैली जिसकी वे आदी थी जब वो अपने पति के साथ रहा करती थी, को देखते हुए वो पर्याप्त आराम के साथ रह सके। एक मामले में जहाँ परिवार न्यायालय ने नाबालिग बच्चे की अभिरक्षा का अधिकार माँ को इस आधार पर देने से इंकार कर दिया कि वह कामकाजी महिला है और उसे कार्य के घंटों के दौरान घर से दूर रहना पड़ता है, अपील करने पर, बम्बई उच्च न्यायालय ने माँ को बच्चे की अभिरक्षा का दायित्व सौंप दिया, यह कहते हुए कि माँ में कोई अयोग्यता नहीं है, जो पिता की अपेक्षा ज्यादा शिक्षित है और स्वतंत्र है। गीता हरिहरण बनाम भारतीय रिजर्व बैंक मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि हिन्दू अल्पसंख्यक एवं अभिरक्षण

अधिनियम, 1956 के अंतर्गत, यदि पिता नाबालिग के क्रियाकलापों का प्रभाव नहीं है, भारसाधक या प्रभारी पिता के जीवन काल के दौरान नाबालिग के नैसर्गिग अभिभावक के रूप में माँ काम कर सकती है।

### बोध प्रश्न 4

नोट : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. वैवाहिक अधिनियम कौन से हैं और वैवाहिक संबंधों के कौन से पहलु उनके अंतर्गत आते हैं?

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

2. वैवाहिक कानूनों तथा अन्य सामान्य कानूनों के बीच तीन अलग–अलग विशेषताएं बताइए।

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

3. वैवाहिक कानून से संबंधित दो फैसले बताइए जो स्त्रियों को सशक्त करते हैं।

.................................................................................................

.................................................................................................

.................................................................................................

## 19.7 कानून एवं नीतियाँ जो महिलाओं के विशक्तीकरण की ओर प्रवृत्त करती हैं

संरक्षणात्मक कानूनों जो महिलाओं के मानवाधिकारों का परिरक्षण एवं सुरक्षा करने का लक्ष्य करते हैं के विपरीत वो कानून जो महिलाओं का विसशक्तीकरण करते हैं, विशेष मुद्दों और संदर्भों को संबोधित करने हेतु भेदभाव तथा राज्य हिंसा के उपयोग का वैधीकरण करते हैं, और समाज तथा सामाजिक संस्थाओं के ''ज्यादा व्यापक हितों'' में महिलाओं के मानवाधिकारों को भंग करते जाते हैं। विसशक्तीकरणीय के प्रभाव के साथ दो प्रकार के कानून मौजूद हैं – एक वो जिनके प्रावधान अन्यायपूर्ण/अनुचित/असमान हैं, और दूसरा वो जो भ्रष्ट/पूर्वाग्रह युक्त/अदक्ष प्रशासनिक तंत्र के कारण अन्यायपूर्ण/अनुचित या असमान क्रियान्वयन की गुंजाइश रखते हैं। कुछ ऐसे कानून अनिवार्य तौर पर महिलाओं पर लक्ष्य नहीं करते हैं, फिर भी, ऐसे कानूनों का परिणाम महिलाओं पर उनके जेंडर के कारण भिन्न होता है।

### 19.7.1 वैवाहिक कानून

पिछले कुछ दशकों में, कानून में सुधार के कई प्रयास किए गए, विशेष रूप से भारत में महिला आंदोलन की प्रेरणा के जरिए। इन प्रयासों के बावजूद, वैवाहिक कानूनों के

कुछ विभेदक पहलु संविधि पुस्तकों में अभी भी मौजूद हैं। एक ऐसा पहलु दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यवस्थापन (वापसी) का बदलाव है, जो सभी धार्मिक समुदायों की स्त्रियों के लिए कष्टप्रद है। विवाहित व्यक्तियों से एक दूसरे के साथ पति तथा पत्नि की तरह रहना और एक दूसरे के साथ पति–पत्नि का संबध स्थापित करने की प्रत्याशा की जाती है। यदि एक (पति या पत्नि) बगैर किसी उपयुक्त कारण के दूसरे के समुदाय से निकल जाता है, तो खिन्न पति/पत्नि न्यायालय में दूसरे के विरुद्ध दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यवस्थापन के आदेश के लिए याचिका दायर कर सकता है और आदेश प्राप्त कर सकता है। इस उपचार के फलितार्थ यह होते हैं कि खिन्न (पति या पत्नि) साथी अनिच्छुक साथी को न्यायालय की बाध्यकारी शक्ति के जरिए वैवाहिक जोड़े की तरह से रहने के लिए बाध्य कर सकता है। यद्यपि सैद्धांतिक रूप से, यह उपचार/तरीका पत्नि तथा पति दोनों को उपलबध है पत्नि के विरुद्ध इस उपचार का परिणाम भिन्न एवं भेदमूलक होते हैं। न्यायालय जिस पत्नि के विरुद्ध आर.सी.आर. का आदेश जारी करता है न्यायालय की बाध्यकारी शक्ति के जरिए उस पर सके पति के द्वारा यौन प्रहार किया जा सकता है।

इस प्रावधान की वैधता को गोपनीयता एवं प्रतिष्ठा जो भारतीय संविधान में जीने के अधिकार की गारंटी के भाग ही है के अधिकार के उल्लंघन के रूप में न्यायालयों में कई बार चुनौती दी गई। इस प्रावधान को टी.सरीता बनाम टी. वैंकटासुबिहा के मामले में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा असंवैधानिक मान कर खारिज कर दिया गया था। न्यायालय का विचार था कि आर.सी.आर. ''व्यक्ति की गोपनीयता के अधिकार का बड़ा भारी उल्लंघन है। यह स्त्री को अपने इस चुनाव से वंचित करता है कि क्या, कब और कैसे उसकी देह दूसरे मानव को जन्म देने का यन्त्र बने...। इस प्रकार की राजकीय जबरदस्ती वैवाहिक जीवन में पति और पत्नि के ऐच्छिक मिलन को न तो अवधि लम्बी कर सकती है और न ही उसे कायम रखा सकती है....''। हरविंदर कौर बनाम हरमंदर सिंह मामले में, दिल्ली उच्च न्यायालय ने ए.पी. उच्च न्यायालय के फैसले के साथ असहमति प्रकट की थी। सरोज रानी बनाम सुदर्शन कुमार चड्ढ़ा मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने ए.पी. फैसले को रद्द करते हुए कहा कि आर.सी.आर. का प्रयोजन, जिन पक्षों के बीच मन मुटाव हुआ है उन्हें साथ–साथ रहने के लिए प्रेरित करना है ताकि वे दम्पत्य जीवन में मैत्री भाव से इकट्ठे रह सकें और इस उपचार का लक्ष्य ''सहवास तथा सहजीवन है और मात्र यौन संबंध नहीं है''। इस तर्कणा के साथ, यह उपचार भारतीय वैवाहिक कानून के अंतर्गत अभी भी मौजूद है। न्यायालयों ने जिन संदर्भो में स्त्रियों के विरुद्ध आर.सी.आर. का आदेश जारी किया है उनमें यह भी शामिल है जहाँ स्त्रियों ने अपनी नौकरी छोड़ने से इंकार कर दिया था जो कि उन्होंने अपने घर से दूर ली हुई थी, और अधिकांशत्या परिवार की वित्तीय स्थिति के कारण और पति की मर्जी से ली हुई थी।

वैवाहिक कानूनों का अन्य पहलु जो महिलाओं को विसशक्त करता है वह हिन्दुओं के लिए गोद लेने तथा अभिभावकता संबंधी कानून हैं। विवाहित दम्पतियों के मामले में, हिन्दू दत्तक ग्रहण एवं भरण–पोषण अधिनियम के अंतर्गत, केवल हिन्दु पुरुष ही बच्चा गोद लेने की योग्यता रखता है; विवाहित स्त्री, जब तक कि विवाह समाप्त नहीं हो जाता है, बच्चा गोद नहीं ले सकती है, पति की सहमति से भी, केवल वही स्त्रियाँ जो अविवाहित, तलाकषुदा या विधवा है, बच्चा गोद लेने का अधिकार रखती हैं। इसी प्रकार से, यदि पति जीवित है, उसे गोद लेने या दत्तहग्रह के लिए बच्चे को देने का एकमात्र अधिकार होता है, परंतु अपनी पत्नि की सहमति से। पत्नि अपनी मर्जी से, गोद लेने के लिए बच्चे को नहीं दे सकती है, अपने पति की सहमति से भी नहीं। इसी प्रकार हिन्दु अल्पसंख्यक तथा अभिभावकता अधिनियम बच्चे का प्राकृतिक अभिभावक केवल पुरुष

को ही समझता है। हितैशी निर्वचन के जरिए, सर्वोच्च न्यायालय मानता है कि यदि पिता नाबालिग के क्रियाकलापों का भार साधक नहीं था तो पिता के जीवनकाल के दौरान माँ नाबालिग की नैसर्गिक अभिभावक की भूमिका निभा सकती है। यद्यपि यह अभिनंदनीय निर्णय है, परंतु यह हिन्दु वैवाहिक अधिनियम के अंतर्गत अभिभावकता पर स्त्रियों के बराबर अधिकार के समान नहीं है।

मुस्लिम वैवाहिक कानून में भी विभेदीय पहलु विद्यमान हैं, विशेष रूप से तलाक, बहुविवाह, दायाधिकार/उत्तराधिकार के मुद्दों पर। सामान्य तौर पर न्यायालय और विशेष रूप से सर्वोच्च न्यायालय ने कई फैसले दिए हैं जो कानूनी प्रावधानों की व्याख्या स्त्रियों के पक्ष में करते हैं। उदाहरण के लिए, न्यायालय के फैसलों ने एक पक्षीय तथा वाचिक तलाक पर पति के अधिकार पर शर्तें लगाई हैं, और कहा है कि एक पक्षीय तिकड़े तलाक से पहले समझौते की कोशिशें होनी चाहिए और तलाक उपयुक्त कारण के लिए होना चाहिए, और इस प्रकार से अपनी पत्नि को अपनी मर्जी से तलाक देने के पुरुष के अधिकार को प्रतिबंधित किया है। फिर भी, ऐसे फैसलों के बारे में सूचना समुदायों तक पहुँच नहीं पाती है, जिसके फलस्वरूप, अत्याचारी प्रथाएं मौजूद बनी रहती हैं; स्त्रियाँ न्यायालयों के जरिये सकारात्मक उपायों की संभाविता के बारे में अपनी अज्ञानता के कारण वैवाहिक कानून की अन्यायपूर्ण प्रथाओं को स्वीकार कर लेती हैं। पुरुष का चार पत्नियों से विवाह करने का अधिकार, और दायाधिकार एवं उत्तराधिकार जो पुरुष उत्तराधिकारियों की तुलना में स्त्री उत्तराधिकारियों के लिए कम हिस्सा विहित करते हैं इस कानून के कुछ अन्य पहलु हैं जो स्त्रियों को विसशक्त करते हैं। मुस्लिम स्त्रियों के आंदोलन जैसे कि भारतीय मुस्लिम महिला आंदोलन और मुस्लिम महिला अधिकार नेटवर्क, ने महिलाओं तथा अन्य संबंधित नागरिकों की मांगों को एक जगह लाने की पहल की और मुस्लिम वैवाहिक कानून में जेंडर–न्यायपूर्ण सुधारों की मांग की।

### 19-7-2 l'kL= cy ¼fo'ks"k 'kfDr½ vfèkfu;e ¼,-,Q-,l-ih-,-½

एफस्पा (ए.एफ.एस.पी.ए.) सुरक्षा कानून है, जो, यद्यपि महिलाओं को लक्ष्य करने का प्रयोजन नहीं रखता है, परंतु महिलाओं को विसशक्त करने का विशम प्रभाव डालता है। कानून के रूप में एफस्पा वर्ष 1958 से लागू है। सर्वप्रथम यह नागालैंड में, 1950 के दशक के अंत में नागा स्वतंत्रता आंदोलन के प्रत्युत्तर में उपयोग किया गया था। तदन्तर यह मिज़ोरम तथा मणिपुर में, और थोड़े समय के लिए आसाम में लागू किया गया था। वर्ष 1972 में, यह तमाम सात उत्तर–पूर्वी राज्यों में विस्तरित किया गया था। एफस्पा, केन्द्रीय सरकार और राज्य के राज्यपाल को किसी विशेष क्षेत्र को 'अशान्त क्षेत्र' घोषित का अधिकार देता है, यदि उसकी में सिविल पावर/नागरिक क्षमता की सहायता करने के लिए सशस्त्र बल के उपयोग की आवश्यकता है। इस घोषणा पर, कानून, भारतीय सशस्त्र सेना को, अतिरंजित तथा स्वेच्छाचारी अधिकारों की स्वीकृति देता है, जिसमें सुनिश्चित अपराधों को करने या ऐसा करने का संदेह होने पर नागरिकों को मारने के लिए गोली चलाने का अधिकार, उपद्रवकारियों किसी सम्पत्ति के उपयोग का संदेह होने पर उसे नष्ट करने का लाइसेंस, किसी भी व्यक्ति को बिना वारेंट के गिरफ्तार करने का अधिकार, और जांच वारेंट के बगैर अस्त्र, गोला–बारुद, विस्फोटक इत्यादि बरामद करने के लिए रात्रि या दिन के किसी भी समय पर किसी भी परिसर में प्रवेश एवं तलाशी लेने का अधिकार समाविष्ट हैं।

सरकार एफस्पा को उत्तर–पूर्वी राज्यों की विलग्नता को रोकने का आवश्यक उपाय समझती है। सेना विद्रोह से लड़ने के लिए कानून को अनिवार्य समझती है। सर्वोच्च न्यायालय ने वर्ष 1997 में एफस्पा की वैधता को मान लिया, परंतु कानून द्वारा सशस्त्र

सेना को प्रदन की गई शक्तियों के उपयोग पर नियंत्रण लगा दिए, और एफस्पा के प्रावधानों की कड़े एवं संकीर्ण तरीके से व्याख्या की ताकि दुरुपयोग की गुंजाइश को कम किया जा सके। फिर भी, कानून के अभिकथित दुरुपयोग की बहुत सी खबरें मौजूद है, जो न्यायेतर मारकाट, इवालात में यातना, बलात्कार एवं मृत्यु, मजबूरी में गायब होना तथा मानवाधिकारों के अन्य उल्लंघन जो विद्रोह के समय के दौरान नागरिक कर सकते हैं का संकेत करते हैं। प्रतिबंधित पीपल्स लिबरेशन आर्मी की संदिग्ध सक्रिय कार्यकर्त्ता 33 वर्षीय थांग्जम मनोरमा की वर्ष 2004 में आसाम राइफल्स के सदस्यों के द्वारा – गिरफ्तारी, हिरासती यातना, बलात्कार तथा हत्या प्रासंगिक मामला है।

### 19-7-3 egkjk"V™ e| 'kkyk urfd;ksa ds fo#) ifrca/k vkns'k

जुलाई 2005 में, राज्य सरकार ने पूरे महाराष्ट्र में मद्यशालाओं में नृत्य प्रदर्शन पर प्रतिबंध लगाने का आदेश जारी किया। नृत्य मद्यशालाओं में नृत्य का निषेध करने के लिए राज्य ने तर्क दिया कि यह ऐसा नृत्य है जो उपस्थित ग्राहकों के बीच शारीरिक कामुकता जागृत करता है। यह प्रस्ताव बॉम्बे पुलिस अधिनियम, 1951 में संशोधन करके किया गया था। यह अधिनियम महाराष्ट्र राज्य विधान–मंडल की दोनों सभाओं द्वारा पारित किया गया था। प्रतिबंध 15 अगस्त, 2005 से लागू हुआ। यह विचित्र बात है कि मद्यशालाओं में नृत्य प्रदर्शन का निशेध करने वाले कानून ने तीन या ज्यादा तारों सहित होटलों, तथा जिमखानों और क्लबों को 'संस्कृति को प्रोननत' करने तथा 'पर्यटन को बढ़ाने' के लिए ऐसे प्रदर्शनों के आयोजन की अनुमति दी थी। इस प्रतिबंध के परिणामस्वरूप अनुमानित 75,000 लड़कियों–मुख्यतः निम्न आर्थिक वर्ग से – को अपने जीवन निर्वाह का साधन खोने की ओर प्रवृत किया। मद्यशाला की लड़कियों पर यह प्रतिबंध सर्वनाषी रहा, क्योंकि बहुत सी लड़कियाँ आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो गई और बहुत सी लड़कियाँ अपनी उत्तरजीविता तथा जीवन निर्वाह के लिए वेष्यावृति करने के लिए विवश हो गई। जब मद्यशाला के मालिकों के संघों, मद्यशाला नर्तकियों के संघों और अलाभकारी संगठनों ने इस प्रतिबंध को चुनौति दी, तो बॉम्बे उच्च–न्यायालय ने इस प्रतिबंध को गैर कानूनी कह कर रद्द कर दिया। राज्य सरकार ने इस फैसले के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की, नागरिक समाज के सदस्यों ने फिर से कहा कि मद्यशाला नर्तकियों के विरुद्ध प्रतिबंध अभिव्यक्ति की उनकी स्वतंत्रता, पेशे की स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा के साथ जीवन के अधिकार का उल्लंघन करता है।

### 19-7-4 efgykvksa ds fy, jkf= ikjh dk fu"ks/k

रात्रि की पारी में काम करने वाली महिलाएं भारतीय कानून और नीति निर्माताओं, तथा न्यायपालिका के बीच विवाद का विषय रही हैं, और ये लड़ाई रात्रि की पारी में काम करने के लिए महिलाओं की मांग बनाम इस पर प्रतिबंध के बीच तथा काम करने के अधिकार बनाम काम पर प्रतिबंधों के बीच है। महिलाएं जबकि अपने पुरुष प्रतिपक्षियों के साथ रात्रि की पारियों में काम करती हैं, महिलाएं यौन आघात के प्रति संवेदनशील होती है जब कि पुरुषों के साथ ऐसा नहीं है। नियोक्ताओं के लिए सावधानी बर्तना तथा महिलाओं को सुरक्षित कार्यशील वातावरण प्रदान करना अनिवार्य है, जो कॉल सेंटरस/बी.पी.ओ. के मामले में उनके घर से ले जाने और वापस छोड़ना समाविष्ट है। तथापि, कई निजी कम्पनियाँ, जबकि महिला कामगारों से जितना अधिक काम ले सकती हैं लेती हैं, अपने महिला कामगारों को सुरक्षा प्रदान करने में अतिरिक्त धन व्यय करने की इच्छाशक्ति नहीं रखती हैं। इसका फलस्वरूप, रात्रि की पारी में काम करने वाली युवा स्त्रियों जो रात्रि को देर से या सुबह जल्दी घर लौटती हैं की हत्या एवं उन पर यौन प्रहार की घटनाओं में वृद्धि हुई है।

l'kDrhdj.k rFkk
fol'kfDrdj.k ds midj.k
ds :Ik esa dkuwu

समय–समय पर, राज्य सरकारों ने महिलाओं को रात्रि की पारी में काम करने से प्रतिबंधित करके इस स्थिति को संबोधित करने की कोशिश की है। उदाहरण के लिए, मई 2007 में, कर्नाटक सरकार ने होटल उद्योग, कारोबार केन्द्र स्पा अन्य कार्य स्थलों में महिलाओं को रात्रि की पारी में नियोजित करने के लिए नियोक्ताओं को दंडित करने के लिए कानून बनाया। इस प्रकार के प्रयास का लक्ष्य सरकार तथा नियोक्ताओं को, महिला कामगारों को सुरक्षा प्रदान करने के मूलभूत कर्तव्य से भार मुक्त करना है और इसका परिणाम महिलाओं की व्यावसायिक वृद्धि के अवसरों पर प्रतिकूल प्रभाव का हुआ और महिलाओं को बेरोजगार करने का भी। वर्ष 2020 में, मद्रास उच्च–न्यायालय ने कारखाना अधिनियम के प्रावधानों की घोषणा की जो महिलाओं का रात्रि की पारियों में काम करना, असंवैधानिक मानते हुए निषेध करते हैं, क्योंकि इसका परिणाम उन्हें जीविकोपार्जन से वंचित करने का हुआ। इसके अतिरिक्त इस फैसले ने रात्रि की पारियों में महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने के लिए नियोक्ताओं के द्वारा किए जाने उपाय भी विहित किए। यह फैसला कार्य स्थलों में रात्रि की पारियों में सुरक्षा के महिलाओं के अधिकार का दावा करने के लिए जबकि अत्यन्त महत्वपूर्ण था, यह देखना शेष है कि फैसले की भावनानुसार क्रियान्वयन किया जा रहा है या नहीं, और नियोक्ताओं पर थोपी गई अतिरिक्त जिम्मेदारियाँ उन्हें महिलाओं को भर्ती करने से रोकती है या नहीं, विशेष रूप से उन कामों में जहॉं रात्रि की पारी अपेक्षित है।

## 19-7-5 tula[;k lacaèkh uhfr;k¡

वर्ष 1977 में बलात् बंध्यीकरण कार्यक्रम जिसने पुरुषों को लक्ष्य किया था ने तीव्र उत्तेजना उत्पन्न कर दी थी। वर्ष 1994 से कई राज्यों ने दो बच्चे का मानक तथा लक्ष्य–विशिष्ट दृष्टिकोण को अपना करके उसी प्रकार के बाध्यकारी जनसंख्या कार्यक्रम प्रारम्भ किए हैं। दो से ज्यादा बच्चों को जन्म देने से लोगों को हतोत्साहित करने के लिए कुछ प्ररक उपायों को अपनाया गया। इनमें समाविष्ट हैं :

1) विवाह की वैध आयु से पूर्व विवाह करने वाले व्यक्ति को सरकारी नौकरी के लिए अयोग्य ठहराना (यू.पी. तथा एम.पी. राज्य की नीतियाँ)

2) अंतःक्षेपीय तथा अंतःरोपी जैसे गर्भनिरोधी उपायों के इस्तेमाल की सिफारिश की गई और दोनों ही स्त्रियों के स्वास्थ्य के लिए असुरक्षित तथा खतरनाक हैं (यू.पी. राज्य की नीति)

3) दो से ज्यादा बच्चों के साथ व्यक्तियों का पंचायत चुनाव में तथा अन्य निर्वाचित निकायों जैसे सहकारी संस्थाओं के लिए लड़ना निषेध करना (मध्य प्रदेश तथा राजस्थान राज्य की नीतियाँ)

4) ग्रामीण विकास योजनाएं, महिलाओं के लिए आय सर्जनकारी योजनाएं, और निस्संदेह सम्पूर्ण गरीबी निवारण कार्यक्रम इत्यादि को इकठे परिवार नियोजन में निष्पादन के साथ जोड़ना (मध्य प्रदेश राज्य की नीति)

5) ''दो बच्चा मानक'' को राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए सेवा शर्त बनाना (राजस्थान नीति)

6) समाज के कमजोर तबके के लोगों के लिए दो बच्चा मानक को विभिन्न प्रोत्साहनों के लिए मानदंड बनाना, जैसे कि सरकारी स्कूलों में शिक्षा, सार्वजनिक वितरण प्रणाली की गम्यता, कमजोर तबके हेतु आवास योजना, निम्न लागत स्वच्छता स्कीम, आर्थिक सहायता (सब्सिडी), पदोननतियाँ तथा सरकारी नौकरियाँ (महाराष्ट्र और आंध प्रदेश नीतियाँ)

विशेषज्ञों ने जोर देकर कहा है कि अवप्रेरकों से युक्त बाध्यकारी जनसंख्या नीतियाँ गरीब विरोधी, दलित विरोधी, आदिवासी–विरोधी, तथा महिला–विरोधी हैं। पितृसत्तात्मक भारतीय समाज में, अधिकांश महिलाएं यह निर्णय लेने की स्थिति में नहीं हैं कि वो कितने बच्चों को जन्म देना चाहती हैं, उन्हें कब जन्म देना है और उनका इस पर कोई नियंत्रण नहीं होता है कि कितने बच्चे जीवित रहेंगे। ऐसी महिलाओं को पंचायत के चुनाव, सरकारी नौकरियों, ग्रामीण विकास, आय सर्जनकारी तथा गरीबी निवारण योजनाओ के लिए लड़ने से रोकने से, नीतियाँ महिलाओं को अवश्य ही ज्यादा विसशक्त करेंगी। कुछ मामलों में महिलाओं का अपने पतिओं द्वारा परित्याग कर दिया जाता है और तीसरे बच्चे को छिपाने के लिए उन्हें स्थाई रूप से उनकी माँ के घर भेज दिया जाता है। इसके अतिरिक्त, समाज जहाँ पुत्र वरीयता प्रचलन में है में ''दो बच्चा मानदंड'' का बाध्यकारी आरोपण, ज्यादा से ज्यादा महिलाओं को अप्रत्यक्ष रूप से लिंग निर्धारण, लिंग–चयनीय गर्भपात और कन्या भ्रूण हत्या करने के लए प्रोत्साहित करेगा, और इससे विषम लिंग अनुपात और भी बद्दर होगा। महिला समूहों ने इस पर बल दिया। कि जनसंख्या नियंत्रण की नीतियाँ मौटे तौर पर महिलाओं पर ही लक्ष्य करती हैं। उदाहरण के लिए, 97% बन्ध्यीकरण स्त्रियों पर किए गए। ऐसे कई बध्यीकरण संबंधित स्त्रियों को सूचित किए बगैर और उनकी सहमति के बिना किए गए हैं। राज्य के दबाव में आकर चिकित्सीय पेशेवरों द्वारा अस्वच्छ और अस्वास्थ्य कर स्थितियों में बन्ध्यीकरण करने से समूचे भारत में महिलाओं को अपनी जान गंवानी पड़ी। गंभीर गलतियाँ तथा संक्रमण बहुतों की जान ले लेते हैं और उन्हें जीवन भर के लिए अपंग बना देते हैं। खतरनाक गर्भ निरोधक जैसे नेट एन और डेपो प्रोवेश को प्रारम्भ में बढ़ावा दिया गया था और जनसंख्या को जल्दी से घटाने के उद्देश्य से महिलाओं पर उपयोग किया गया बावजूद इसके कि संबंधित महिलाओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

### 19.7.6 समलिंगी आचरण का अपराधीकरण

भारतीय दंड संहिता की धारा 377 के अनुसार एक ही लिंग के प्रौढ़ो के बीच आपसी सहमति से लैंगिक क्रियाओं को तथा विपरीत लिंग के प्रौढ़ों के बीच आपसी सहमति से कुछ अन्य लैंगिक कृत्यों को इस आधार पर कि यह प्रकृति के क्रम के विरुद्ध हैं अपराध माना गया है। धारा 377 ब्रिटिश उपनिवेषिक कानून है जो समस्त गैर प्रजननिक लैंगिक (मैथुनिक) व्यवहार (चाहे समलैंगिक या विशम लैंगिक, गुदा मैथुन समेत) का अपराधीकरण करने के लिए 1860 के दशक के प्रारम्भ में पारित हुआ था, और जो अभी भी हमारी संविधिक पुस्तकों में मौजूद है। समलैंगिक संबंध रखने के लिए सजा आजीवन कारावास तक जा सकती है। जहाँ तक भारत में कानून के प्रवर्तन की बात है, देश में पिछले 20 वर्षों के दौरान कोई भी दोष सिद्ध नहीं पाया गया। यद्यपि कानून ऊपर से तटस्थ प्रतीत होता है, इसने एक वर्ग को दूसरों से ज्यादा कलंकित एवं उसका अपराधीकरण किया है, उदाहरण के लिए, एक ही लिंग से सम्बन्ध की इच्छा करने वाले लोग, वो भी जो समलिंग कामुक स्त्री (लेज़बिएन), समलैंगिक (गे), द्वि लैंगिक (बाइ–सेक्सुअल) तथा ट्रांसजेंडर (LGBT), हिजड़ा, कोठी और अन्य अजीब लोग माने जाते हैं। बहुत से अध्ययन तथा तथ्य खोजी रिपोर्ट व्यापक प्रकार के उल्लंघनों को प्रलेखित करते हैं जैसे कि पुलिस हिरासत में यौन प्रहार एवं दुर्व्यवहार, बलात् छीनना या ग्रहण करना, इलैक्ट्रोषॉक और मानसिक स्वास्थ्य संस्थानों में औशध–आधारित सुधारात्मक उपचार और दिन–प्रतिदिन के आधार पर व्यापक रूप के सामाजिक कलंक तथा विभेदीकरण।

दिल्ली उच्च न्यायालय ने जुलाई 2, 2009 को ऐतिहासिक फैसले की घोषणा की और प्रौढ़ों के बीच सहमति से समलैंगिक यौन क्रिया का विअपराधीकरण किया। सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विचाराधीन याचिका है और सर्वोच्च न्यायालय के सकारात्मक फैसले का देशभर में कानून पर प्रभाव पड़ेगा।

## 19.7.7 भूमि तथा संपत्ति अधिकारों पर कानून तथा नीतियां

भूमि तथा संपत्ति से संबंधित कानून महिलाओं के विरुद्ध अत्याधिक भारी पड़ते हैं और उन्हें विसशक्त करते हैं। बीना अग्रवाल ने गौर किया कि जब सरकार भूमि वितरित करती है, वो पुरुष के नाम पर वितरित करती हैं, और महिलाएं को घर में अत्याधिक दुर्बल या संवेदनशील बनकर रह जाती है क्योंकि उनके अपने खुद के खेत या भूमि नहीं होती है। दिल्ली उच्च न्यायालय ने हाल ही के फैसले में दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम को विभेदीय पाया क्योंकि उसके प्रावधान विहित करते हैं कि सम्पत्ति सर्वप्रथम पुरुष वंशज को जाएगी और स्त्री को संपत्ति सिर्फ तभी दी जाएगी जब कोई पुरुष वंशज नहीं हैं। फिर भी, ये कहता है कि वो कानून को रद्द करने में सक्षम नहीं है क्योंकि यह कानून संविधान की नौवी अनुसूची के जरिये न्यायिक छानबीन के परे रखा गया है।

विकास के नाम पर सरकार द्वारा चलाई गई परियोजनाओं ने आदिवासियों समेत स्थानीय लोगों के भूमि अधिकारों को अग्रवर्ती बनाया और उन्हें कुचल डाला है। भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की सहायता से राज्य, स्पेशल इकोनोमिक ज़ोन्स (SEZs /विशेष आर्थिक अंचल), खनिज–आधारित उद्योगों, औद्योगिक बुनियादी ढांचे (रेल, सड़क, ऊर्जा, जल इत्यादि) एवं अन्य प्रकार के औद्योगिककीकरण के लिए बाजार मूल्य से अभिकथित रूप से निम्न दरों पर कृषिक भूमि अधिग्रहण करने की कोशिश करता है। इसलिए किसानों को भूमि अधिग्रहण अपनी भूमि तथा जीवन निर्वाह के स्रोत खोने की ओर प्रवृत करता है और वातावरण पर विनाशक प्रभाव डालने के अलावा भारी बेरोजगारी पैदा करता है। कानून के अंतर्गत प्रदान किए जाने वाला मुआवजा सम्पति तथा जीवन निर्वाह की हानि के लिए प्रायः मुश्किल से ही स्थानापन होता है। भू–स्वामी तथा उनके परिवार जो राज्य की कार्रवाई द्वारा विस्थापित हो गए हैं उनका पर्याप्त पुनःस्थापन तथा उचित पुनर्वास अति महत्वपूर्ण मुद्दा है। सिंगूर, नंदीग्राम, काशीपुर, कलिंगनगर और रायगढ़ स्थानीय लोगों के बीच और स्थानीय लोगों तथा राजकीय एजेंसियों जो बड़े–बड़े कोरपोरेट गृहों की तरफ से कार्य करते हैं के बीच हिंसात्मक टकरावों के स्थलों के उदाहरण हैं। इसमें से कई हिंसात्मक टकरावों ने स्त्रियों को यौन एवं जेंडर आधारित हिंसा का शिकार बनाया। फिर भी, भारत में देशी भूमि अधिकारों के लिए संघर्ष में, महिलाएं भी विशेष रूप से सक्रिय रही हैं और नर्मदा बचाओ आंदोलन में नेतृत्व की भूमिका अदा की है। ये आंदोलन अपने आंदोलन के समर्थन में सर्वोच्च न्यायालय में जनहित याचिका का उपयोग करने में विशेष रूप से सक्रिय रहा।

## 19.8 विसशक्तीकरणीय कानूनों तथा नीतियों के विरुद्ध सामाजिक एवं कानूनी प्रक्रियाएं

महिलाओं के विसशक्तिकरण की ओर प्रवृत करने वाले कानूनों के संबंध में न्यायपालिका की भूमिका, ऐसे कानूनों/कानूनी प्रावधानों/नीतियों को अवैध घोषित करने की प्रवृति के लगभग अनुरूप रही है। उदाहरण के लिए बॉम्बे उच्च न्यायालय ने महाराष्ट्र में मद्यशाला नर्तकियों के विरुद्ध प्रतिबंध को असंवैधानिक माना क्योंकि यह मद्यशाला नर्तकियों को जीवन निर्वाह के अधिकार से वंचित करता है। इसी के कारखाना अधिनियम के उन प्रावधानों जो रात्री की पारी में महिलों के काम करने को निषिद्ध करते हैं असंवैधानिक घोषित किया क्योंकि इसके फलस्वरूप महिलाएं आजीविका से वंचित होती है। फैसले ने महिला कामगारों को रात्रि की पारियों के दौरान, सुरक्षा प्रदान करने के लिए नियोक्ताओं द्वारा जाने वाले उपाय निर्धारित किए। दिल्ली उच्च न्यायालय ने एतिहासिक फैसले सुनाया और घोषणा की कि धारा (एस.) 377 स्वैच्छिक तथा अविवेक पूर्ण दोनों थी और जीवन तथा समानता के मूलभूत अधिकार का उल्लंघन थी। जनसंख्या नीतियों के मुद्दे पर यद्यपि, न्यायालय बाध्यकारी नीतियों जो दो बच्चा

मानक का पालन न करने के लिए अवप्रेरकों को समाविष्ट करती हैं की वैधता को स्वीकार करने लगे हैं।

महिलाओं का विसशक्तिकरण करने वाले कानून तथा नीतियों को रद्द करने के लिए सामाजिक प्रक्रियाएं नागरिक समाज में संबंधित सदस्यों द्वारा अभियानों को विविध रणनीतियों के जरिये समाविष्ट करती हैं। अभियान रणनीतियों में सम्मिलित हैं – सार्वजनिक सभाएं, प्रदर्शन, धरना, रैली, भूख हड़तालें/अनिश्चितकालीन उपवास, प्रेस कांफ्रेंस, पत्र अभियान, विवरण पुस्तिकाएं (ब्रोशर्स) एवं पर्चियों का वितरण, मांगों का ज्ञापन पत्र सरकार को पेश करना और नीति निर्माताओं के साथ संलाप करना। अभियान मुद्दे के बारे में संदेश फैलाने में कभी–कभी, नुक्कड़ नाटक, लोक गीत और नृत्य और प्रचलित संस्कृति के अन्य साधनों का भी उपयोग किया जाता है। जब कभी जरूरत पड़ी, नागरिक समाज ने वैकल्पिक कानूनों का मसौदा तैयार किया और सरकार को पेश किया। दीर्घकालीन समयावधि के लिए विविध रणनीतियों का उपयोग इस मुद्दे पर नागरिक समाज के समर्थन को विस्तरित करने में सहायता करता है। ये प्रायः सरकार को सार्वजनिक संवेदनाओं, संबंधित व्यक्तियों के साथ वार्ता और तदानुरूप कानून/नीति की समीक्षा पर गौर करने के लिए राजी करता है।

सशस्त्र बल (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम को रद्द करने का अभियान दमनकारी कानून को रद्द करने के दीर्घीकृत अभियान का उदाहरण है। अभियान के लिए अनिश्चितकालीन उपवास, सार्वजनिक प्रदर्शन तथा मुख्य नीति निर्माताओं के साथ पैरवी, इत्यादि बहुत सी रणनीतियों का उपयोग किया गया। भारतीय दंड संहिता की धारा (एस) 377 के विरुद्ध अभियान सार्वजनिक कार्रवाई को कानूनी रणनीतियों के साथ जोड़ता है। साम्प्रदायिक हिंसा विधेयक के विरुद्ध अभियान अपने प्रयासों को, मीडिया अभियान तथा सार्वजनिक सभाओं जैसी रणनीतियों के जरिये सरकार को दमनकारी कानून पारित करने से रोकने पर फोकस करता है। ऐसे अभियानों में प्रतिभागिता समाज के समस्त जनभावना से पूर्ण एवं संबंधित सदस्यों के लिए खुली है। ऐसे अभियानों में मीडिया विभिन्न लोगों के बीच जानकारी फैलाने तथा लोक मत जुटाने के जरिए मुख्य भूमिका निभाता है।

## 19-9 lkjka'k

कानून दुधारी तलवार के समान है। एक ओर, यह महिलाओं और अन्य हाषियाकृत/दमित समुदायों के सशक्तिकरण का उपकरण है। यह प्रत्येक व्यक्ति/अभियान/आंदोलन पर निर्भर करता है कि वह अपने अधिकारों पर दावा करने के लिए सशक्तिकरणीय कानूनों का उपयोग करें। कानून के जरिए अधिकारों पर दावा करने की ओर पहला कदम इन कानूनों के बारे में जानकारी है।

दूसरी ओर, ऐसे कानून और नीतियाँ भी मौजूद हैं जिनका महिलाओं तथा अन्य हाषियाकृत समुदायों को विसशक्त करने का प्रभाव होता है। पितृसत्तात्मक मानसिकता, पक्षपाती अभिवृतियों, कुछ समूहों तथा कुछ प्रथाओं के विरुद्ध लोगों के पूर्वाग्रह, स्वार्थी हित और सार्वजनिक नैतिकता के बारे में गलत धारणाओं के आधार पर बहुत से ऐसे कानून और नीतियाँ बनाई गई हैं। ऐसे कानूनों और नीतियों के प्रभाव को संबोधित करने तथा उसे निष्प्रभावी करने के लिए सामाजिक एवं कानूनी प्रक्रियाएं मौजूद हैं जो वास्तव में, महिलाओं को उनके मौलिक अधिकारों से ही वंचित करती हैं।

## 19-10 'kCnkoyh

**ySafxd 'kks"k.k (Sexual exploitation)** % ऐसे अस्वीकार्य यौन भाव से निर्धारित व्यवहार (चाहे प्रत्यक्ष या निहितार्थ रूप से) जैसे कि शारीरिक संपर्क एवं मित्रता का

आग्रह, लैंगिक या यौन प्रेमभाव की मांग या निवेदन, यौन भाव से ओतप्रोत टिप्पणियाँ, अश्लील चित्र दिखाना, कोई भी अन्य अस्वीकार्य यौन प्रकृति का शारीरिक, वाचिक या गैर–वाचिक आचरण लैंगिक शोषण में समाविष्ट है।

## 19-11 ckèk i'uk d mÙkj

### Ckkèk i'u 1

1) राज्य किसी भी व्यक्ति को विधि समक्ष समानता अथवा कानूनों के एक समान संरक्षण से इंकार नहीं कर सकता है, वह सार्वजनिक रोजगार में लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकता है; वह मानवों का अवैध व्यापार नहीं कर सकता है।

2) राज्य, आरक्षण तथा विशेष कानूनें के जरिये महिलाओं के पक्ष में स्वीकृतिसूचक कार्रवाई कर सकता है; राज्य महिलाएं समेत सभी के जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा करने के लिए कर्तव्यबद्ध है; उसे समान काम के लिए समान वेतन देने का निर्देश दिया गया है, कार्य की न्यायपूर्ण तथा मानवीय स्थितियाँ तथा मातृ प्रसुविधा सुनिश्चित करने हेतु प्रावधान करने के लिए भी कर्तव्यबद्ध है।

3) यह सब भारतीय दंड संहिता की धारा 498 ए (घरेलु हिंसा से संबंधित) में समान पारितोशिक अधिनियम 1976, मातृ प्रसुविधा अधिनियम 1961, और घरेलु हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005 भी समाविष्ट हैं।

### Ckkèk i'u 2

1) भारतीय दंड संहिता के गर्भपात, अपहरण तथा लैंगिक प्रहार, विवाह के अंतर्गत अपराध तथा महिलाओं के प्रति क्रूरता पर भी प्रावधान हैं।

2) – विशाल जीत बनाम भारत संघ – बाल वेश्यावृत्ति, देवदासी तथा जोगिन व्यापार गृहों के निशेध एवं उन्मूलन, पीड़ितों के पुनर्वास पर।

   – दिल्ली घरेलु कार्मिकों का मामला – लैंगिक प्रहार की स्थितियों में पीड़ित को न्याय की गम्यता बढ़ाने के लिए दिशानिर्देश।

   – उपेन्द्र बैक्सी बनाम यू.पी. राज्य – संरक्षण गृहों के प्राधिकारियों को महिला कारावासियों की प्रतिष्ठा के अधिकार का उल्लंघन किए बगैर उनके स्वास्थ्य की सुरक्षा करने के निर्देश।

   – शीला बर्से का मामला – महिला संदिग्ध अपराधियों को पृथक कारावास में रखना।

   – रेखा खोलकर का मामला – पुलिस द्वारा शारीरिक आघात तथा यातना के लिए मुआवजा, महिला संदिग्ध अपराधियों से पूछताछ करने के लिए निर्देश।

### Ckkèk i'u 3

1) महिलाओं को कार्य स्थल पर सशक्त करने वाले कानूनों में शामिल हैं – समान पारितोशिक अधिनियम और मातृ प्रसुविधा अधिनियम। कार्य स्थल पर महिलाओं को संबोधित करने वाले प्रावधान अन्य कानूनों में भी मौजूद है जैसे कि कारखाना अधिनियम तथा खदान अधिनियम।

2) इनमें समाविष्ट हैं – न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 बंधुआ मजदूर प्रथा (उन्मूलन) अधिनियम 1976, बागान श्रम अधिनियम 1951, मजदूरी भुगतान अधिनियम 1936, औद्योगिक रोजगार (स्थायी आदेश) अधिनियम 1946, कार्मिक मुआवजा

अधिनियम 1923, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948 और संविदा श्रम (निशेध तथा विनियमन) अधिनियम 1970।

3) विशाखा एवं अन्य बनाम राजस्थान राज्य के मामले में कामकाजी महिलाओं के साथ लैंगिक छेड़छाड़ पर सर्वोच्च न्यायालय ने सर्वतोमुखी फैसले की घोषणा की। इस फैसले के जरिये, इसने कार्यस्थल पर लैंगिक छेड़छाड़ की परिभाषा प्रदान की, कार्य स्थल में लैंगिक छेड़छाड़ को रोकने और सुधारने के लिए नियोक्ताओं को दिशानिर्देश दिए और महिला कामगारों के लिए भेदभाव रहित कार्यकारी वातावरण प्रदान करने के दिशानिर्देश प्रदान किए। इस मुद्दे पर पृथक कानून का मसौदा तैयार होने की प्रक्रिया में है।

4) एक ऐसा कारक पितृसत्तात्मक मानसिकता है जो महिला कामगारों को, बच्चों को जन्म देने तथा उनकी देखभाल करने में उनकी जैविक भूमिका के कारण उन्हें परिसम्पत्ति के बजाय वित्तीय भार के रूप में देखती है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

### Ckkèk i'u 4

1) वैवाहिक कानूनों में कई कानून हैं जो विवाह के दौरान एवं तदन्तर पारिवारिक संबंधों और दम्पति तथा बच्चों के अधिकारों को नियन्त्रित करते हैं। ये कई पहलुओं को कवर करते हैं जैसे विवाह करना, तलाक, भरण–पोषण, अभिरक्षण, उत्तराधिकार, अभिभावकता तथा बच्चा गोद लेना।

2) सामान्य कानूनों, जो सभी व्यक्तियों पर समान रूप से लागू होते हैं के विपरीत भिन्न धार्मिक समुदायों के सदस्यों को भिन्न वैवाहिक कानून नियन्त्रित करते हैं (विशेष विवाह अधिनियम को छोड़कर, जो सभी धार्मिक समुदायों के लिए सामान्य कानून है)। दूसरी बात, अन्य कानूनों के विपरीत, भारत में आज वैवाहिक कानूनों में ऐसे प्रावधान हैं जो धार्मिक ग्रंथों, उन ग्रंथों की व्याख्या, प्रथाओं और परम्पराओं से लिए गए हैं। तीसरा, लगभग सभी ऐसे कानून पितृसत्तात्मक प्रकृति के हैं और महिलाओं के विरुद्ध विभेदी प्रावधान रखते हैं, और परिवार तथा समाज में महिलाओं के लिए निम्न दर्जा विहित करते हैं।

3) काशीनाथ साहु बनाम श्रीमती देवी एवं अन्य का मामला –सास–ससुर तथा पति के रिष्तदारों द्वारा क्रूरता से अपनी पति की रक्षा करने की पत्नि की जिम्मेदारी।

युसुफ रॉथर बनाम सोरम्मा का मामला – पत्नि का भरण–पोषण करने में पति की विफलता पत्नि को तलाक के लिए हकदार बनाती है।

इनमें समाविष्ट हैं :

- वैवाहिक कानून जो प्रतिगामी हैं और स्त्रियों के विरुद्ध भेदभाव करते हैं उनके प्रावधान :
- सशस्त्र बल (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम, जिसके पास सशस्त्र सेना को बहुत असरदार तथा प्रभावशाली शक्तियाँ देने के प्रावधान हैं, को संवेदनशील स्त्रियों के विरुद्ध दुरुपयोग करते हुए पाया;

महाराष्ट्र में मद्यशाला नर्तकियों के विरुद्ध प्रतिबंध, जो महिलाओं के काम करने के अधिकार का उल्लंघन करता है;

काम के चयनित क्षेत्रों में स्त्रियों के लिए रात्रि की पारियों का निशेध स्त्रियों के जीवन निर्वाह के अधिकार पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

स्त्रियाँ–विरोधी जनसंख्या नीतियाँ जो दो से ज्यादा बच्चे जन्मने के लिए अवप्रेरक प्रदान करता है; और

समलैंगिक आचरण का भारतीय दंड संहिता की धारा (एस) 377 के जरिये अपराधीकरण करना; और भूमि तथा सम्पत्ति अधिकारों पर कानून तथा नीतियाँ।

## 19-12 dN mi;kxh iLrd

1. ए.एम. भट्टाचार्जी (1996), 'मैट्रिमोनियल लॉज़ एंड दी कंस्टिट्यूशन, कलकता : इस्टर्न लॉ हाऊस।
2. अमिता सहाय (सम्पादन), (2008), 'वूमेन, वर्क एंड हैल्थ : सलैक्टिड रीडिंग्स,' नई दिल्ली : वूमेन, वर्क एंड हैल्थ इनिशिएटिव्स।
3. अपर्णा भट्ट (2003), 'सुप्रीम कोर्ट ऑन रेप ट्रायल्स', नई दिल्ली : कॉम्बेट लॉ पब्लिकेशन्स (पी) लि.
4. अरविन्द नारायण (2004), 'क्वियर – डेसपाइज़्ड सैक्सुअलिटी, लॉ एंड सोशल चेंज', बंगलौर : बुक्स फॉर चेंज
5. क्रिस्टाइन कोरीन, मिहिर देसाई, कॉलिन गोनसाल्वेस (1999), 'वूमेन एंड दी लॉ', मुम्बई : सोषियो–लीगल इन्फोर्मेशन सेंटर, खंड I एवं II
6. कोलिन गोनसाल्वेस, मोनिका सखरानी एवं एनी फरनैंडस (1996), 'प्रिज़नर्स' द राइट्स', मुम्बई : विदयुलता पंडित एंड ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क
7. दुर्गा दास बसु (1998), 'कंस्टिट्यूशनल लॉ ऑफ इंडिया', नई दिल्ली : प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, 7वां संस्करण
8. फलेविया एगनस (1995), ' स्टेट, जेंडर एंड दी रेटॅरिक ऑफ लॉ रिफॉर्म', मुम्बई : रिसर्च सेंटर फॉर वूमेन'स स्ट्डीस, एस.एन.डी.टी. वूमेन'स यूनिवर्सिटी
9. ह्यूमेन राइट्स लॉ नेटवर्क (2008), 'डॉमेस्टिक वॉयलेंस एंड दी लॉ', नई दिल्ली : ह्यूमेन राइट्स लॉ नेटवर्क
10. जयश्री गुप्ता (1999), 'ह्यूमेन राइट्स एंड वर्किंग वूमेन', नई दिल्ली : पब्लिकेशन प्रभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
11. जस्टिस हॉज़बेट सुरेष (2003), 'फंडामेंटल राइट्स एज़ ह्यूमेन राइट्स, मुम्बई : सबरंग कम्युनिकेशन्स एंड पब्लिषिंग प्रा.लि.
12. मोनिका चावला (2006), 'जेंडर जस्टिस – वूमेन एंड लॉ इन इंडिया', नई दिल्ली ': दीप एंड दीप पब्लिकेशन्स
13. दी लॉयर्स कलक्टिव (2004), 'लॉ रिलेटिंग टू सैक्सुअल हैरासमेंट एट दी वर्क प्लेस', नई दिल्ली : यूनिवर्सल लॉ पब्लिशिंग कं. प्राइवेट लिमिटेड
14. दी लॉयर्स कलक्टिव (2005)', प्रैक्टिकल गाइड टू दी लॉस रिलेटिंग टू सैक्सुअल हैरासमेंट एट दी वर्क प्लेस', नई दिल्ली : यूनिवर्सल लॉ पब्लिशिंग क. प्राइवेट लिमिटेड
15. रोशनी गोस्वामी, एम.जी. श्रीकला एंड मेघना गोस्वामी (2005), 'वूमेन इन आर्म्ड कॉफिलकट सिचुएशन्स', गुवाहटी : नोर्थ इस्ट नेटवर्क

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

16. सोम्या उमा (2007), ' दी सुप्रीम कोर्ट स्पीक्स', मुम्बई : वूमेन्स रिसर्च एंड एक्शन ग्रुप

17. सावित्री गूनेसेकरे (सं.) (2004), ''वॉयलेंस, लॉ एंड वूमेन्स राइट्स इन साऊथ एशिया', नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशन्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड

18. वूमेन एंड लॉ इन इंडिया – एन ओमनिबस क्रॉम्प्राइजिंग इंट्रोडक्शन बाय फ्लेविया एगनस (2004), नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस

## y[k

1. एशियन सेंटर फॉर ह्यूमेन राइट्स, 'दी ए.एफ.सी.पी.ए.: लॉलेस लॉ एनफोर्समेंट अकॉर्डिंग टू दी लॉ? सशस्त्र बल विशेष शक्तियाँ अधिनियम, 1958 समीक्षा हेतु समिति को प्रस्तुत, 1958, 21 जनवरी 2005।

2. सोम्या उमा, 'रिप्रैसिव लॉस इन इंडिया', सोम्या उमा (सं.) (2009), 'अनपैकेजिंग ह्यूमेन राइट्स : कॉनसेप्टस, कंपेन्स एंड कंसर्नस', मुम्बई : वूमेन्स रिसर्च एंड एक्शन ग्रुप एंड डॉक्युमेंटेशन रिसर्च एंड ट्रेनिग सेंटर, पृष्ठ 72–88

3. श्वेता शालिनी, 'लॉस टू प्रोटेक्ट ह्यूमेन राइट्स', सोम्या उमा (सं.) (2009), 'अनपैकेजिंग ह्यूमेन राइट्स : कॉनसेप्टस, कंपेन्स एंड कंसर्नस', मुम्बई : वूमेन'स रिसर्च एंड एक्शन ग्रुप एंड डोक्यूमेंटेशन रिसर्च ण्ड ट्रेनिंग सेंटर, पृष्ठ 51–71

4. 'दी आर्मड फोर्सिस (स्पेशल पावर्स) एक्ट–रिप्रेसिव लॉ', कॉम्बेट लॉ, खंड 2, इश्यु 1, अप्रेल–मई 2003

## fjikV ,o lkotfud c;ku

1. एमनेस्टी इंटरनेशल, इंडिया : पार्लियामेंटेरियन्स मस्ट रिपेल दी आर्म्ड फोर्सिस (स्पेशल पावर्स) एक्टस, ए.एस.ए.20/022/2009, 10 दिसम्बर, 2009

2. एमनेस्टी इंटरनेशल, इंडिया 'रुलिंग अगेंस्ट 'सोडोमी' लॉस इज़ फर्स्ट स्टेप टू इक्वालिटी, 3 जुलाई 2009

3. ह्यूमेन राइट्स वॉच, 'ब्रोकन सिस्टम : डिसफंक्शन, अब्यूज़ एंड इम्प्युनिटी इन दी इंडियन पुलिस, अगस्त 2009

4. ह्यूमेन राइट्स वॉच, वर्ल्ड रिपोर्ट 2010, पृष्ठ 298–305

## bVjuV l lkr

1. अरविन्द नारायण, 'दी लॉ : कॉन्जील्ड कोलोनियलिज़्म', 23 अक्टूबर 2005, उपलब्ध है http://www.boloje.com/wfs4/wfs469.htm (20 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)।

2. बीना अग्रवाल, ' आर वी नॉट पैजेट्स टू? – लैंड राइट्स एंड वूमेनस कलेमस इन इंडिया, दी पोपुलेशन कांउसिल द्वारा निकाली पर्चो श्रृंखला उपलब्ध है : http://www.popcounci/.org/pdfs/seeds/seeds.21.pdf (27 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

3. फेज़ूर रहमान, 'प्रीवेंटिव डिटेंशन एज़ एनाक्रोनिजम', हिन्दू, 7 सितम्बर 2004, उपलब्ध है http://www.hundu.com/op/2004/09-07-stcries/200409070010/500.htm (18 अक्टूबर 2009 को एक्सेस किया गया)।

4. लक्ष्मी मूर्ति, 'दी पोपुलेशन प्रोब्लम : एक्सप्लोडिंग मीथ्स', उपलब्ध है http://www.bologi.comwfs/wfs/52.htm (27 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

5. डॉ. मोहन राव, 'एंटी–पीपल स्टेट पोपुलेशन पॉलिसीस', उपलब्ध है : http://www.delhiscienceforum.net/publichealth/154 (27 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

6. साऊथ ऐशियन ह्यूमेन राइट्स डोक्युमेंटेशन सेंटर, 'आर्मड फोर्सिस स्पेशल पावर्स एक्ट : ए स्ट्डी इन नेशनल सिक्योरिटी टायरेनी', उपलब्ध है : http://www.hrdc.net.sahedc/resowces/armedfurces.htm

7. वॉयसिस अंगेस्ट 377, 'राइट्स फॉर ऑल : एडिंग डिस्क्रिमिनेशन अगेंस्ट क्वियर डिजायर अंडर सेक्शन 377, 2004, उपलब्ध है : http://www.vicesagainst377.org/centert/view/13/27/ (22 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

8. 'एयर फोर्स : प्रेगनेंसी मेक्स वूमेन पायलट्स कोस्ट इनएफिशियंट' : एन.डी.टी.वी.com में है 17 नवम्बर 2009, उपलब्ध है : <http://www.ndtv.com/news/india/air force prograncy makes worrev pilots cost-inefficient.php,> (22 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

9. 'बी.पी.ओ. यूनिट्स मस्ट प्रोवाइड सेफटी टू वूमेन एम्पलॉइस' : हिन्दू बिज़नेस लाइन में, 17 दिसम्बर 2005, उपलब्ध है : http://www.the hundu buisness line.com/2005/12/17/stories/2005 12ito2770400.htm (22 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

10. लैंड लॉज़ आर एंटी वूमेन बट वी कांट सट इट असाइड : दिल्ली एच.सी.', दी इंडियन एक्सप्रेस, 11 सितम्बर, 2009

11. नाईट शिफ्ट बैन ऑन वूमेन इज़ ओपन डिक्रिमिनेशन', 9 मई 2007, उपलब्ध है : http://www.expressindia.com.news/fullstory.pdp?newdid=86219#compstory (22 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

12. अरविंद नारायण, 'क्वियर – डेसपाइज़्ड सेक्सुअलिटी, लॉ एंड सोशल चेंज, बंगलौर : बुक्स फॉर चेंज, 2004

13. बीना अग्रवाल, 'आर वी नॉट पैजेन्टस टू? – लैंड राइट्स एण्ड वूमनेस राइट्स इन इंडिया दी पोपुलशन कांउसिल डंक द्वारा निकाली पर्चों श्रृंखला, उपलब्ध है : http://www.popcuncil.org/pdfs/seeds/seeds21.pdf, (27 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

14. डॉ. मोहन राव, 'एंटी–पीपल स्टेट पोपुलेशन पॉलिसीस', उपलब्ध है : http://www.delhiscience forum.net/public-health/154, (27 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

15. ललित भसीन, लेबर एंड एम्पलॉयमेंट लॉज़ ऑफ इंडिया', 24 अगस्त 2007, उपलब्ध है : http://www.mondaq.com/article.asp?articleid=50440 (27 जनवरी 2009 को एक्सेस किया गया)

16. नाज़ फाउंडेशन विज़ गवर्नमेंट ऑफ एन.सी.टी.ऑफ दिल्ली एंड अदर्स', डब्लू.पी.(सी) सं. 7455/2001, 2 जुलाई 2009 का फैसला।

17. पारुल शर्मा, 'स्प्लिट लीगल रेजीम इन इंडिया'स लेबर लॉज़' जर्नल फॉर सस्टेनेबल डेवलेपमेंट, फरवरी–मार्च 2007, उपलब्ध है : http://www.southasiaexperts.se/pdf/india%20labour%20law%20.pdf (27 जनवरी 2009 को एक्सेस किया गया)

## 19-13 ckèk iz'u ¼euu ,oa vH;kl gsrq½

1) भारत में महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए संवैधानिक प्रावधनों का ब्यौरा दीजिए।

2) किस प्रकार कानून महिलाओं का विसशक्तिकरण करते है, सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

3) एफस्पा (ए.एफ.एस.पी.ए.) पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिए।

4) भूमि तथा सम्पति अधिकारों पर नीतियों में से कौनसी महिलाओं को प्रभावित करती हैं?

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 20 जेंडर आधारित हिंसा का रूप तथा सीमा

## संरचना

20.1 प्रस्तावना

20.2 उद्देश्य

20.3 जेंडर आधारित हिंसा के रूप तथा विस्तार

20.4 जाति आधारित हिंसा

20.5 साम्प्रदायिक हिंसा

20.6 सुरक्षा बलों द्वारा जेंडर आधारित हिंसा

20.7 डायन तलाश

20.8 सारांष

20.9 शब्दावली

20.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

20.11 उपयोगी पुस्तकें

20.12 बोध प्रश्न (मनन एवं अभ्यास हेतु)

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## 20.1 प्रस्तावना

'जेंडर आधारित हिंसा' (जी.बी.वी.) का, हिंसा जो जेंडर के आधार पर व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों को लक्ष्य करती है, का व्यक्तियों तथा समूहों के द्वारा अन्य प्रकारों की हिंसा से भेद करने के लिए उपयोग किया जाता है। इसमें वो क्रियाएं समाविष्ट हैं जिनसे शारीरिक, लैंगिक या मनोवैज्ञानिक नुकसान होता है या होने की संभावना होती है। ऐसे कृत्यों की धमकी, जबरदस्ती तथा दूसरे की स्वतंत्रता का स्वैच्छा से वंचन भी जेंडर–आधारित हिंसा के रूप हैं। इस प्रकार का हिंसा परिवार के अंदर, समुदाय में ''शांति के समय या संघर्ष के समय के दौरान हो सकती है या राज्य के एजेंटों द्वारा की जा सकती है। यह अपराध परिवार के सदस्यों, जान पहचान वालों, अजनबियों या पति समेत घनिष्ट मित्रों द्वारा किया जा सकता है।

जेंडर आधारित हिंसा विश्व में प्रचलित शायद सर्वाधिक व्यापक तथा सामाजिक रूप से बर्दाश्त की जाने वाले प्रकार की हिंसा है। जेंडर–आधारित हिंसा जो परिवार के अंदर होती है घरेलु हिंसा घर में बच्चों के साथ यौन दुर्व्यवहार, दहेज–संबंधित हिंसा, बलात्कार तथा परिवार के सदस्यों द्वारा कौटुम्बिक बलात्कार, 'प्रतिष्ठा हत्या' स्त्री लिंग का विकृतिकरण और अन्य पारम्परिक प्रथाएं जो नुकसानदेय हैं समाविष्ट है। समुदाय में हिंसा के अपराध में बलात्कार, यौन दुर्व्यवहार, कार्य स्थल पर तथा अन्य सार्वजनिक स्थल पर यौन संबंधी छेड़छाड़, तेजाब फेंकना, 'डायन तलाशना' स्त्रियों तथा बच्चों का अवैध व्यापार और बलात् वेष्यावृति समाविष्ट हैं। इसके अतिरिक्त, जेंडर–आधारित हिंसा राजकीय एजेंसियों के साथ गुप्त सहयोग द्वारा भी की जाती है, या उनके द्वारा सुव्यक्त/अव्यक्त नीतियों के जरिये अथवा सरकारी अधिकारियों की कार्रवाइयों के द्वारा अनदेखी कर दी जाती है। इसके अतिरिक्त, यह युद्ध और आंतरिक सशस्त्र लड़ाई

के संदर्भों में, जहाँ शत्रु को दंडित करने या शत्रु को पाठ सिखाने के तरीके के रूप स्त्रियों को में यौन तथा जेंडर आधारित हिंसा के विशेष रूपों के लिए उनके द्वारा लक्ष्य किया जाता है, ये अपराध किया जाता है।

जबकि किसी भी व्यक्ति–पुरुष, स्त्री या बच्चे के लिए हिंसा घातककारी (या गहन आघात का) अनुभव है, जेंडर–आधारित हिंसा प्रमुखत्या पुरुष द्वारा स्त्री एवं लड़कियों पर उनके जेंडर के कारण किया जाता है। स्त्रियों के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर अति मेहराबी प्रभाव के अलावा ये स्त्रियों की गरिमा, सुरक्षा, लैंगिकता (सैक्सुअलिटि) प्रजननीय क्षमता और अपनी देह पर नियंत्रण के उनके अधिकार (स्वायतता) को प्रभावित करता है। जेंडर–आधारित हिंसा पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच शक्ति–असमानता के कारण जन्म लेती है और, सामाजिक–आर्थिक, सांस्कृतिक तथा संरचनात्मक असमानताओं के कारण बद्दतर बन जाती है। स्त्रियों की अधीनस्थ प्रस्थिति में निहित यह पितृसता की संस्था तथा पुरुषात्व की अवधारणा दोनों से संबंधित है। समलिंगी (लैसबियन्स), गे द्विलैंगिकता, (बाइसैक्सुअल्स) और ट्रांसजेंडरड लोगों के विरुद्ध हिंसा इस बात का उदाहरण है कि किस प्रकार जेंडर–आधारित हिंसा भी लैंगिकता से संबंधित मुख्यधारा तथा वैकल्पिक समझ तथा प्रथाओं के बीच तनाव के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। यह इकाई जन–अपराधों जैसे कि साम्प्रदायिक हिंसा, जाति–आधारित हिंसा तथा सुरक्षा बलों द्वारा हिंसा के संदर्भों में डायन–तलाश तथा जेंडर आधारित हिंसा पर फोकस करती है।

## 20-2 mnns’;

इस इकाई को पढ़ लेने के बाद आप सक्षम होंगे :

- जेंडर–आधारित हिंसा के रूपों के और भारत तथा अन्य स्थानों में उसके प्रचलन की सीमा के दृष्टांत देने में;
- ऐसी हिंसा के कारण और परिणामों की पहचान करने में; और
- ऐसी हिंसा को संबोधित करने तथा उसके प्रति प्रतिक्रिया करने के कानून तथा सामाजिक कार्रवाई समेत विभिन्न तरीकों को रेखांकित करने में।

## 20-3 tsaMj vkèkkfjr fgalk dk :Ik rFkk foLrkj

जेंडर–आधारित हिंसा लम्बे समय से मौन तथा सहनशीलता की संस्कृति के द्वारा छिपी रही है। इस पर विश्वसनीय सांख्यिकी को गम्य करना कठिन है, क्योंकि कलंक, शर्म तथा प्रतिहिंसा के डर के कारण हिंसा की सूचना कम दी जाती है। फिर भी, जेंडर–आधारित हिंसा के बारे में कुछ तथ्य तथा सांख्यिकी निम्नवत है :

1. घरेलु हिंसा सर्वाधिक आम प्रकार की जेंडर–आधारित हिंसा है। विभिन्न देशों में, सर्वेक्षण के आधार पर 10% –65% स्त्रियों पर घरेलु हिंसा की जाती है।
2. आस्ट्रेलिया, कनेडा, इज़राइल, दक्षिण अफ्रीका तथा यूनाइटेड स्टेट्स में 40 से 70 प्रतिशत तक महिलाएं अपने पुरुष साथियों द्वारा मार दी गई थी, इनमें से बहुत सी तब जब उन्होंने दुर्व्यवहार करने वाले पति को छोड़ना चाहा या उसके तुरंत बाद।
3. विश्व भर में, पांच स्त्रियों में से अनुमानित एक अपने जीवन काल में बलात्कार या बलात्कार चेष्टा की शिकार होगी।
4. तीन में से एक स्त्री परिवार के सदस्य या जान पहचान वाले व्यक्ति द्वारा मारी–पीटी, या यौन संबंध के लिए जबरदस्ती क गई होगी या अन्यथा उसके साथ दुर्व्यवहार किया गया होगा।

5. वर्ष 2005 की सांख्यिकी के अनुसार, लिंग चयन गर्भपातों के कारण, 60 मिलियन से ज्यादा लड़कियाँ गुमषुदा हैं।

6. लिंग चयनीय गर्भपात तथा कन्या भ्रूण हत्या का प्रचलन चीन, पूर्वी मध्यसागर तथा कुछ पूर्वी एशियाई देशों में भी है।

7. विश्व भर में 100 से 140 मि. लड़कियों पर स्त्री लिंग विकृतिकरण किया गया, जिससे बाह्य स्त्री लिंग आंषिक रूप से या पूर्णत्या गैर चिकित्सीय कारणों से हटा दिए गए थे।

8. प्रत्येक वर्ष 600,000 और 800,000 के बीच व्यक्तियों का बलात् श्रम के लिए अवैध व्यापार होता है, अधिकांश का वाणिज्यिक यौन शोषण के लिए इनमें से; इनमें से लगभग 80% स्त्रियों और लड़कियाँ होती हैं, और 50% नाबालिक।

9. 'डायन तलाश' अब अंतरराष्ट्रीय परिघटना बन गई है; स्त्रियों और बच्चों, पर डायन होने का अभियोग लगाने के बाद, उनकी हत्या कर दी गई, उन्हें अपमानित किया गया, यातना दी गई और उनके साथ कठोरता के साथ निपटा गया, और इस तरह से लाखों लोगों का जीवन नष्ट कर दिया गया।

10. भारत में आदिवासी, दलित, एकल तथा बड़ी उम्र की स्त्रियाँ डायन–तलाश की बद्‌दतर पीड़िताएं हैं, जो कि प्रायः उनकी सम्पति हथियाने का एक तरीका होता है और जो अंध विश्वास तथा पारम्परिक प्रथाओं के आवरण में छिपा रहता है।

11. प्रत्येक वर्ष विश्व भर में कम से कम 5000 'प्रतिष्ठा हत्याएं (honour killings) होती हैं (जहाँ मुख्य रूप से स्त्रियों को परिवार की इज्जत बचाने के लिए परिवार के सदस्यों के द्वारा मारा गया है)।

12. कार्यस्थल पर यौन छेड़छाड़ जेंडर–आधारित हिंसा का ही रूप है जो कई देशों में प्रचलित है; भारत में लगभग 47% कामकाजी महिलाओं ने अपने काम के दौरान किसी न किसी प्रकार की यौन छेड़छाड़ का अनुभव किया है।

राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड्स ब्यूरो (NCRB) की सांख्यिकी भारत में पिछले कुछ वर्षों में महिलाओं के विरुद्ध चयनित जेंडर–आधारित अपराध का संकेत देती है। नीचे दी गई तालिका : 20.1 वर्ष 2008 में महिलाओं के विरुद्ध चयनित अपराधों की सांख्यिकी प्रस्तुत करती है। तालिका के अनुसार, जेंडर–आधारित हिंसा के विभिन्न वर्गों के बीच, घरेलु हिंसा (पति तथा रिश्तेदारों के द्वारा क्रूरता) के सबसे अधिक मामले दर्ज किए गए थे, फिर भी दोष सिद्धि की दर (यानि कि जिस दर से अभियोगी व्यक्ति न्यायालयों द्वारा अपराधी ठहराए जाते हैं) अधिकांश अन्य वर्गों से निम्न है। तालिका 20.2 वर्ष 2000–2007 के वर्षों में, भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं के अंतर्गत दर्ज महिलाओं के विरुद्ध चयनित अपराधों की घटनाओं का चित्र प्रदान करता है। तुलनात्मक आंकड़े अधिकांश वर्गों में पिछले वर्षों में महिलाओं के विरुद्ध अपराधों में लगातार वृद्धि प्रगट करते हैं। यह तथ्य नीचे दिए आरेख 3 से आगे फिर प्रकट होता है, जो 2003–2007 के वर्षों में महिलाओं के विरुद्ध चयनित अपराध का प्रचलन सूचित करता है। इस सांख्यिकी के साथ सीमा यह है कि वे केवल पुलिस के पास दर्ज किए गए अपराध ही प्रकट करते हैं। परंतु क्योंकि स्त्रियों के विरुद्ध अपराधों के बहुत से मामले होते हैं जो सूचित या दर्ज नहीं किए जाते हैं, इसलिए सांख्यिकी केवल संकेत ही है और भारत में स्त्रियों के विरुद्ध जेंडर–आधारित अपराधों की सीमा तथा परिणाम का यथार्थ प्रतिबिम्बन नहीं है।

### rkfydk 20-1 % Hkkjr e fL=;k d fo#) vijkèk

| अपराधों के शीर्षक | दर्ज मामलों की संख्या | आईपीसी के अंतर्गत कुल दर्ज मामलों का कुल में प्रतिशत | अपराध की दर | चार्ज शीटिंग दर | अभियोग की दर |
|---|---|---|---|---|---|
| पति व रिश्तेदारों द्वारा क्रूरता | 81344 | 3.9 | 7.1 | 93.7 | 22.4 |
| बलात्कार | 21467 | 1.0 | 1.9 | 93.9 | 26.6 |
| छेड़छाड़ या तंग करना | 40413 | 1.9 | 3.5 | 96.1 | 31.7 |
| यौन छेड़छाड़ | 12214 | 0.6 | 1.1 | 96.8 | 50.5 |
| स्त्रियों तथा लड़कियों का अपहरण | 22939 | 1.1 | 2.0 | 74.1 | 27.1 |
| दहेज मृत्यु | 8172 | 0.4 | 0.7 | 92.8 | 33.4 |
| लड़कियों का आयातन | 67 | 0.0 | 0.0 | 72.2 | 12.3 |
| स्त्रियों के विरुद्ध कुल अपराध (आईपीसी अपराध +विशेष कानून) | 195856 | 9.4 | 17.0 | 92.5 | 30.1 |

*Lkksr %* राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड्स ब्यूरो, गृह कार्यकलाप मंत्रालय, नई दिल्ली

*ukV %* यह सांख्यिकी पुलिस के पास दर्ज की गई शिकायतों से निकाली गई है; प्रत्येक वर्ग में बहुत से और अपराध हैं जिन्हें दर्ज नहीं किया गया जहाँ शिकायतें दर्ज नहीं की गई, जो इस सांख्यिकी में प्रकट नहीं होती है।

### rkfydk 20-2 % Hkkjrh; nM lfgrk d vrxr ntl fd, x, p;fur vijkèk dh ?kVuk,] 2000&2008

| वर्ष | पति व रिश्तेदार द्वारा क्रूरता | बलात्कार | छेड़छाड़ | यौन छेड़छाड़ | दहेज मृत्यु | लड़कियों का आयातन |
|---|---|---|---|---|---|---|
| 2000 | | | | | | |
| 2001 | | | | | | |
| 2002 | | | | | | |
| 2003 | | | | | | |
| 2004 | | | | | | |
| 2005 | | | | | | |
| 2006 | | | | | | |
| 2007 | | | | | | |
| 2008 | | | | | | |

*Lkksr %* नेशनल क्राइम्स रिकॉर्ड्स ब्यूरो, मिनिस्ट्री ऑफ होम अफेयर्स, नई दिल्ली।

नोट : अपराध जैसे तेजाब फेंकना, प्रतिष्ठा–वध, लिंग चयनित गर्भपात एवं डायन तलाशना एन.सी.आर.बी. की सांख्यिकी में पृथक रूप से वर्गीकृत नहीं किए गए हैं।

### आरेख 5.3

अपराध शीर्षक–वार स्त्रियों के विरुद्ध अपराधों की घटनाएं 2003–07

चित्र (डायग्राम)

☐ बलात्कार ☐ अपहरण ☐ दहेज हत्या
☐ पति+रिश्तेदारों की क्रूरता ☐ छेड़छाड़ ☐ यौन छेड़छाड़
☐ लड़कियों का आयातन ☐ सती निरोध अधिनियम
☐ अवैध व्यापार अधिनियम
☐ स्त्रियों का अश्लील प्रतिरूपण
☐ दहेज निषेध अधिनियम

चित्र 20.1 : महिलाओं के विरुद्ध अपराधों की घटनाएं, 2003–2007

स्रोत : नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स ब्यूरो, गृह कार्य कलाप मंत्रालय, नई दिल्ली।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

### बोध प्रश्न 1

नोट : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।
ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. जेंडर–आधारित हिंसा अन्य प्रकार की हिंसा से किस प्रकार भिन्न है?

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

2. जेंडर–आधारित हिंसा का स्त्रियों पर क्या असर पड़ता है?

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

3. जेंडर–आधारित हिंसा (जी.बी.वी.) क्या होती है?

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

..............................................................................................................

4. कुछ प्रकार की जेंडर–आधारित हिंसाओं (जी.बी.वी.) के नाम बताइए।

..................................................................................................................

..................................................................................................................

..................................................................................................................

## 20-4 tkfr vkèkkfjr fgalk

ऐतिहासिक रूप से, भारत का सामाजिक ढांचा अत्यन्त स्तरित है और जातियों की विभिन्न क्रम की श्रेणियां हैं। यद्यपि यह काम के बंटन की व्यवस्था के रूप में प्रारम्भ हुई, जाति व्यवस्था में अब अधिकारों का पूर्व निर्धारित तथा सोपानिक विभाजन है। 'अस्पृश्य' व्यक्ति (दलित) जिसे जाति पदानुक्रम में सबसे नीचे के स्तर पर रखा गया है, गरिमा के साथ जीने के अधिकार और मौलिक मानवीय अधिकारों से वंचित कर दिए गए हैं। शक्तिशाली सामाजिक तथा धार्मिक मानकों ने सामाजिक बहिष्कार समेत, अधिकारों के ऐसे वंचन का पक्ष लिया और जाति व्यवस्था को लागू किया। जाति–आधारित तथा जेंडर–आधारित ऐसी हिंसा के लिए समर्थन प्रायः हिन्दू धार्मिक ग्रंथों से मिलता है जैसे कि मनुस्मृति, जिसने कहा है : ''ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य पुरुष किसी शूद्र स्त्री का यौन शोषण कर सकता हैं।

दलितों को सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक सीढ़ी के ऊपर जाने तथा पद अवस्था को बनाए रखने से रोकने के लिए हिंसा का उपयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त, दलितों के विशाल बहुसंख्यक वर्ग, जो कृषि मजदूर हैं, के लिए भूमि का असमान वितरण, और उन्हें भूमि जोतने से रोकने या उसकी उपज ले लेने का परिणाम हिंसा प्रज्वलित करने का हुआ, विशेष रूप से जब दलित अपने अधिकारों का दावा करने का प्रयास करते है। बिहार तथा उत्तर प्रदेश के राज्यों में, जब पूर्वस्थापित और शोषणीय सामंत प्रणालियों को चुनौती दी गई तो उसे भूस्वामियों की तरफ से, 'उच्च जातियों' की निजी सेना जैसे कि रनबीर सेना के निर्माण के जरिये हिंसात्मक तथा अमानुषिक विरोध का सामना करना पड़ा था।

दलित महिलाएं, जो कम से कम 80 मिलियन हैं और दलित जनसंख्या का करीबन 48% बनाती हैं, अपनी जाति, वर्ग तथा जेंडर सन्बन्धी अस्मिताओं के कारण अमानुशिक यौन आघात का सामना करती हैं। इस कारण, प्रायः यह तर्क दिया गया है कि दलित महिलाएं एक अलग सामाजिक समूह है जिसे 'स्त्रियों' या 'दलितों' की सामान्य वर्ग श्रेणियों में छिपाया नहीं जा सकता है। दलित महिलाएं हिंसा की प्रायः आसान शिकार बनती हैं, क्योंकि उनमें बदला लेने की शक्ति का अभाव होता है। पूजा के स्थलों तथा कुओं जैसे सार्वजनिक स्थलों की गम्यता से वंचन के अलावा, दलित महिलाओं पर जेंडर–आधारित हिंसा यौन प्रकृति के अत्यन्त अश्लील वाचिक दुरुपयोग, नग्न पैरेडिंग, अंगच्छेदन, मूत्र एवं विष्ठा पीने के लिए बाध्य करना, बदनामी का टीका लगाना (ब्रांडिंग), दांत/जीभ/नाखून निकाल लेना, बलात्कार, सार्वजनिक में या परिवार के सदस्यों की उपस्थिति में बलात्कार, उन्हें डायन होने का करार देकर उनकी हत्या समेत अन्य रूप के प्रहार तथा हिंसा को समाविष्ट करती है। दलित महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए अधिकांश आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, शैक्षिक तथा व्यक्तिगत मार्ग उनके लिए सामाजिक ढांचों तथा व्यवस्थाओं के कारण बंद हैं।

जेंडर आधारित हिंसा के लिए मुख्य संदर्भों में समाविष्ट है – मजदूरी के भुगतान के लिए मांग, भूमि तथा सम्पत्ति विवाद, बंधुआ या बलात् श्रम, जल की गम्यता, ऋण ग्रस्तता, पारम्परिक तथा निम्न या अपमानजनक कामों को निष्पन्न करने की बाध्यता। उदाहरण के लिए, कम से कम 1.5 मिलियन स्त्रियाँ हाथ से भंगी या मेहतर का काम करती हैं।

हाथ से मेहतर का काम करना शुष्क शौचालयों से लोगों की विष्ठा को हाथ से उठाना हे, और ये सम्मान विरुद्ध काम है। सफाई कर्म चारी नियोजन और शुष्क शौचालय सन्निर्माण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1993 वो कानून है जो हाथ से भंगी के काम का निशेध करता है और हाथ से काम करने वाले भंगियों को काम पर रखने के लिए तथा शुष्क शौचालयों के निर्माण के लिए अपराधियों को सजा देता है। इस अधिनियम के बावजूद, यह अवमाननीय प्रथा चल रही है।

देवदासी तथा जोगिन प्रणालियों के द्वारा जेंडर–आधारित हिंसा का आगे सांस्थानिकरण किया गया है जो दलितों समेत, समाज के कमजोर तबकों की महिलाओं का शोषण जारी रखता है। इस प्रकार की व्यवस्था के अंतर्गत, लड़कियों तथा स्त्रियों का विवाह हालांकि सैद्धांतिक दृष्टि से प्रभु के साथ हुआ है, वे ''उच्च'' जाति के सदस्यों को यौन सेवाएं प्रदान करने के लिए बाध्य की जाती हैं। ह्यूमेन राइट्स वॉच रिपोर्ट, 1992 के अनुसार, प्रति वर्ष लगभग 50,000 लड़कियाँ हिन्दू संगठनों को बेची जाती हैं।

दलित स्त्रियों के विरुद्ध जाति–आधारित हिंसा के अपराधकर्ता व्यापक रूप से 'उच्च जातियों' के सदस्य होते हैं जिन्हें पुलिस समेत सरकारी अधिकारियों का समर्थन प्राप्त होता है। हालांकि विशेष रूप से दलित स्त्रियों पर जाति–आधारित हिंसा का प्रज्वलन शायद कभी–कभी सहज हो और अन्य समय पर योजनाबद्ध हो, सामान्यत्या प्रभुत्वशाली समुदाय के साथ पुलिस स्वीकारोक्ति का पैटर्न अपनाया जाता है, जो मामलों को दर्ज करने की असफलता, पीड़िताओं/उत्तरजीवित तथा मानवाधिकार रक्षक जो उनकी सहायता करते हैं के विरुद्ध झूठे अभियोगरोपण द्वारा सिद्ध होता है। ऐसी प्रथाओं ने अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति (क्रूरताओं का निवारण) अधिनियम् (लोकप्रिय रूप से एस.सी./एस.टी.एक्ट कहलाता है) के क्रियान्वयन को कमजोर तथा अप्रभावी बना दिया है, इस अधिनियम ने संवेदनशील समूहों कमजोर तथा अप्रभावी समूहों को अतिरिक्त संरक्षण की जरूरत को पहचाना है। जब बलात्कार की बात आती है, तो कोई भी अपराधकर्ता अस्पृश्यता का व्यवहार में उपयोग नहीं करता है परंतु ऐसे अपराधों की सुनवाई के दौरान अपराधकर्ता द्वारा 'अस्पृश्यता' को प्रायः बचाव के रूप में उपयोग किया जाता है।

### ckDl 20-1 % dsl LVMh % Hkaojh nsoh dk ;kSu vk?kkr ;k cykRdkj

भंवरी देवी साथिन कार्यकर्ता थी – राजस्थान सरकार के महिला विकास कार्यक्रम की कार्यकर्ता। वह गाँव वालों को रूढ़िवाद समाज में जहाँ बाल विवाह अत्याधिक प्रचलित थे और जाति व्यवस्था का पालन कड़ाई के साथ किया जाता था, बाल विवाह की बुराइयों के बारे में शिक्षित करती थी। वह कुम्हारों के समुदाय से थी और जाति प्रणाली में निम्न समझी जाती थी। गुज्जर समुदाय के 'उच्च' जाति के पुरुष उसके काम से कुछ हो उठे थे और उसे पाठ सिखाने का फैसला किया। वर्ष 1992 में उसके पति की उपस्थिति में 5 पुरुषों ने पाशविकता से उसका बलात्कार किया। उसने अपना गाँव छोड़ने के बजाय, अपराधिक न्याय प्रणाली के जरिए न्याय के लिए लड़ाई की। सुनवाई न्यायालय का फैसला उसके विरुद्ध गया और वो सभी पांच पुरुष छूट गए, और फैसले में कहा गया कि क्योंकि वह दलित थी और अभियोगी व्यक्ति ''उच्च जाति'' के पुरुष थे, उन्होंने सम्भवत्या उसका बलात्कार न किया होगा। बाद में, उच्च न्यायालय के फैसले में कहा गया कि वह ''बदले की भावना से किया गया सामूहिक बलात्कार'' था। अभियान के अंश के रूप में, महिला समूहों ने सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दर्ज की और परिणाम निकला – विशाखा बनाम राजस्थान सरकार मामले का ऐतिहासिक फैसला, जहाँ न्यायालय ने कार्यस्थल पर यौन छेड़छाड़ को रोकने के दिशानिर्देश जारी किए।

उसके बलात्कारियों ने केस वापिस लेने के लिए उसे मुआवजा देना चाहा। उनको उसका उत्तर था : ''हमारे गाँव के बुर्जुगों से कहो तुमने मेरा बलात्कार किया, मेरी प्रतिष्ठा पुनः स्थापित करो''। उसके पूरे परिवार ने समर्थन वापिस ले लिया क्योंकि उन्हें लगा कि उसे मान लेना चाहिए और केस वापिस ले लेना चाहिए। भंवरी अपने बलात्कारी को सजा नहीं दिलवा पाई। परंतु उसकी लड़ाई का परिणाम पूरे भारत में महिलाओं के विरुद्ध यौन छेड़छाड़ के लिए कानून बनने का हुआ और भंवरी देवी अन्य कई बलात्कार पीड़िताओं के लिए प्रेरणा की स्रोत बन गई है। और वह उसी गाँव में रहते हुए अपना सिर उठा कर अपने बलात्कारी के विरुद्ध लड़ाई लड़ती रही। इस पूरी प्रक्रिया के दौरान उसके पति ने उसका साथ दिया। भंवरी देवी अभी भी और अपने गाँव में अपना सामाजिक कार्य करना जारी रखने की और अधिकारों, परिवर्तन तथा कानूनों की बात करने का साहस और मानवीयता रखती है।

परिवर्तन का एजेन्ट होने के लिए ''उच्च जाति'' के पुरुषों के द्वारा जेंडर–आधारित हिंसा का शिकार बनने से भंवरी देवी का आघातकारी अनुभव, और न्याय के लिए उसका तदंतर संघर्ष, जहाँ उसने दलित महिलाओं के विरुद्ध हिंसा से जुड़ी पितृसत्तात्मक तथा जातिवादी मानसिकताओं को चुनौती दी और राज्य से सुरक्षा की जरूरत हमारे सामने समस्या की विषालता तथा उसे सम्बोधित करने में कठिनाइयों का उदाहरण रखती है।

### ckDl 20-2 % dsl LVMh&2 % [kjykath gR;kdkM

29 सितम्बर 2006 को, भोटमांगे परिवार के चार सदस्य खेरलांजी, महाराष्ट्र राज्य के भंडारा जिले में एक छोटा सा गाँव, में मार दिए गए थे। उत्पीड़ित थे– सुरेखा–माँ, जिसकी उम्र 44 वर्ष की थी और प्रियांका, बेटी जिसकी उम्र 18 वर्ष की थी और दो पुत्र जिनकी आयु 23 और 21 वर्ष की थी। पिता – भइया लाल भोटमांगे – दलित किसान– आक्रमण का एकमात्र उत्तरजीवी था। सभी चारों उत्पीड़ितों के कपड़े उतार कर नंगा कर दिया गया था, खींच कर खुले मैदान में लाया गया, सुरेखा तथा प्रियांका का पाशविकता के साथ बलात्कार किया गया और सभी लोगों के सामने बर्बरतापूर्वक यौन आघात किया गया – उन सभी को कत्ल करके मारने से पहले एक घंटे से ज्यादा समय के लिए यह सब चलता रहा था। पुत्रों को भी बार–बार चाकू से वार करके मारा गया और गुप्त अंगों को विकृत कर दिया गया था। यह परिवार कुनबी जाति से था, जो पिछड़ी जाति समझी जाती है। उनके मृत शरीरों को नहर में फेंक दिया गया था।

इन बर्बरतापूर्ण प्रहारों का कारण था उनकी पांच एकड़ की भूमि जिसे उच्च जाति के सदस्य छीनना चाहते थे, उन्हें छीनने से रोकना था। इस परिवार ने उस भूमि को पुनः प्राप्त कर लिया था जिसे ग्रामवासियों ने थोड़ा–थोड़ा करके अपनी कर लिया था, और वर्ष 2006 में पूरे पांच एकड़ की अपनी जमीन पर खेती की। सुरेखा ने ग्रामवासियों के विरुद्ध साक्षी दी थी जिन्होंने जमीन के उनके भाग को वापस लेने में उसकी लड़ाई में सहायता करने के लिए उसके भाई (cousin) पर प्रहार किया था। इससे उन ग्रामवासियों को गिरफ्तार कर लिया गया था। और उन्होंने जमानत मिलने के बाद बेइज्जती का बदला लिया। भइयालाल ने बताया था कि सुरेखा का ''दोष'' यह था कि उसने गाँव के उच्च जाति के भूस्वामियों को चुनौती दी थी, जो उसकी जमीन लेना चाहते थे क्योंकि उन्हें वहाँ सड़क बनवानी थी।

यद्यपि केन्द्रीय अन्वेषन ब्यूरो (CBI) द्वारा छानबीन से खुलासा हुआ कि स्त्रियों का बलात्कार नहीं हुआ था, डाक्टरों, जिन्होंने पोस्टमार्टम किया था पर रिश्वत लेने के दोष लगाए गए, और कि य पुलिस ने, चल रही छानबीन में कथित अपराधियों को बचाने की कोशिश की थी। राज्य के गृह मंत्री आर.आर. पाटिल ने पुलिस छानबीन में प्रारम्भिक

चूक स्वीकार की और कहा कि पांच पुलिसकर्मी जो हत्याकांड में निलंबित कर दिए गए थे को निकाल दिया गया है। हालांकि अपराध तमाम लोगों की दृष्टि के सामने किया गया था, कोई साक्षी नहीं थे क्योंकि ग्रामवासियों को इस घटना के बारे में न बोलने के लिए कड़े आदेश थे। इसक बावजूद, इस मामले में अभिनिर्णय जो भंडारा सेशन कोर्ट द्वारा 15 सितम्बर 2008 को सुनाया गया था ने आठ लोगों को हत्या का दोषी पाया और तीन को छोड़ दिया। आठ में से छः व्यक्तियों को बाद में फांसी की सजा दी गई थी, और अन्य दो को आजीवन कारावास का दंड दिया गया था। फैसले के विरुद्ध याचिका विचाराधीन है।

यह केस स्टेडी निम्नलिखित तथ्यों पर प्रकाश डालती है :

1. दलित परिवार जो प्रभुत्वशाली जातियों तथा वर्गों के सदस्यों की अन्यायपूर्ण प्रथाओं तथा स्थापित मानकों को चुनौती देते हैं उनकी अत्याधिक संवेदनशीलता (या अत्याधिक कमजोर स्थिति);
2. दलित स्त्रियों पर प्रहारों की पाशविकता, तथा ऐसी पाशविकताओं का यौन स्वरूप;
3. जबकि यौन भावना से ग्रस्त प्रहारों का लक्ष्य मुख्यतः स्त्रियों को ही बनाया जाता है, कभी–कभी यह पुरुषों के विरुद्ध भी किए जाते थे, जैसे कि उन पुत्रों के विरुद्ध किया गया था, इनके यौन अंगों को विकृत कर दिया गया था;
4. साक्ष्य संरक्षण कानून की अनुपस्थिति में पीड़िता को बदला लेने के जोखिम की ओर धकेलती है; और
5. अपराधों में पुलिस और डाक्टरों समेत प्रभुत्वशाली जातियाँ तथा राज्य प्रशासन का गुप्त सहयोग न्याय को और भी ज्यादा कठिन बना देता है।

### ckèk iz'u 2

uksV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. दलित महिलाओं को 'दलितों' और 'महिलाओं' से पृथक वर्ग क्यों समझा जाता है?

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

2. भंवरी देवी कौन हैं? उनका अनुभव हमें क्या सिखाता है?

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

3. खैरलांजी में कया हुआ था। यह जी.बी.वी. (जेंडर–आधारित हिंसा) का उदाहरण क्यों है?

...................................................................................................

...................................................................................................

...................................................................................................

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

## 20.5 साम्प्रदायिक हिंसा

'साम्प्रदायिक हिंसा' शब्द का सर्वसामान्य अर्थ धार्मिक पहचान के आधार पर लोगों समूह के विरुद्ध अपराध करना है। भारत में साम्प्रदायिक हिंसा के संदर्भों में जेंडर–आधारित हिंसा के लिए व्यक्तियों को जवाबदेय ठहराने की ऐतिहासिक उपेक्षा की जाती रही है। वर्ष 1947 में, ब्रिटिश भारत के विभाजन, जिसने भारत और पाकिस्तान के दो स्वतंत्र राज्यों को जन्म दिया, के बाद अति हिंसा, जन प्रवसन तथा नृजातीय हत्या की घटनाएं घटी। इसके फलस्वरूप धार्मिक क्रोध तथा हिंसा की जो लहर उठी उससे लगभग 2 मिलियन हिन्दु, मुस्लमान तथा सिक्ख मृत्यु को प्राप्त हुए। अनुमान है कि 12 से 15 मि. लोगों का दो देशों के बीच बलपूर्वक हस्तांतरण हुआ था। हजारों स्त्रियों का बलात्कार हुआ था, बहुतों को यातना दी गई थी, अपहरण कर ली गई थी और लूट ली गई थी। कुल मिलाकर, इसने सम्पूर्ण जनसंख्या को, तमाम जगहों पर व्याप्त अस्तव्यस्ता तथा अस्पष्टता के साथ आतंकित कर दिया था। स्त्रियों के विरुद्ध जेंडर–आधारित हिंसा, हालांकि वैयक्तिक प्रकृति की थी, व्यापक जन पैमाने की थी। अपराधियों तथा ऐसे लोगों के विरुद्ध कोई मुकदमा नहीं चलाया गया और अधिकांश मामलों के जैसे ही यहां भी अपराधी, दंड के बगैर बच कर निकल गए थे। स्त्रियों के विरुद्ध अपराधों के लिए न्याय असंभव हो गया क्योंकि बहुत से अपराधी सीमा पार थे, और उत्तरजीवित स्त्रियों की आवश्यकताओं को कम प्राथमिकता दी जाने लगी थी। स्वतंत्रता पाने की खुषी में, जेंडर–आधारित हिंसा के लिए न्याय को एक तरफ कर दिया गया था।

स्वतंत्रता उत्तरोतर काल में साम्प्रदायिक हिंसा की बहुत सी घटनएं देखने को मिली। आसाम में 1983 के नेल्ली हत्याकांड में, बंगाली बोलने वाले मुस्लिमों को लक्ष्य किया गया था और हजारों मारे गए थे, स्त्रियों पर पाशविक तरीकों से प्रहार किया गया। दिल्ली में 1984 में सिक्ख–विरोधी हत्याकांड के संदर्भ में भी स्त्रियों के विरुद्ध व्यापक मात्रा में अपराध किए गए थे, यह घटना पूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के बाद घटी थी। न्याय के लिए संघर्ष दो दशकों से भी आगे चला, परंतु बहुत कम न्याय दिलाया गया। सोलह वर्षों के बाद भी, जब वर्ष 2000 में नानावती आयोग नियुक्त किया गया, और यौन हिंसा पर पांच विशिष्ट शपथपत्र जमा कराए गए, तो यौन हिंसा के उत्तरजीवी न्याय की आशा कर रहे थे।

वर्श 1992 में, बाबरी मस्जिद को ध्वंस करने के बाद, मुम्बई और सूरत समेत, देश के बहुत से भागों में साम्प्रदायिक हिंसा फैल गई थी, जहाँ स्त्रियाँ विशिष्ट प्रकार की पाशविकताओं का शिकार बनी थी। 2002 के गुजरात हत्याकांड के दौरान, जेंडर–आधारित हिंसा तथा यौन हिंसा न केवल व्यापक रूप से फैली, परंतु उसने धार्मिक अल्पसंख्यकों के विरुद्ध घृणा तथा विनाश के जुटाव हेतु इंजन की भूमिका भी अदा की थी। वर्ष 2007 और 2008 में, ओड़ीसा में कंधामल में साम्प्रदायिक हमलों ने भी जेंडर–आधारित हिंसा के लिए स्त्रियों को लक्ष्य करने का उदाहरण प्रदर्शित किया। कैथोलिक सन्यासिनी – सिस्टर मीना का क्रोधोन्मादी भीड़ द्वारा सामूहिक बलात्कार और यौन उत्पीड़ित होने का अनुभव और पुलिस दर्शक बनी खड़ी हुई है – यह हमें साम्प्रदायिक संदर्भों में स्त्रियों के विरुद्ध प्रहारों की पाष्विकता का उदाहरण प्रस्तुत करता है और साथ ही लोक अधिकारियों की सहापराधिता का भी।

न्याय के लिए महिला उत्तरजीवियों की लड़ाई की जब कि कुछ सफल कहानियाँ रही है जैसे कि गुजरात से बिलकीस बानो की, परन्तु सार्वजनिक रूप से बोलने वाली प्रत्येक उत्तरजीवी महिला पर बोला, सैंकड़ों और हजारों और होती हैं जो चुपचाप कष्ट भोगती है और जो अपने पर की गई हिंसा के लिए न्याय मांगने में अक्षम रहती हैं। अपराधियों

पर मुकदमा चलाने के लिए राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव, व्यापक जन अपराधों के साथ जूझने के लिए कानूनों तथा पद्धतियों की अपर्याप्तता, ऐसे अपराधों की पक्षपातरहित जांच–पड़ताल और ऐसे अपराधों पर मुकदमें अभाव तथा पीड़िताओं के अनुभव तथा जरूरतों के प्रति संवेदनशीलता का अभाव आदि कुछ रूकावटें हैं जो साम्प्रदायिक हिंसा के संदर्भों में स्त्रियों को न्याय तक नहीं पहुँचने देते हैं।

साम्प्रदायिक संदर्भों में जेंडर–आधारित हिंसा जो भारत मे हाल ही में प्रलेखित की गई है, यौन हिंसा के सार्वजनिक तथा जनव्यापी कृत्यों को समाविष्ट करती है जैसे कि वक्षों तथा गर्भाशय काट डालना, बलात् नग्नता, स्त्रियों के कपड़े उतार कर पैरेड करवाना, बलपूर्वक गर्भधारण, स्त्रियों की उपस्थिति में जनन अंगों का प्रदर्शन और स्त्रियों के जननीय अंगों की विकृति। इस पृष्ठभूमि में, मौजूदा अपराधिक कानून को अत्यन्त अपर्याप्त पाया गया क्योंकि यह साम्प्रदायिक स्थितियों में स्त्रियों पर की गई विभिन्न प्रकार की हिंसा को अनुभव नहीं कर पाता है।

इसके अतिरिक्त, साम्प्रदायिक हिंसा की स्थितियों में, पुलिस स्टेशनों (एफ.आई.आर. दायर करने), सरकारी अस्पतालों (चिकित्सीय परीक्षण के लिए) तक स्त्रियों की गम्यता और कानूनी कार्यवाई करने का विश्वास/योग्यता हिंसा के समय के दौरान, और हिंसा के उत्तरजीवियों के लिए सुरक्षित तथा अहिंसात्मक वातावरण के वापस मुहैया हो जाने तक काफी कम हो जाती है। अतः, उपयुक्त साक्ष्यनीय तथा क्रियाविधिक मानक अत्यावश्यक हैं, और जेंडर संवेदनशील ढंग से जांच–पड़ताल करना भी।

वर्ष 2004 में सर्वसामान्य न्यूनतम कार्यक्रम में उसके आश्वासन कि साम्प्रदायिक हिंसा पर मॉडल कानून बनाया जाएगा के अनुसरण में युनाइटेड प्रोग्रसिव अलायेन्स (यूपीए) सरकार ने जुलाई 2005 में साम्प्रदायिक हिंसा (प्रतिबंध) विधेयक के दो संस्करण पारित किए थे, जिसे भारी आलोचना का सामना करना पड़ा और यह विधेयक संशोधित करके संसद में साम्प्रदायिक हिंसा (निवारण, नियंत्रण एवं उत्पीड़ितों का पुर्नवास) विधेयक के रूप में दिसम्बर, 2005 में फिर से पारित किया गया। कड़ी सार्वजनिक आलोचना के कारण, विधेयक का दूसरा संस्करण गृह कार्यकलाप मंत्रालय की संसदीय स्थायी समिति को विचार करने हेतु भेजा गया। समिति ने अपनी अनुषंसाएं सरकार को दे दी, जो फिर संसद में पेश की गई। इसी बीच, कई नगरों में सिविल सोसाइटी समूहों ने कई सार्वजनिक सभाएं आयोजित की और विधेयक को उसके वर्तमान रूप में अस्वीकार कर दिया। जनवरी 2008 में, प्रधानमंत्री कार्यालय ने कुछ सिविल सोसाइटी समूहों जो विधेयक के साथ घनिष्ट रूप से जुड़े थे से कानून के नवीन मसौदे के लिए निवेदन किया, जो फिर 24 जनवरी 2008 को सरकार को पेश किया गया था। सरकार को साम्प्रदायिक हिंसा पर नवीन मसौदे को अभी सूत्रित और संसद में पेश करना है।

सरकारी मसौदों के विरुद्ध एक मुख्य आलोचना यह है कि वे साम्प्रदायिक संदर्भों में स्त्रियों के विरुद्ध यौन तथा जेंडर–आधारित हिंसा को अदृश्य बना देते हैं, और ऐसा वो इसलिए करते हैं क्योंकि वो साम्प्रदायिक हिंसा के संदर्भ में स्त्रियों की न्याय तक कमजोर पहुँच में योगदान देने वाली मुख्य रूकावटों को स्वीकारने, संबोधित करने या उसका उपचार करने में विफल रहते हैं। सिविल सोसाइटी के सदस्यों द्वारा यह भी कहा गया कि इस बात के बावजूद कि जेंडर–आधारित हिंसा ने हाल ही के समय में धार्मिक अल्पसंख्यकों के विरुद्ध घृणा तथा विनाश जुटाने में इंजिन की मूलभूत भूमिका निभाई है विधेयक ने जेंडर–आधारित हिंसा के साथ सामान्य रूप से, और यौन हिंसा के साथ विशेष रूप से रुखा तथा नैमित्तिक ढंग का व्यवहार किया है।

## ckWDl 20-3 % dsl LVMh 3 % fcYdhl ;dwc jlwy dk xSx ;k lefgd jsi

बिल्कीस यकूब रसूल उर्फ बिल्कीस बानो, गुजरात के दाहोद जिले में राधिकापुर गाँव की रहने वाली थी, वो मार्च 2002 में 19 वर्ष की थी और उसे पांच महिनों का गर्भ था। 28 फरवरी 2002 को जब क्रोधोन्मादी भीड़ ने गाँव पर हमला किया तो बिल्कीस तथा 16 अन्य – उसकी माँ, बहने तथा तीन वर्षीय पुत्री अपने गाँव से भाग निकले। बचने की आशा से वे लोग खेतों में छिप गए, परंतु अगली सुबह तलवारें तथा हंसिया उठाए 20–30 पुरुषों की भीड़ ने उन पर हमला किया। बिल्कीस, उसकी माँ तथा बहनों का सामूहिक बलात्कार हुआ। उसकी बेटी को जमीन पर पटक दिया गया था और उसकी मृत्यु हो गई। गाँववासियों जिन्हें वह अपने बचपन से जानती थी द्वारा उसका सामूहिक बलात्कार किया गया। इस हिंसा के दौरान उसके परिवार के 14 सदस्यों की मृत्यु हो गई। वह यह बहाना करके पड़ी रही कि वह मर चुकी है और बच गई। फिर होम गार्ड की सहायता के साथ और अपने छः वर्शीय भतीजे और तीन वर्ष की आयु के लड़के जो इस प्रहार से बच गए थे के साथ बिल्कीस हिम्मत के साथ परंतु आघातकारी स्थिति में थाने में शिकायत दर्ज कराने के लिए गई, और उसने अपने को ढकने के लिए रास्ते में एक आदिवासी महिला से कपड़े उधार लिए।

उसने पुलिस के पास शिकायत दर्ज की, 14 पुरुषों पर बलात्कार, हत्या तथा दंगे का आरोप लगाया। शुरू में, उसे यह कहानी वापस लेने के लिए बाध्य किया गया। जब उसने इंकार कर दिया तो पुलिस ने बिल्कीस की शिकायत पर विश्वास करने से मना करते हुए जांच पड़ताल में विलम्ब किया। उनकी ढिलाई के कारण अंततः आरोपी जमानत पाने में सफल हो गए। तदन्तर गुजरात सरकार ने तकनीकी कारण बताते हुए केस रफा–दफा कर दिया।

विभिन्न सक्रिय कार्यकर्ताओं, संगठनों और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की सहायता के साथ, बिल्कीस ने केन्द्रीय अनुसंधान ब्यूरो द्वारा जांच की मांग करते हुए, सर्वोच्च न्यायालय के पास याचिका दायर की। गुजरात में एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की रिपोर्ट पर जिसने स्थानीय पुलिस की लापरवाही के कई कृत्यों की ओर संकेत किया के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय ने सी.बी.आई. को इस मामले की जांच–पड़ताल के लिए निर्देश दिए। सी.बी.आई. ने पड़ताल से पाया कि स्थानीय पुलिस कर्मियों ने उसके कुछ रिश्तेदारों के शरीरों को नमक लगाकर ताकि शीघ्र दफना दिया था ताकि शीघ्र सड़ जाए। इसके अतिरिक्त, पोस्ट–मार्टम के पश्चात, कुछ देहों से सिर काट दिए गए थे, ताकि उनकी पहचान न की जा सके। एजेंसी ने कंकालों का शवोत्खनन किया और उन्हें परीक्षण के लिए भेज दिया। तदन्तर, सी.बी.आई. द्वारा 20 व्यक्तियों पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें आरोप पत्र भेजा गया, इन जांच पड़ताल के साथ दखलान्दाजी करने और दोषियों का बचाव करने के लिए छः पुलिस कर्मचारी और झूठी गवाही देने के लिए दो डाक्टर भी शामिल थे। इसी बीच, जाहिरा शेख से जुड़ा बेस्ट बेकरी केस से संकेत पाने पर, बिल्कीस ने इस केस को गुजरात से बाहर हस्तांतरित कराने की चेष्टा की और कहा कि यहाँ न्यायपूर्ण कार्रवाई के लिए स्थितियां उपयुक्त नहीं है। अगस्त 2003 में, सर्वोच्च न्यायालय ने उसका केस महाराष्ट्र हस्तांतरित कर दिया, क्योंकि उसे अंदेशा था कि यदि गुजरात न्यायालयों में ही कार्रवाई जारी रखी जाती है तो गवाहों को क्षति पहुँचाई जा सकती है। यह फैसला बिल्किस द्वारा न्यायालय को यह प्रमाण कर देने पर आधारित था कि उसके रिश्तेदार तथा अन्य साक्ष्यों को अपराधियों तथा उनके सहायकों द्वारा धमकी दी गई थी।

जनवरी 2008 में पुलिस अधिकारी, जिसने झूठी एफ.आई.आर. दर्ज की थी, समेत 12 व्यक्तियों को मुम्बई में सत्र न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया। मुम्बई में केस के हस्तांतरित हो जाने के तुरंत बाद, बिल्किस ने बयान में कहा कि आज, आशा के बोध के साथ मैं उदास भी हूँ क्योंकि मैं जानती हूँ 2002 के गुजरात हत्याकांड में जिस ढंग से मेरे समुदाय की बहुत सी स्त्रियों के विरुद्ध यौन हिंसा को व्यवस्थित रूप से उपयोग किया गया था। मैं अकेली नहीं हूँ। उधर बहुत सी स्त्रियाँ हैं जिनके नाम और चेहरे मैं नहीं जानती हूँ परंतु जिनका दर्द मैं महसूस कर सकती हूँ''।

बिल्किस के मामले में न्याय पाने में कई कारकों ने योगदान दिया, अविश्वासनीय साहस और निष्चय जो बिल्कीस में था, और उसके पति, रिश्तेदारों, मित्रों, सक्रिय कार्यकर्ता और संगठनों से प्राप्त होने वाली सतत् सहायता, और कैमरों के समक्ष मुकदमा जारी रखने (बंद दरवाजों के पीछे) का फैसला जिसने गवाहों में विश्वास उत्पन्न किया और सी.बी.आई. तथा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सकारात्मक हस्तक्षेप भी इसमें शामिल है।

### cksèk iz'u 3

uksV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।
ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. उत्तरजीवित लोगों के लिए न्याय पाने की कोशिश करना और साम्प्रदायिक हिंसा के संदर्भ में जेंडर–आधारित हिंसा के लिए अपराधियों को जवाबदेय बनाना इतना कठिन क्यों है?

   ........................................................................................................

   ........................................................................................................

   ........................................................................................................

2. साम्प्रदायिक हिंसा (निवारक, नियंत्रण तथा पीड़ितों का पुनर्वास) बिल 2005 की जेंडर–आधारित हिंसा के विशेष संदर्भ में क्या कमियाँ हैं?

   ........................................................................................................

   ........................................................................................................

   ........................................................................................................

## 20-6 lqj{kk cyksa }kjk tsaMj vkèkkfjr fgalk

दक्षिण एशिया का इतिहास आंतरिक संघर्षों से भरा पड़ा है, जिसमें स्त्रियाँ प्रायः मात्र आकस्मिक शिकार नहीं होती हैं। वर्ष 1971 में बंगलादेशी स्वतंत्रता संघर्ष को विद्यार्थियों, विद्वानों तथा स्त्रियों का संहार करके पाकिस्तान सेनाओं द्वारा कूचल देने की चेष्टा की गई थी। स्त्रियों को नियमित बर्बरता का लक्ष्य बनाया गया और फलस्वरूप 200000–400000 बंगलादेशी स्त्रियों का जन बलात्कार हुआ। रिपोर्टों के अनुसार बलात्कार हुई स्त्रियों में 80% मुस्लिम थी, परंतु हिन्दू तथा ईसाई स्त्रियों को भी नहीं छोड़ा गया था। नेपाल में, सरकार तथा नेपाल की साम्यवादी पार्टी के बीच एक दशक लम्बे सशस्त्र संघर्ष (माओवादी) यौन हिंसा समेत मानवाधिकारों के गंभीर दुरूपयोग के लिए दंड मुक्ति के स्थिर नमूनों का प्रतिनिधिक था। अफगानिस्तान में, राजनीतिक महापरिवर्तन की हाल ही की सभी अवस्थाओं में स्त्रियों के विरुद्ध व्यापक यौन हिंसा तथा नियमित बलात्कार

अभियान विशेष बात रही – 1979 और 1989 के बीच युद्ध, सोवियतों के पीछे हट जाने के बाद विभिन्न अफगान सिविल मुजेहीद्दीन युद्ध नेताओं के बीच परस्पर लड़ाइयाँ, 1990 के दशक के प्रारम्भ में अफगानिस्तान के सिविल युद्धकाल और तदन्तर स्त्रियों पर अत्याचारी नीतियों के साथ तालिबान शासन के अंतर्गत। श्रीलंका में, सरकारी बलों (तमिल जनसंख्या को दबाने तथा लिट्टे से बदला लेने के लिए) और लिट्टे दोनों के द्वारा संघर्ष में बलात्कार को युद्ध के औजार के रूप में उपयोग किया गया। ऐसी सूचना मिली है कि बहुत सी स्त्रियाँ यौन हिंसा से अपनी सुरक्षा करने के लिए लिट्टे में भर्ती हो गई थीं। इसके अतिरिक्त, श्रीलंका में 1987 के बाद से जब तक सैनिक वर्ष 1990 में हटा नहीं लिए गए थे स्त्रियों का बलात्कार करने में इंडियन पीस कीपिंग फोर्स (IPKF) की भूमिका को भूलाया नहीं जा सकता है। पाकिस्तान में बलोचीस (जनजातीय लड़ाकू) और सुरक्षा/पैरा–सैनिक बलों के बीच लम्बी चल रही हिंसा में, बलोचियों की राजनीतिक मांगों को सरकार द्वारा भिन्न युक्तियों जिनमें स्त्रियों के विरुद्ध यौन हिंसा भी शामिल है हिंसात्मक रूप से कुचल दिया गया था। डाक्टर शाज़िया खालिद का बर्बरतापूर्वक बलात्कार ऐसा ही एक उदाहरण है। बर्मा में, 1990 के दशक से, बर्मी सैनिक शासन ने बलात्कार को लाइसेंस दे दिया था, जैसा कि चिन अल्पसंख्यक स्त्रियों के विरुद्ध, केन्द्रीय शान राज्य में और कैरेन राज्य में स्त्रियों के विरुद्ध, मिलिट्री द्वारा नियमित यौन हिंसा द्वारा इंगित होता है। बर्मी सैनिक शासन द्वारा यौन गुलामी तथा बलात् श्रम के लिए स्त्रियों को भर्ती करने की प्रथा का सर्वत्र प्रचलन है।

पुलिस, सशस्त्र बलों तथा पैरा–मिलिट्री बलों समेत सुरक्षा बलों द्वारा जेंडर–आधारित हिंसा में भारत वंचित नहीं है। जम्मू एवं काश्मीर, तथा उत्तर–पूर्वी राज्यों में विद्रोह से निपटने के लिए सशस्त्र सेना भारी संख्या में तैनात है। निर्धन लोग, जिनकी कृषिक भूमि को 'विकास' के नाम पर राज्य द्वारा अधिग्रहण करने की चेष्टा की जाती है ... और धनी वर्ग और शक्तिशाली निगम, जिन्हें पुलिस का समर्थन प्राप्त है, जो औद्योगिक तथा खदान उद्देश्यों के लिए ऐसी भूमि को बिना अनुमति के अपने लिए उपयोग कर लेती है, के बीच हिंसात्मक मुकाबले होते रहे हैं। सिंगूर और नंदीग्राम (प.बंगाल) और कलिंग नगर (ओड़िसा) हिंसा के कुछ स्थल हैं। इसके अतिरिक्त छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश और 'रेड कॉरीडोर' के अन्य राज्यों के आदिवासी प्रबल क्षेत्रों में नक्सल हिंसा का प्रतिरोध करने के उद्देश्य से सशस्त्र हमले होते रहते हैं। छत्तीसगढ़ में, सल्वा जुड्म – राज्य समर्थित स्थानीय सेना जो नक्सलों का प्रतिरोध करने के उद्देश्य से बनाई गई थी, के बहुत से सदस्यों को राज्य पुलिस द्वारा विशेष पुलिस अधिकारी (एस.पी.ओ.स) के रूप में भाड़े में रखे जाते हैं और सशस्त्र किए जाते हैं।

यद्यपि यह संदर्भ अलग–अलग प्रतीत होते हैं, उनमें दो आम बाते हैं : (अ) भारत के अपने लोगों के कुछ वर्ग के विरुद्ध राज्य की पहल द्वारा तथा राज्य समर्थित हिंसा का उपयोग; और (ब) स्त्रियों पर लक्ष्यित यौन प्रहार जो अपवाद के बजाय नियम के रूप में ज्यादा होते थे। एक ओर, राज्य जो भौतिक, वित्तीय तथा सैनिक शक्ति तथा कानून की शक्ति के साथ सज्ज है के विरुद्ध स्त्रियों पर तरस खाया जाता है, और दूसरी ओर, सशस्त्र विपक्षी समूहों के विरुद्ध स्त्रियों पर दया की जाती है इन समूहों विभिन्न मांगे हैं – राज्य के अंदर वृहदतर स्वायतता से लेकर संबंध विच्छेद करना और स्वतंत्र राज्य का सृजन प्रायः स्त्रियों पर संघर्षरत दोनों दलों का प्रभाव पड़ता है। तथापि, स्त्रियाँ इस धारण कि निष्क्रिय और असहाय पीड़िता है दूर, स्त्रियाँ और उत्तरजीवित रही हैं और सक्रिय एजेंट रही और लचीलापन प्रदर्शित किया और न्याय तथा जवाबदेयता की मांग की, और संघर्ष के दोनों पक्षों के साथ शांति के लिए संधि वार्ता की।

जम्मु एवं काश्मीर का राज्य तथा उत्तर पूर्वी राज्यों (विशेष रूप से मणिपुर, नागालैंड, आसाम और त्रिपुरा) में अब कई दशकों के लिए राजनीतिक विद्रोह की आवाजों का

हिंसात्मक राजकीय दमन देखने को मिला। इन दोनों स्थितियों में, सुरक्षा बलों तथा सशस्त्र विरोधी समूहों ने नागरिक महिलाओं को जेंडर–आधारित हिंसा का शिकार बनाया। मणिपुर में 10 जुलाई 2004 को थागजम मनोरमा का बलात्कार, यातना तथा हिरासत में हत्या, उसे आसाम राइफल्स (पैरा सैनिक बल) के सदस्यों के द्वारा वैजीना में गोली मार दी गई थी – यह दंडमुक्तिलन का उदाहरण है सुरक्षा बल जिसके साथ उत्तर–पूर्वी राज्यों में काम करते हैं यह अपवाद नहीं था परंतु उल्लंघनों के पैटर्न का हिस्सा था। वर्ष 1989 में मणिपुर में ओइनम के गाँव में स्त्रियों पर अत्याचार तथा यौन दुर्व्यवहार, और वर्ष 1988 में उजेन मैदान (त्रिपुरा) में सुरक्षा बलों द्वारा स्त्रियों का सामूहिक बलात्कार उत्तर पूर्वी राज्यों में व्यापक रूप से जानी गई कुछ घटनाएं हैं। मई 2009 में, शोपियन, काश्मीर में – आसिया तथा नीलोफर – दो युवा स्त्रियों का पुलिस या सुरक्षा बलों द्वारा, अपहरण, बलात्कार और हत्याएं अपराधियों पर पर्दा डालने में पुलिस की सांठगांठ को उजागर करती है। जांच–पड़ताल की अवस्था के दौरान, पुलिस ने जानबूझ कर साक्ष्य को नष्ट/हेरफेर/धुंधला किया, जिससे जम्मु एवं काश्मीर उच्च न्यायालय यह गौर करने पर मजबूर हो गया कि या तो संबंधित पुलिस कर्मी संलग्न थे या अपराधी को जानते थे।

हाल ही के वर्षों में, भारत में नक्सल हिंसा में वृद्धि देखने को मिली है। एक रिपोर्ट के अनुसार, नवम्बर 2007 तक, नक्सल हिंसा की 1385 घटनाएं दर्ज की गई थीं जिसमें 418 नागरिक तथा 214 सुरक्षा कर्मी मारे गए थे। वर्ष 2008 में, नक्सल–प्रभावित राज्यों में हिंसा की कोटि, जम्मु व काश्मीर या उत्तर–पूर्वी राज्यों में जो देखी गई थी उससे ज्यादा दर्ज की गई थी। जम्मु व काश्मीर में वर्ष 2007 में जब कि आतंकवादी–संबंधित घटनाएं 1092 दर्ज की गई थी और 271 मृत्यु की घटनाएं थी, उत्तर पूर्वी राज्यों में तुलनात्मक रूप से ज्यादा हिंसा पाई गई थी, वहाँ 15 नवम्बर 2007 तक 1316 हिंसात्मक घटनाएं तथा 501 मृत्यु दर्ज की गई थी।

जबकि नक्सलियों तथा माओवादियों द्वारा हिंसा देश के बहुत से राज्यों के लिए गंभीर खतरा है, वैसे ही राज्य–प्रत्याभूत निजी सेना जिसे सल्वा जुडूम कहा जाता है और जो छत्तीसगढ़ के राज्य में नागरिक जनता पर हिंसा का कहर ढह रही है का मुद्दा है। पुलिस और सुरक्षा बलों, सल्व जुडूम तथा नकसलियों ने स्त्रियों और लड़कियों पर व्यापक लैंगिक हिंसा की इसमें सुरक्षा बलों द्वारा अपहरण, सामूहिक बलात्कार, अंग विकृति, यातना और गैर कानूनी नजरबंदी समाविष्ट है।

### ckDl 20-4 % dsl LVMh 4 % Fkkxte euksjek dk cykRdkj] vR;kpkj vkSj fgjklr esa gR;k

10 जुलाई 2004 को जो थगमजम मनोरमा प्रतिशिद्ध पीपल्स लिबरेशन आर्मी, राज्य में कार्य कर रहा भूमिगत आउट फिट (outfit) की सक्रिय कार्यकर्ता थी को पूछताछ के लिए मध्यरात्रि को आसाम राइफल्स, पैरा सैनिक बल के आसाम राइफल्स के एक दल द्वारा उठा लिया गया। उसके परिवार के सदस्यों ने उसकी आंखों पर पट्टी बांध ने तथा उसके हाथ पांव बांधने के पश्चात उसे घर के एक कोने में बर्बरतापूर्वक प्रहार खाते हुए देखा। सुरक्षा कर्मियों ने परिवार को आष्वासन दिया कि मनोरमा को अगली सुबह समीप के पुलिस थाने को सौंप दिया जाएगा। फिर भी, अगली सुबह, इससे पहले कि उसका परिवार पुलिस के पास पहुँचे, खबर मिली कि मनोरमा का शरीर, यातना के बहुत चिह्नों और गोली के चिह्नों के साथ, गाँव में सड़क किनारे पड़ा मिला है। पॉस्ट मॉर्टम रिपोर्ट से पता चला कि उसकी हत्या करने के पूर्व उसका बलात्कार किया गया था।

आसाम राइफल्स ने दृढ़तापूर्वक कहा कि वह अवैध पीपल्स लिबरेशन आर्मी से जुड़ी थी और आग लगाने के काम की विशेषज्ञ थी। उसने दावा किया कि पूछताछ के दौरान, उसने पी.एल.ए. के साथ अपने संबंधों को स्वीकार किया था और जवानों को विद्रोहियों के अड्डे पर ले जाने के लिए स्वीकृति दी थी। रास्ते में, उसे अपने को निवृत करने के लिए स्वतंत्रता दी गई। उसने इस अवसर को भाग जाने में उपयोग किया और जवानों को उस पर गोली चलाने के लिए बाध्य किया।

आसाम राइफल्स की इस कहानी को किसी ने नहीं माना। एक कारण यह है कि यह उसके शरीर पर जो यातना के चिह्न थे उसे स्पष्ट नहीं करती थी और उसे सामने से गोली मारी गई थी, पीछे से नहीं। ज्यादा महत्वपूर्ण बात है कि डॉ. क्ष. मंगलम, जिन्होंने इस मामले में दूसरा पॉस्ट मार्टम (शव परीक्षा) किया था, ने सरकारी आयोग के समक्ष सिद्ध किया कि मनोरमा को उसके जननांगों में गोली मारी गई थी और गोलियाँ उसकी योनि में फंसी थी।

मनोरमा को यातना, उसका बलात्कार तथा हत्या ने मणिपुर में तथा उसके बाहर विषाल जन विद्रोह को जन्म दिया। पुरुष, स्त्रियों, स्कूल के बच्चों, मानवाधिकार तथा महिला समूहों समेत हजारों नागरिक सड़कों पर उतर आए थे और घृणात्मक अपराधों के लिए जवाबदेयता और सशस्त्र बल (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम (ए.एफ.एस.पी.ए.) को भंग करने की मांग कर रहे थे। 15 जुलाई 2004 को, मणिपुर के मीरा पैबी महिला आंदोलन की बहुत सी बुजुर्ग महिलाओं ने और कांगला दुर्ग (आसाम राइफल्स का उस समय का मुख्य कार्यालय) के सामने अपने कपड़े उतार डाले और झंडा उठाकर चली जिस पर लिखा था ''भारतीय सेना सूचक है – हमारा बलात्कार करो''। मीरा पैबी की महिलाओं के द्वारा उठाया गया चरम सीमा का कदम स्त्रियों पर जेंडर–आधारित हिंसा की बार–बार की घटनाओं के कारण उनमें निराशा तथा हताषा एवं कुंठा और उनके बीच असुरक्षा की बढ़ती हुई भावना का सूचक है।

इन शक्तिशाली विद्रोहों के जबाव में, सरकार ने इस घटना की जांच के लिए जांच आयोग स्थापित किया। फिर भी अब तक कोई सकारात्मक परिणाम नहीं निकला है। इसने ए.एफ.एस.पी.ए. की समीक्षा करने के लिए न्यायाधीश जीवन रेड्डी की अध्यक्षता में समिति भी गठित की। उनकी रिपोर्ट जून 2005 में जमा की गई थी, जिसने क्रूर कानूनों को निरस्त/रद्द करने की सिफारिश की। फिर भी, समिति जिनके सदस्यों का सरकार ने ही चयन किया था की सिफारिशों के बावजूद कानून को रद्द करने में सरकार निरन्तर विफल हुई है।

### ckDl 20-5 % :Ikj[kk % bjke 'kfeyk

इरोम शर्मिला प्रतीक व्यक्तित्व और दशकों के राजकीय दमन के विरुद्ध मणिपुर के लोगों के कष्ट तथा प्रतिस्कन्दन (resilience) का प्रतीक है। शर्मिला, युवा कवियत्री, ने 2 नवम्बर 2000 को अपना अनिश्चितकालीन उपवास प्रारम्भ किया। यह उपवास सेना द्वारा मालोम हत्याकांड के विरोध में किया गया था, जिसमें मणिपुर गाँव में बहुत से नागरिक मारे गए थे। उसने सशस्त्र सेना (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम (AFSPA) को रद्द करने की मांग की जो क्रूर अधिनियम है जो राजकीय एजेंसियों को मात्र संदेह पर मारने के लिए गोली चलाने के अधिकार समेत बाधारहित शक्तियाँ देता है और जिसका प्रायः निर्दोश नागरिकों के विरुद्ध दुरुपयोग किया जाता है।

पिछले 9 वर्षों से, वह कारावास में बंदी है और उसे रबर की पाइप के साथ नाक के जरिए बलात विटामिनों, खनिजों, मृदु विरेचकों, प्रोटीन अनुपूरकों और लेन्टिल सूप दिए जाते हैं। अन्य भूख हड़ताल कर्ताओं के विपरीत, उसने इस पूरे दौरान पानी की एक बूंद को अपने होठों के पार नहीं होने दिया है। वे अपने दांत रूई के साथ साफ करती है पानी के साथ नहीं। उसे अपने ''अपराध'' के लिए भिन्न कानूनों के अंतर्गत निरंतर बंदी रखा जाता है। समय–समय पर न्यायालय उसे छोड़ देते हैं, और पुनः उसे आत्महत्या करने तथा अन्य ऐसे आरोपों के बदौलत गिरफ्तार कर लिया जाता है। अस्पताल में भी, उसे बिल्कुल कैदी की तरह से रखा जाता है क्योंकि लोग उससे स्वतंत्रता से नहीं मिल सकते हैं। उन्हें सरकारी एजेंसियों से अनुमति लेनी पड़ती है, जिसमें कई दिन लग सकते हैं। वास्तव में प्रयास यह होता है कि उसकी भावना को कमजोर किया जाए बजाय उसके द्वारा अभिव्यक्त चिंताओं पर गंभीर रूप से विचार करने के।

इन रियायतों के अंश के रूप में ए.एफ.एस.पी.ए. को शहरी मणिपुर के कुछ भागों के लिए रद्द कर दिया गया है। ए.एफ.एस.पी.ए. के विरुद्ध सक्रिय कार्यकर्ताओं ने इन रियायतों को अपर्याप्त मानते हुए अस्वीकार कर दिया और पूर्ण निरस्तता की मांग की है। 2 दिसम्बर 2006 को आइरोम शर्मिला ने प्रधान मंत्री मनमोहन सिंह के ए.एफ.एस.पी.ए. को विरल कर देने के आष्वासन को अस्वीकार कर दिया और कानून के पूर्णत्या रद्द होने तक अपना उपवास जारी रखने के प्रयोजन की घोषणा की।

7 मार्च 2009 को अंतरराष्ट्रीय महिला दिवस के उपलक्ष्य में उसे नयायिक हिरासत से मुक्त कर दिया था। शर्मिला का विद्रोह, अहिंसा तथा सत्याग्रह के गांधीवादी आदर्शों पर अपने जोर के कारण अद्वितीय है। यद्यपि, विश्व के विशाल लोकतंत्र में उसके विद्रोह को प्रतिदिन भुला दिया जाता है, शर्मिला कोटिबद्ध है और कहती है : ''जब तक कि वो ए.एफ.एस.पी.ए. को समाप्त नहीं कर देते हैं, मैं अपना उपवास रखना कभी बंद नहीं करूंगी''।

## ckèk i:'u 4

ukV : i) प्रश्नों के उत्तर नीचे दिए गए खाली स्थान में लिखिए।

ii) अपने उत्तर की तुलना इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से कीजिए।

1. दक्षिण एशिया के कौन से देशों में सशस्त्र संघर्ष की स्थितियों के दौरान जेंडर–आधारित हिंसा पाई गई है?

   ..........................................................................................................

   ..........................................................................................................

   ..........................................................................................................

2. अभावग्रस्त समुदायों की महिलाओं को ज्यादा जेंडर–आधारित हिंसा का सामना क्यों करना पड़ता है?

   ..........................................................................................................

   ..........................................................................................................

   ..........................................................................................................

## 20-7 Mk;u ryk'k

भारत में डायन का करार दिए गए व्यक्तियों को तलाशना ऐसी परिघटना है जो पितृसत्ता द्वारा अत्याचार के मिश्रण जाति द्वारा अधीनस्थता और वर्ग द्वारा दमन को प्रकट करती है, जो समाजार्थिक कारकों द्वारा अतिगंभीर बन जाती है या बिगड़ जाती है। डायन को तलाशने का बहाना कुछ भी हो सकता है जैसे कि खराब फसल अथवा परिवार में मृत्यु/बीमारी। फिर भी, शोध अध्ययन इस तथ्य को उजागर करते हैं कि किषोर लड़कियों तथा स्त्रियों को सामाजिक मानकों का उल्लंघन करने से रोकना, भूमि हथियाना, सम्पति विवाद और पितृसत्तात्मक स्वार्थी हित इस अपराध के मुख्य कारण हैं। यह अपराध लोगों की धार्मिक तथा अंधविश्वासी धारणाओं का शोषण करके किया जाता है। लड़की या स्त्री को डायन करार देने को भी उन स्थितियों में नियंत्रण के अस्त्र के रूप में भी उपयोग किया जाता है जहाँ वे यौन आग्रह को अस्वीकार कर देती है, सामाजिक सीढ़ी चढ़ने का प्रयास करती है या अपने अधिकारों पर दावा करती हैं क्योंकि उसे जाति, वर्ग और जेंडर पदानुक्रमों या स्थानीय सत्ता समीकरणों को बनाए रखने में खतरा समझा जाता है। हालांकि पारम्परिक रूप से, प्रौढ़ तथा एकल स्त्रियों को ही इस अपराध का लक्ष्य बनते देखा गया है, किशोर लड़कियों को, छोटी आयु में विवाह करने से और समाज में पारम्परिक भूमिकाएं निभाने से इंकार करने के लिए, और शिक्षा की गम्यता प्राप्त करने तथा गाँवों में कई भिन्न क्षमताओं में अध्यापिका, आंगनवाड़ी कार्यकर्त्ता और ग्राम सेविकाओं के रूप में कार्य करने की महत्वाकांक्षा करने के लिए, ज्यादा से ज्यादा लक्ष्य बनाया जा रहा है। दलित और आदिवासी महिलाएं जिन्होंने चुनाव लड़ने की हिम्मत की है और इस तरह से भूमि–सम्पन्न जाति के हिन्दुओं की राजनीतिक सत्ता को सीधे चुनौती दी डायने कही गई और उन पर प्रहार किया गया।

**fgalk dh O;kidrk dh lhek &** सरकारी आंकड़ों के अनुसार, भारत में 1987 और 2003 के बीच 2556 स्त्रियों को डायनों का नाम दिया गया और मार दिया गया था। वर्ष 2006 में, समाचार मीडिया रिपोर्ट्स के अनुसार, देश में डायन होने के संदेह पर लगभग 700 स्त्रियाँ मार दी गई थी। वर्ष 2006 में किए गए एक सर्वेक्षण ने दर्शाया कि झारखंड के 32,615 गाँवों में से 20,000 स्त्रियों को ''डायन'' समझा गया था और हजारों परिवार प्रभावित हुए थे। छत्तीसगढ़ में वर्ष 2005 से डायन खोजने के 300 से ज्यादा मामले और 100 से ज्यादा स्त्रियों की परिणामी मृत्यु के मामले दर्ज किए गए थे। यह सांख्यिकी जब कि व्यापकता की सीमा का संकेत देती है, यह अपराध, स्त्रियों के विरुद्ध बहुत से अन्य अपराधों के समान काफी अल्प सूचित किया जाता है क्योंकि इसे पीड़ित के समुदाय से स्वीकृति प्राप्त है। अतः अपराध की घोरता वास्तविकता में काफी ज्यादा हो सकती है।

**dkuwu dh i`frfØ;k &** बिहार प्रथम राज्य था जिसने कानून–डायन (विच) निरोध प्रथाएं अधिनियम (1999) पारित किया। झारखंड का राज्य बन जाने के बाद, राज्य ने 2001 में इस कानून को अंगीकार कर लिया। छत्तीसगढ़ तोन्ही अत्याचार (निवारण) अधिनियम वर्ष 2005 में अधिनियमित हुआ। राजस्थान में भी ऐसा ही कानून बनाने के प्रयत्न किए गए और देश के सभी राज्यों के लिए केन्द्रीय कानून बनाने के और अंगीकार किए जाने के इस विषय पर कानून बनाने का महत्व यह है कि यह संभावित अपराध कर्ताओं को संदेश भेज देता है कि राज्य ऐसे अपराधों को बर्दाष्त नहीं करेगा।

## 20-8 lkjka'k

हम शायद यह सोचें कि जेंडर–आधारित हिंसा शुद्ध आपराधिक कृत्य है, या वो मानवाधिकार/सिविल तथा राजनीतिक/सामाजिक न्याय का मुद्दा है। फिर भी,

जेंडर समता की चेष्टा जबकि मानवाधिकारों तथा जेंडर न्याय के ढांचे के अंदर सुदृढ़ता के साथ अंतःस्थापित है, यह ज्यादा से ज्यादा महसूस किया गया कि जी.बी.वी. धारणीय विकास को कई तरीकों से प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। जी.बी.वी. स्त्रियों की प्रजनन शक्ति, रुग्णता और मृत्यु दर को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता है – और संकेत करता है कि इसे स्त्रियों के स्वास्थ्य देखभाल पर वर्द्धित फोकस के साथ सार्वजनिक स्वास्थ्य मुद्दा समझा जाना चाहिए। कार्यस्थल पर जी.बी.वी. स्त्रियों को दुर्बल/या नाजुक बना देता है और कार्य में उनकी उत्पादकता तथा क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। हिंसा का भय स्त्रियों को भू एवं सम्पति पर अपने अधिकार का दावा करने से रोकता है। यह सुविदित तथ्य है कि लड़कियों की शिक्षा स्वयं लड़कियों के लिए (क्योंकि यह उनकी उपार्जन क्षमताओं, श्रम बाजार में अवसरों को बढ़ाता है, गर्भधारण से जुड़े स्वास्थ्य जोखिमों को कम करता है और उन्हें अपनी जिंदगियों पर वृहदत्तर नियन्त्रण प्रदान करता है) और साथ ही व्यापक समाज दोनों के लिए साम्प्रदायिक प्रतिफल लाती है। साम्प्रदायिक हिंसा, जाति–आधारित हिंसा और सशस्त्र संघर्ष के संदर्भों में जी.बी.वी. का घटना और जी.बी.वी. का भय बहुत सी स्त्रियों तथा लड़कियों को वापस अपने घरों की ओर धकेलते हैं, और उनके लिए शिक्षा को अगम्य बना देते हैं और इस तरह से गरीब स्त्रियों तथा लड़कियों को ज्यादा गरीब बनने के लिए विवश कर देता है।

जी.बी.वी. का सामना करने की रणनीतियाँ – चाहे कानूनी/सामाजिक कार्रवाई/राजनीतिक – सिर्फ तभी सफल होंगी जब वो पीड़िताओं/उत्तरजीवितों की आवश्यकताओं को पूरा करने के अतिरिक्त, हिंसा के मूल कारणों को संबोधित करते हैं। इसका संबंध पितृसत्तात्मक सोच जो कि स्त्रियों को समाज में अधीनस्थ प्रस्थिति/दर्जा प्रदान करती है, को चुनौती देने से है और समाज के सभी स्तरों पर पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच सत्ता संतुलनों का पुनः समझौता करने से है।

## बॉक्स 20.6 : अधिगम बिन्दुओं (लर्निंग पॉयंट) का सारांश

इस इकाई में सीखने की मुख्य बातें निम्नवत हैं :

1. जेंडर–आधारित हिंसा (GBV) के पद का उपयोग हिंसा, जो जेंडर के आधार पर व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों को लक्ष्य करती है को व्यक्तियों तथा सामूहिकताओं द्वारा अन्य प्रकार की हिंसा से अलग करने के लिए किया गया है। यह उन कृत्यों को स्वतंत्रता के मनमाने वंचन के खतरे को समाविष्ट करती है जिनका परिणाम शारीरिक, यौन संबंधी या मनोवैज्ञानिक क्षति का होता हैं या उनके होने की संभावना होती हैं।

2. जी.बी.वी. पुरुषों तथा स्त्रियों के बीच शक्ति की असमानता से उत्पन्न होता है, और स्त्रियों की अधीनस्थ प्रस्थिति में निहित है और समाजार्थिक, सांस्कृतिक तथा संरचनात्मक असमानताओं द्वारा बढ़ जाता है।

3. जी.बी.वी. के कई रूप विद्यमान हैं जैसे स्त्री जननांग विकृति, ''प्रतिष्ठा'' वध, घरेलु हिंसा, लिंग चयन, आदिवासियों के विरुद्ध हिंसा, जेंडर–आधारित हिंसा तथा सशस्त्र संघर्ष की स्थितियों में हिंसा के संदर्भों में जेंडर–आधारित हिंसा।

4. घरेलु हिंसा सर्वाधिक सर्वमान्य रूप की जेंडर–आधारित हिंसा है।

5. दलित महिलाएं अपनी जाति, वर्ग और जेंडर पहचानों के कारण पाष्विक यौन प्रहार का सामना करती हैं, और प्रायः वे हिंसा के आसान शिकार बनती हैं क्योंकि उनमें बदला लेने की शक्ति नहीं होती है।

6. भारत में साम्प्रदायिक हिंसा के संदर्भों में जेंडर–आधारित हिंसा के लिए व्यक्तियों को जवाबदेय बनाने में इतिहासिक लापरवाही रही, इसमें विभाजन के दौरान जेंडर–आधारित हिंसा भी समाविष्ट है। वर्ष 1983 का नेल्ली हत्या कांड, 1984 में दिल्ली सिक्ख विरोधी हत्याकांड, वर्ष 1992–93 में बाबरी मस्जिद उत्तरोतर विनाश और 2007 तथा 2008 में ओड़ीसा में साम्प्रदायिक आक्रमण इसके कुछ उदाहरण हैं।

7. सशस्त्र संघर्ष की स्थितियों में स्त्रियाँ एक और तो राज्य की कार्यवाहियों द्वारा, और दूसरी ओर सशस्त्र विद्रोह समूहों के द्वारा प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है।

8. सशस्त्र संघर्ष की स्थितियों में स्त्रियाँ निष्क्रिय तथा असहाय पीड़ित नहीं रही; वे उत्तरजीवित और समुत्थान शक्ति प्रदर्षित करते हुए सक्रिय एजेंट रही है और न्याय तथा जवाबदेयता की मांग की और संघर्ष के दोनों पक्षों के साथ शांति के लिए समझौता किया।

9. नागरिक समाज ने सशस्त्र बल (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम (AFSPA) को रद्द करनेकी दृढ़तापूर्वक मांग की जो कि क्रूर कानून है और जो राज्य को बेरोक शक्तियाँ प्रदान करता है। मात्र संदेह होने पर गोली मार देने का अधिकार भी प्राप्त है जिसका अक्सर निर्दोश नागरिकों के विरुद्ध दुरुपयोग किया जाता है।

10. जी.बी.वी. के बहुत से विकास संबंधी फलितार्थ होते हैं – गरीबी, स्वास्थ्य, शिक्षा जीविका, सम्पति अधिकारों की गम्यता और स्त्रियों की वित्तीय संसाधन पर।

11. जेंडर आधारित हिंसा का सामना करने की रणनीतियाँ केवल तभी सफल होंगी जब वो पितृसत्तात्मक मानसिकता के लिए कार्य करेंगी जो पीड़ितों/उत्तरजीवितों की जरूरतों को पूरा करने के अतिरिक्त, समाज में महिलाओं को अधीनस्थ प्रस्थिति प्रदान करती है।

## 20-9 'kCnkoyh

**euqLe`fr %** मनुस्मृति हिन्दू धर्म की धर्मशास्त्र ग्रंथीय परम्परा की सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथा प्रारम्भिक परिमाणात्मक कृति है। हिन्दू परम्परा के अनुसार, मनुस्मृति में ब्रह्मा के शब्द है। इन शब्दों का श्रेय अधिदैविक शक्तियों को देने से, यह कृति, इस क्षेत्र में पिछली कृतियों जो ज्यादा विद्ववतापूर्ण थीं के विरोध में धर्म पर कथन के रूप में प्राधिकृत रूप ग्रहण कर लेती हैं।

**u'kuy Økbe fjdkMZ~l C;wjks ,u-lh-vkj-ch- ¼jk"Vªh; vijkèk vfHkys[k C;wjks½ %** ये गृह मंत्रालय के प्रस्ताव संख्या 24013/13/85–जी.पी.ए. IV, 11 मार्च 1986 के तहत वर्ष 1986 में स्थापित किया गया था। अपराध तथा– राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर काम करने वाले अपराधियों – पर सूचना के शोधन गृह (क्लियरिंग हाऊस) के रूप में कार्य करना इसका उद्देश्य था ताकि अपराध को अपराधियों, अपराध सांख्यिकी के संकलन तथा प्रक्रियण और अंगुल छापों के साथ जोड़ने से जांचकत्ताओं कर्ता तथा दूसरों की मदद की जा सके, किया जा सके और राजकीय अपराध अभिलेख ब्यूरो का समन्वय मार्गदर्शन तथा सहायता की जा सके और पुलिस अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जा सके। अन्य उद्देश्य जिनको पिछले वर्षों के दौरान अनुपूरित किया गया हैं – कार्यक्षम सूचना प्रौद्योगिकी वातावरण तैयार करना है– नीतिगत रूपरेखा, दिशानिर्देश, वास्तुकला, पूरे देश में पुलिस बलों के लिए श्रेष्ठ प्रथाएं और आई.टी. उत्पादों के विकास का नेतृत्व एवं समन्वय करना और पुलिस संगठनों के लिए आई.टी. समाधानों का राष्ट्रीय रिसोर्स केन्द्र स्थापित करना।

## 20-10 ckèk i`'uk ds mÙkj

### Ckkèk iz'u 1

1. जबकि सभी प्रकार की हिंसा का परिणाम अथवा संभावित परिणाम शारीरिक, यौन या मनोवैज्ञानिक क्षति का होता है, जेंडर आधारित हिंसा (जी.बी.वी.) उस हिंसा का संकेत करती है जो व्यक्तियों या व्यक्तियों के समूहों को उनके लिंग के आधार पर लक्ष्य करती हैं।

2. जी.बी.वी. महिलाओं के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य और साथ ही उनकी गरिमा, सुरक्षा, लैंगिकता (sexuality), प्रजनन क्षमता और अपने खुद की देह पर नियंत्रण के उनके अधिकार (स्वायत्ता) को प्रभावित करता है।

3. जेंडर आधारित हिंसा समाज में विद्यमान पुरुषों और महिलाओं के बीच सत्ता की असमानता के कारण पैदा होती है, जो समाजार्थिक, सांस्कृतिक तथा संरचनात्मक असमानताओं के द्वारा आगे और बढ़ जाती है। महिलाओं की अधीनस्थ प्रस्थिति में निहित, यह पितृसत्ता की संस्था तथा पुरुषत्व की अवधारणा दोनों से जुड़ी है।

4. जी.बी.वी. के कुछ रूप स्त्री जननांग विकृति, ''प्रतिष्ठा'' वध, घरेलु हिंसा, लिंग चयन, आदिवासियों के विरुद्ध हिंसा, स्त्रियों का अवैध व्यापार और साम्प्रदायिक हिंसा, जाति आधारित हिंसा और सशस्त्र संघर्ष की स्थितियों में हिंसा को समाविष्ट करते हैं।

### Ckkèk iz'u 2

1. दलित स्त्रियों को विशेष सामाजिक वर्ग समझा जाता है क्योंकि उनपर जेंडर, जाति एवं वर्ग पहचानों सभी का भार रहता है।

2. भंवरी देवी साथिन कार्यकर्ता थी– राजस्थान सरकार के महिला विकास कार्यक्रम की कार्यकर्ता थी। उसने गाँव वालों को बाल विवाह की बुराइयों के बारे में शिक्षित किया। उसका अनुभव बताता है कि किस प्रकार निम्न जाति की महिलाएं प्रभुत्वशाली समुदायों के सदस्यों द्वारा जेंडर आधारित हिंसा के प्रति है, अपराधियों को न्यायालयों में जवाबदेय ठहराने में कठिनाइयों, तथा सरकार की परियोजनाओं में काम कर रही महिलाओं को सुरक्षा प्रदान करने में अपना दायित्व पूरा करने में उसकी असफलता के प्रति महिलाएं संवेदनशील दुर्बलक्षम होती हैं।

3. ''निम्न जाति'' के परिवार के चार सदस्यों की खैरलांजी में हत्या कर दी गई थी, क्योंकि उन्होंने प्रभुत्वशाली समुदाय के सदस्यों द्वारा उनकी कृषि भूमि पर कब्जा करने का विरोध किया था। यह जी.बी.वी. का उदाहरण है क्योंकि नग्न कर देने और नंगा परेड करवाने, और उनकी हत्या करने से पहले जनता के सामने उनका बलात्कार करने समेत विशिष्ट बर्बरताओं का लक्ष्य स्त्रियों को बनाया गया था।

### Ckkèk iz'u 3

1. अपराधियों पर मुकदमा चलाने में राजनीतिक इच्छाशक्ति का अभाव, जन अपराधों के साथ निबटने के लिए कानूनों तथा कार्यविधियों की अपर्याप्तता, निश्पक्ष जांच पड़ताल और ऐसे अपराधों पर मुकदमा चलाने का अभाव और पीड़िताओं के अनुभवों और जरूरतों के प्रति संवेदनशीलता का अभाव इत्यादि साम्प्रदायिक हिंसा के संदर्भों में महिलाओं की न्याय गम्यता के रास्ते में बड़ी रुकावटें हैं।

2. बिल के विरुद्ध एक बड़ी आलोचना यह है कि यह साम्प्रदायिक संदर्भों में महिलाओं के विरुद्ध यौन एवं जेंडर आधारित हिंसा को अदृश्य बना देता है, और यह साम्प्रदायिक हिंसा के संदर्भ में न्याय की दुर्बल गम्यता में योगदान देने वाले मुख्य अवरोधों को स्वीकार करने, उन्हें संबोधित करने तथा उनका उपचार करने में असफल रहा है। इसने जेंडर आधारित हिंसा को सामान्य तौर पर, और यौन हिंसा को विशेष तौर पर रूखे तथा अनमने ढंग से विचार किया है और यह सब इस बात के बावजूद कि जेंडर आधारित हिंसा ने हाल ही में धार्मिक अल्पसंख्यकों के विरुद्ध घृणा तथा विनाश जुटाने में इंजिन के रूप में मूलभूत भूमिका अदा की है।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

### Ckkèk i'u 4

1. श्रीलंका, बांग्लादेश, नेपाल, अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बर्मा, भारत और कुछ दक्षिण एशियाई देश हैं जिन्होंने सशस्त्र संघर्ष की स्थितियों में जेंडर आधारित हिंसा का सामना किया है।

2. इरोम शर्मिला कवियत्री है, जिसकी अनिश्चितकालीन भूख हड़ताल अपने दसवें वर्ष में आ गई है। उसने सशस्त्र बल (विशेष शक्तियाँ) अधिनियम को रद्द करने की मांग की है ये – क्रूर कानून है, जो राजकीय एजेंसियों को बेरोक शक्तियाँ, प्रदान करता है, यहाँ तक कि मात्र संदेह पर गोली चलाने का अधिकार भी दिया गया है, जिसका प्रायः निर्दोश नागरिकों के विरुद्ध दुरुपयोग किया जाता है।

## 20-11 mi;kxh iLrd

1. अनुराधा चेनॉय, वूमेन एण्ड मिलिटेरिज़्म इन साऊथ एशिया (2002), नई दिल्ली : काली फॉर वूमेन

2. फलेविया एग्नेस (सं.) (2002), ऑफ लॉफ्टी क्लेम्स एंड मफ्फड वॉयसिस, मुम्बई : मज लिस।

3. इंटरनेशनल इनिषिएटिव फॉर जस्टिस इन गुजरात (2003), थ्रेटेन्ड एक्सिस्टेंस : ए फैमीनिस्ट एनालिसिस ऑफ दी जेनोसाइड इन गुजरात, मुम्बई : सिटिजेन्स' इनिषिएटिव

4. कल्पना कन्नाबिरन एवं ऋतु मैनन (2007) 'फ्रोम मथुरा टू मनोरमा : रसिस्टिंग वॉयलेंस अगेंस्ट वूमेन इन इंडिया', न्यू दिल्ली : वूमेन अनलिमिटेड

5. मनोज मिता एवं एच.एस. फूलका (2007), वेन ए ट्री शूक दिल्ली : दी 1984 कारनेज एंड इट्स आफ्टरमेथ, नई दिल्ली : दी लोटस कलक्शन

6. रॉशमी गोस्वामी, एम जी श्रीकला एवं मेघना गोस्वामी (2005), वूमेन इन आर्म्ड कॉफ्लिक्ट सिचुऐशन्स, गोवहाटी : नोर्थ इस्ट नेटवर्क

7. सिद्धार्थ वरदराजन (सं.) (2002), 'गुजरात : दी मेकिंग ऑफ ट्रेजडी', नई दिल्ली : पेन्गुइन बुक्स इंडिया

8. उर्वषी बुटालिया (सं.) (2002), 'स्पीकिंग पीसः वूमेन'स वॉयसिस फ्रोम काश्मीर', नई दिल्ली : काली फॉर वूमेन

9. वृन्दा ग्रोवर (सं.), सौम्य उमा (2010), कंधामल : दी लॉ मस्ट चेंज इट्स कोर्स', नई दिल्ली : मल्टिपल एक्शन रिसर्च ग्रुप

10. बरखा दत्त, 'वूमेन'स पैनल, पीयूसीएल वदोदरा एंड शांति अभियान', नथिंग न्यू'? वूमेन एज़ विक्टिमस इन सिद्धार्थ वरदराजन (सं.) (2002), गुजरात : दी मेकिंग ऑफ ट्रैजडी, नई दिल्ली : पेन्गुइन बुक्स इंडिया, पृष्ठ 214–245

11. प्रेम चौधरी, एनफोर्सिंग कल्चरल कोड्स : जेंडर एंड वॉयलेंस इन नोर्थन इंडिया' इन मेरी इ जॉन एवं जानकी नायर (सं.)(1998), ए क्वष्चन ऑफ साइलेंस? : दी सैक्सुएल इकोनोमीस ऑफ मॉडर्न इंडिया, नई दिल्ली : काली फॉर वूमेन, पृ. 332–367

12. रॉश्मी गोस्वामी, एम.जी. श्री कला व मेघना गोस्वामी (2005), वूमेन इन आर्म्ड कॉफ्लिक्ट सिचुऐशन्स, गोहाटी : नोर्थ इस्ट नेटवर्क

13. ऋतु मैनन एवं कमला भसीन, 'रिकवरी, रप्चर, रस्स्टिेंस : दी इंडियन स्टेट एंड दी एब्डक्शन ऑफ वूमेन डयुरिंग दी पार्टीशन इन मुषिरल हसन (सं.)(2000), इनवेंटिग बाउंड्रीस : जेंडर, पोलिटिक्स एंड दी पार्टीशन ऑफ इंडिया, नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, पृष्ठ 208–235

14. शिब शंकर चैटर्जी, 'डार्क स्पेल ऑफ विच–हंटिंग', 8 नवम्बर, 2009, उपलब्ध है http://newsblaze.com/story/20091108150914shan.nb/topstory.html

15. स्वाति सक्सेना, 'रिकोर्स रेअर फॉर विच हंट विक्टिम्स इन इंडिया, 16 जुलाई 2007, उपलब्ध है, http://www.womensenews.org/article.cfm?aid=3241 एक्सेस किया 8 फरवरी 2010 को।

16. उर्वषी बुटलिया, 'कम्युनिटी, स्टेट एंड जेंडर : सम रिफलेक्शन्स ऑन दी पार्टीशन इन इंडिया', इन मशरुल हसन (सं.) (2000), इन्वेंटिंग बाउंड्रीस : जेंडर, पोलिटिक्स एंड दी पार्टीशन ऑफ इंडिया, नई दिल्ली : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, पृष्ठ 178–207

## fjiksV~l rFkk LVsVesaV~l

17. दी इंटरनेशनल सेंटर फॉर रिसर्च ऑन वूमेन (2002), मेन, मैस्कुलिनिटी एंड डोमेस्टिक वॉयलेंस इन इंडिया – ए समरी रिपोर्ट ऑफ फोर स्ट्डीस

18. कमेटी अगेंस्ट वॉयलेंस ऑन वूमेन (2006), साल्वा जुडुम जादू एंड वायॅलेंस अगेंस्ट वूमेन इन दांतेवाड़ा, छत्तीसगढ़, रिपोर्ट ऑफ ए फैक्ट फाइंडिंग, द्वारा ऑल इंडिया वूमेन्स फैक्ट–फाइंडिंग टीम की रिपोर्ट, उपलब्ध है http://cpjc.files.wordpress.com/2007/07/cavow-sj-ff-report.pdf (2 नवम्बर 2009 को एक्सेस किया गया)

19. एमनेस्टी इंटरनेशनल, इंडिया : गवर्नमेंट ऑफ मणिपुर मस्ट रिलीज़ इरोम शर्मिला चानू, एएसए 20/003/2010, 29 जनवरी 2010

20. इंडिपेडेंट वूमेन'स इनिषिएटिव फॉर जस्टिस, शोपिएन : मैनफैकचरिंग ए सूटेबल स्टोरी, 14 नवम्बर 2009, उपलब्ध है : http://www.kashmirtimes.com/shopian-report.pdf, पर, 15 जून 2010 को एक्सेस किया गया।

21. हयूमेन राइट्स वॉच, वी हैव नो ऑडर्स टू सेव यू : स्टेट पार्टिसिपेशन एंड कॉम्पलीसिटी इन कम्यूनल वॉयलेंस इन गुजरात, 30 अप्रैल 2002

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

## vU;

1. हीसे, एलिसबर्ग, एवं गोटेमाएलर 1999, उद्धत है : यू एन मिलिनियम प्रोजेक्ट 2005
2. क्रग, इ एवं अन्य (सं.) (2002) वर्ल्ड रिपोर्ट ऑन वॉयलेंस एंड हैल्थ, जेनीवा : डब्ल्यू एचओ।
3. यू.एन. मिलिनिअम प्रोजेक्ट, 2005ए, टेकिंग एक्शन : अचीविंग जेंडर इक्वीलिटी एंड एमपावरिंग वूमेन जेंडर इक्वलिटी पर टास्क फोर्स, लंदन एंड स्टर्लिंग, वरजीनिया : अर्थस्कैन
4. हीस, एल.एम.एल्सबर्ग, एवं एम. गोटमोएलर, 1999, ''एडिंग वॉयलेंस अगेंस्ट वूमेन'', पोपुलेशन रिपोर्टस, सीरीस एल, न.11, बाल्टीमोर, मेरीलैंड : पोपुलेशन इनफोर्मेशन प्रोग्राम, जॉन्स होपकिन्स यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ पब्लिक हैल्थ
5. दी हिन्दु, 14 अक्टूबर 2005
6. वर्ल्ड हैल्थ ऑर्गनाइजेशन,

   http://www.who.int/reproductivehealth/topics/fgm/prevalence/en/index/html (14 अक्टूबर 2009 को एक्सेस किया गया)
7. यूनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेंट ऑफ स्टेट, 2005, ''ट्रैफिकिंग इन पर्सन्स रिपोर्ट : जून 2005 वाषिंगटन, डी.सी. : यूनाइटेड स्टेट्स डिपार्टमेंट ऑफ स्टेट
8. ''ए ह्यूमेन राइट्स एंड हैल्थ प्रीओरिटी'', यूनाइटेड नेशन्स पोपुलेशन फंड, http://www.unfpa.org/swp/2000/english/ch03.html. को निकाला गया।
9. राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा किया गया अध्ययन, http://ethicalcorp.com/content.asp?ContentID=6140&rss=ec-main.xml.
10. मनुस्मृति IX.25
11. 'छत्तीसगढ़ गवर्नमेंट डिफेंड्स जादूम', टाइम्स न्यूज़ नेटवर्क, 29 जनवरी 2008
12. ''वार इन दी हार्ट ऑफ इंडिया : एन इनक्वरी इन टू दी ग्राउंड सिचुऐशन इन दाँतेवाड़ा डिस्ट्रिक्अ, छत्तीसगढ़', इंडीपैंडेट सिटिजेन्स इनिषिएटिव, 20 जुलाई 2006
13. जीवन रेड्डी कमेटी की पूरी रिपोर्ट जिसने AFSAS की समीक्षा की उपलब्ध है http://www.hinduonnet.com/nic/afa/ पर, 27 फरवरी 2008 को प्राप्त की गई।
14. सिद्धार्थ वरदराजन, डज़ एनीवन केयर अबाउट मणिपुर,,दी हिन्दू,, 10 अक्टूबर 2006, जिसमें उन्होंने न्यायाधीश जीवन रेड्डी कमेटी की रिपोर्ट के प्रकाश में ए एफएसपीए पर सार्वजनिक बहस के लिए बलपूर्वक तर्क दिया है।
15. http://religionnewsblog.com उद्धृत है
16. 'इंडिया'स विच हंट लीव्स चिल्ड्रन ऑरफेन्ड', 21 मार्च 2007 में उपलब्ध है http://theasiannews.co.uk/community/heritage/s/524/524855 8 फरवरी 2010 को सक्सेस किया गया

17. स्वाति सक्सेना, 'रिकोर्स रेयर फॉर विच हंट विक्टिम्स इन इंडिया', 16 जुलाई 2007, उपलब्ध है : http://womensenews.org/article.cfm?aid=accessed पर, 8 फरवरी को 2010 को एक्सेस किया गया।

18. 'आदिवासीस एंड हरिजन वर्स्ट विकटिम्स ऑफ विच–हटिंग : सर्वे', 29 अक्टूबर 2006, उपलबध हैं http://news.oneindia.in/2006/10/29/adivasis-and0harijans-worst-victim-of-witchhunting-survey-1162125890.html, आदिवासी और हरिजन–वर्स्ट–विकटिम– ऑफ–विचहंटिंग–सर्वे– 1162125890 html पर 9 फरवरी, 2010 को एक्सेस किया गया।

19. षिब शंकर, चैटर्जी, 'डार्क स्पेल ऑफ विच–हंटिंग', 8 नवम्बर 2009, उपलब्ध है – http://newsblaze.com/story/20091108150914shan.nb/topstory.html. 8 फरवरी 2010 को एक्सेस किया गया।

---

## 20-12 ckèk iz'u ¼euu ,oa vH;kl gsrq½

1) जेंडर–आधारित हिंसा के भिन्न रूप तथा परिभाषा की व्याख्या करें।

2) क्या आप डायन तलाश से सहमत हैं? स्त्रियाँ क्यों यह करने के लिए विवश होती हैं? कुछ उदाहरणों के साथ अपने तर्कों को प्रमाणित करें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY